भूमिका

कोई ४-५ साल पहले अपना देश एक ऐसे छोर पर पहुंच गया,जहां देश की अर्थ-व्यवस्था कदम ताल कर रही थी, राजनैतिक ठहराव सारी लोकतंत्री व्यवस्था को वन्ध्या बना रहा था, सामाजिक जड़ता ने घुटन पैदा कर दी थी, नैतिकता ह्रासमान थी और सब मिलाकर एक ऐसी स्थिति बनी, जिसमें छोटे-मोटे सुधारों से अथवा टुकड़े-टुकडे मे होने वाले परिवर्तनों की पद्धति से आस्था समाप्त हो गई। समूची व्यवस्था में भयानक अंतर्विरोध थे। ये अंतर्विरोध नारों और नीतियों मे थे, यह खाई करनी और कथनी में थी। इसकी अनुभूति घोषित लक्ष्यों और उनकी उपलब्धियों को देखकर होती थी। इन्हें व्यवस्था के प्रत्येक फलक पर आम आदमी देख रहा था। यही स्थिति संपूर्ण क्रांति की जन्मभूमि थी। आमूल-चूल परिवर्तन की यही कामना, जयप्रकाश नारायण की सपूर्ण क्राति का बीज था। स्वाभाविक रूप से जैसे-जैसे समग्र क्रांति ने जोर पकड़ना चालू किया, यथास्थितिवादी व्यवस्था के पहरेदारों की परेशानी बढी।

जब सपूर्ण क्रांति का रथ जून, १९७५ की घटनाओं के कारण जड़ता के दुर्जेय गढो पर निर्णायक प्रहार करने को उद्यत हुआ, तब श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आपातकाल का सहारा लिया। व्यापक परिवर्तन के लिए बढा महत्त्वाकांक्षी रथ पुलिस राज लागू करके रोक दिया गया। अब लड़ाई का तात्कालिक मुद्दा लोकतन्त्र की रक्षा बन गया। आपातस्थिति के २० महीनों की पूरी लड़ाई तानाशाही के खिलाफ लड़ी गई।

ऐसी स्थिति मे जब व्यापक पैमाने पर विरोधी नेताओं की गिरफ्तारी हुई, प्रेस पर सेंसर थोप दिया गया, विरोध और आलोचना पर ज़बानबदी लागू हुई, न्यायालयों को पंगु बना दिया गया, पारिवारिक तानाशाही पूरे जोम पर हो आई, तब सतही समर्थन के ढोंगी नगाड़ों का स्वर गूंजने लगा। २० सूत्री का मौखिक पारायण अस्तित्व-रक्षा का आपद्धर्म बन गया।

लेकिन दूसरी ओर इस भीषण सन्नाटे में कुछ लोग ऐसे भी थे, जो तानाशाही से जूझ रहे थे, जेल और पुलिस-उत्पीड़न के खतरों को उठाकर

भी भूमिगत-साहित्य लिख रहे थे, छपा रहे थे और बांट रहे थे। भूमिगत कार्य को संगठित कर रहे थे। भूमिगत संचार-व्यवस्था का समानान्तर तंत्र चला रहे थे। छोटे-छोटे कमरों में छोटी-छोटी बैठकें कर रहे थे। सत्याग्रह कर रहे थे, जेलों को भर रहे थे। व्यापक और भीषण अंधेरे में भी मशाल लिए इन भूमिगत कार्यकर्त्ताओं की संख्या का महत्त्व नहीं है, महत्त्व है उनके साहस और अजेय विश्वास का।

शोषण के विरुद्ध और मानवी स्वतंत्रता के लिए किया गया संघर्ष, चाहे वह १८वीं शताब्दी के अत में हुई अमरीकी मुक्ति-संग्राम हो या फ्रांस की राज्यक्रांति, अथवा २०वीं शताब्दी के प्रारंभ मे हुई रूस की अक्तूबर-क्रांति अथवा कोई और—दमघोंट व्यवस्था के खिलाफ मुक्ति-संघर्ष मे क्रांतिकारियों के इसी साहस और अडिग विश्वास पर बहुत कुछ निर्भर करता है।

समग्र क्रांति की निष्ठा भी मूलत. ऐसी ही थी। जब आपातस्थिति लगाकर समग्र क्राति को जहां का तहां दबा देने की कोशिश की गई, तो विपक्ष की एकता, भूमिगत आंदोलन से बनी पृष्ठभूमि, लाखों लोगो की त्याग-तपस्या और सबसे बढ़कर मार्च, ७७ के आम चुनावों के दौरान भारतीय मत-दाताओं की सूझबूझ के कारण संपूर्ण क्रांति का पहला चरण पूरा हुआ। क्रांति का यह रथ तानाशाही को समाप्त करके, लोकतत्र को पटरी पर लाकर राज-नैतिक ठहराव समाप्त करने मात्र के लिए नही निकला है। क्राति का लक्ष्य राज्य-परिवर्तन मात्र नहीं है। इसका लक्ष्य है संपूर्ण क्रांति अर्थात् समतामय समाज-जीवन की स्थापना, आर्थिक शोषण और सामाजिक भेदभाव की समाप्ति, सुख और समृद्धिमय जनजीवन का निर्माण और लोकतंत्र की रक्षा की व्यवस्थागत अन्तर्रचना।

भूमिगत आंदोलन का व्यापक मानवीय संदर्भ में एक दूसरा महत्त्व भी है।

आपातस्थिति मे जो भूमिगत आंदोलन चला, उसकी तुलना अफ्रीकी देशों, वियतनाम या बोलिविया अथवा और कहीं के भूमिगत गोरिल्ला संघर्षों से नही की जा सकती। इसका सबसे बड़ा कारण है भारतीय भूमिगत आंदोलन का अहिंसक होना। जहां उक्त क्रातियों की दार्शनिक प्रेरणा कही न कहीं मार्क्स से जुड़ी थी, भारत के इस भूमिगत आंदोलन की दार्शनिक प्रेरणा गांधी और जयप्रकाश की थी।

एक अर्थ में यह गांधीवादी संघर्ष सत्याग्रह-असहयोग की तकनीक का

अगला विस्तार था, अहिंसक युद्ध-संघर्ष के नये आयाम का आविष्कार था। यह खून के हर कतरे के बारे में संवेदनशील भारत की सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप था। अहिंसक क्रांति होना इसकी नियति नही थी, बल्कि मानव-मात्र के लिए पाशविक संघर्ष से शिष्ट संघर्ष की ओर बढ़ने के प्रयोगसिद्ध विकल्प की खोज भी थी। झगड़ों को निपटाने के खूनी रास्तों के विकल्प की खोज आज विश्व-मानव की सबसे बड़ी चिंता का विषय है और होना चाहिए। भूमंडल से रक्तिम युद्धों का निर्वासन भारतीय चेतना की प्रबल चाह है।

इस अर्थ मे भारत के भूमिगत आंदोलन के परिणाम मानवीय गरिमा, लोकतंत्र की सफलता, साम्राज्यवाद के उन्मूलन, दासता और शोषण के नये-पुराने रूपों को पराजित करने की जद्दोजहद और समतामय विश्व-मानवता के विकास की दिशा में मील का नया पत्थर है।

पूरी कोशिशों के बावजूद सरकार बहुत-से भूमिगत नेताओं और कार्यकर्त्ताओं को पकड़ नहीं सकी। उनके नहीं पकड़े जाने की चिंता श्रीमती गांधी को सताती रही और किसी न किसी रूप में यह चिंता वे प्रकट भी करती रहीं। सिर्फ उनका गिरफ्तार न होना भूमिगत आंदोलन की एक बहुत बड़ी सफलता थी।

सेंसर और प्रचारतंत्र के एकाधिकार द्वारा श्रीमती गांधी जनता को विपक्ष से पूरी तरह काट देना चाहती थीं, लेकिन हुआ ठीक इसका उलटा। उनके प्रचार-तंत्र की विश्वसनीयता खत्म-सी हो गई। भूमिगत साहित्य ने विपक्ष से जनता को जोड़े रखा। इसके विपरीत श्रीमती गांधी जनता से बुरी तरह कट गई। जन-मानस की मन:स्थिति की इसी स्थिति से गैर-जानकार रहने के कारण श्रीमती गांधी चुनाव कराने का फैसला ले बैठीं और जब उन्होंने जन-मानस का बदला हुआ रूप देखा, तब तक देर हो चुकी थी। बहुत हद तक इसका श्रेय भूमिगत प्रचार-तंत्र को है।

भूमिगत प्रचार-तंत्र का एक विस्तार विदेशों में था। इसीके कारण सरकार का तानाशाही चरित्र विदेशों में छिप नहीं सका। विदेशों में रहने वाले लाखों भारतीयों, विदेशी बुद्धिजीवियों और सोशलिस्ट इण्टरनेशनल के नेताओं, जिन्होंने तानाशाही के विरुद्ध हमारे संघर्ष का नैतिक समर्थन किया, हम उनके आभारी है। इस संघर्ष मे विदेशों में हुए प्रचार-अभियान का, विशेष रूप से सर्वश्री सुब्रह्मण्यन स्वामी, लैला फर्नाडीज़, राम जेठमलानी,

सी० आर० ईरानी, केदारनाथ साहनी, मकरन्द देसाई, आदि का—योगदान विशेष रूप से स्मरणीय है।

भूमिगत आंदोलन का संचालन लोक-संघर्ष समिति ने किया। इसमे मुख्य रूप से सर्वोदय, संगठन कांग्रेस, जनसघ, लोकदल और सोशलिस्ट पार्टी के भूमिगत नेता और कार्यकर्त्ता थे, परन्तु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के देशव्यापी सगठन और भरपूर सहयोग के बिना भूमिगत आंदोलन कदाचित् इतना प्रभावी नही हो पाता।

जिन परिवारों ने भूमिगत कार्यकर्त्ताओं को आश्रय दिया, जिन्होने भूमिगत संगठन-तंत्र, प्रचार-व्यवस्था, संचार-तंत्र और साधन उपलब्ध कराने आदि में सहयोग दिया, अर्थात् जिन्होने बिना भूमिगत हुए भूमिगत गतिविधियों मे हिस्सा लिया, वे भी गौरव के अधिकारी है।

बहुत-से लेखक इस विषय पर लिख सकते है, लेकिन भूमिगत आंदोलन में सक्रिय हिस्सेदारी बहुत कम लेखकों की रही होगी। भूमिगत आदोलन मे हजारों लोगों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है, पर उनमे लेखक बहुत कम है। इस दृष्टि से देखा जाए तो श्री दीनानाथ मिश्र जैसे लेखको पर इस सपूर्ण क्रांति के साहित्य के निर्माण की विशेष जिम्मेदारी है। मुझे प्रसन्नता है कि उन्होने इस दिशा में कदम बढाया है। विगत दस वर्षो से मै श्री दीनानाथ मिश्र को गंभीर राजनैतिक समीक्षक के रूप मे करीब से जानता हूं। इस पूरे सघर्ष से संबंधित अधिक महत्त्वपूर्ण साहित्य की उनसे अपेक्षा है।

२४-५-७७

अटल बिहारी वाजपेयी

क्रम

आपातकाल में

गुप्त क्रांति

सिद्धान्त : रणनीति और संगठन

कोई भी क्रांति न तो शून्य अथवा हवा में पैदा होती है और न ही सुविचारित पद्धति से। बड़े से बड़ा क्रांतिकारी विचारक कुछ आधारभूत शर्तों के पूरा हुए बिना अपने इंची-टेप से नाप-नापकर क्रांति नहीं कर सकता।

छोटी या बड़ी, हिंसक या अहिंसक, राजनैतिक या सामाजिक किसी भी तरह के क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए दो तरह के तत्त्व आवश्यक होते है। एक तो प्राप्त स्थिति के अन्तर्विरोध, जो क्रान्ति की जन्मभूमि तैयार करते हैं और दूसरे, तात्कालिक तत्त्व, जिनका उपयोग करके क्रान्तिकारी नेता अन्तर्विरोधों में विस्फोट कर देता है।

इसी दूसरे से रणनीति का ताल्लुक होता है। रणनीति का अर्थ है, क्रांतिकारी कार्यकर्ताओं की कुशलता, क्षमता, निष्ठा और साधनों के भरपूर उपयोग करने की वह कार्य-प्रणाली, जो प्राप्त अन्तर्विरोधपूर्ण स्थिति में उबाल पैदा कर दे।

अन्तर्विरोधपूर्ण स्थिति

भारत मे प्राप्त परिस्थितियों में काफी अन्तर्विरोध थे। इनके चरित्र को कुछ विस्तार से देखा जा सकता है।

राजनैतिक—(१) रात-दिन लोकतंत्र का नाम जपने वाली प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी दल, सरकार, परम्पराओं मे से लोकतंत्र को निचोड़कर फेंक रही थीं। (२) देश के राजनैतिक जीवन में सन् '६९ के राष्ट्रपति के चुनाव से लेकर मारुति काण्ड तक—दलीय, राजनैतिक व आर्थिक—हर प्रकार के अनुशासन को भंग करने वाली प्रधानमंत्री अनुशासन का नगाड़ा पीट रही थी। (३) गुट-निरपेक्षता के मंत्रोच्चारण के साथ भारत को 'रूस

का पुच्छल देश' बनाया जा रहा था। (४) साम्प्रदायिकता से कदम-कदम पर समझौता करते हुए धर्म-निरपेक्षता की दुहाई वर्षों से दी जा रही थी। (५) भ्रष्टाचार को मिटाने की नारेबाज़ी और ललितनारायण मिश्र, बंसीलाल, नागरवाला आदि काण्डों को दबाने की प्रक्रिया साथ-साथ चल रही थी। (६) एक तरफ अधिकाधिक राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने की होड़ थी और दूसरी तरफ आम जनता में राजनीति के प्रति बढती हुई नफरत थी। (७) जनसेवा के नारे की पृष्ठभूमि में जन-शोषण की प्रक्रिया सरकारी ढोंग को उजागर कर रही थी।

आर्थिक—हम देख रहे थे, गरीबी और गरीब दोनों बढ रहे हैं, और सुन रहे थे विकास के दावे और आंकड़े। हम देख रहे थे कि टाटा, बिड़ला, मफतलाल, मोदी दनादन बढ़ रहे है और सुन रहे थे, समाजवाद के तराने। हम समझ रहे थे कि आर्थिक गतिविधियां कोल्हू के बैल की तरह परिक्रमा कर रही है और हमें विश्वास दिलाया जा रहा था कि आर्थिक विकास का सफर मीलों तय कर चुके हैं। पांचवीं योजना पांच वर्ष विलम्बित थी और आंकड़ों का प्रचार यों हो रहा था, मानो यह योजना ज़बरदस्त गति से चल रही हो।

उत्पादन के धोखेबाज़ आंकड़ों का बोलबाला था, पर बेरोज़गारी और महंगाई के आंकड़े 'भूमिगत' थे। साक्षरता का प्रतिशत बढ़ रहा था, पर निरक्षरों की तादाद करोड़ों में बढ रही थी। भुखमरी रेखा के नीचे की आबादी ज्यों की त्यों थी और दरिद्रता के दुर्गों पर सरकारी हमलों का नाटक ज़ोर-शोर से चल रहा था। कालाबाजारियों और तस्करों के राजनैतिक दलाल उनके नुमायशी उन्मूलन का ढिंढोरा पीट रहे थे।

सामाजिक—सामाजिक मूल्यों में गिरावट और आदर्शों की लफ्फाज़ी की खाई का बढना; स्थापित संस्थाओं, व्यवस्थाओं और आचारों में प्रदूषण और विकल्प ढूंढने के ढोंगी और नपुंसक इरादों का इजहार; नीचे से ऊपर उठाने की पुकार, लेकिन नीचे वालों को लात से नीचे दबाए रखने की कोशिश; जातिवाद की समूची कठशक्ति से भर्त्सना और राजनैतिक सिंचाई से उसे हरा-भरा व स्वस्थ बनाए रखने की अन्तर्निर्मित व्यवस्था; पालतू बुद्धिजीवियों का वर्चस्व और बौद्धिक चुनौती पर लगाम; बिखराव व असन्तुलन से सामाजिक सन्तुलन बनाने की तरकीबें—ये सामाजिक तस्वीर क्रांति की उपजाऊ जन्मभूमि हो सकती थी।

जयप्रकाश का लोकनायकत्व और जे० पी० आन्दोलन इसी पृष्ठभूमि की

पैदावार है। लोग जयप्रकाश की बन्द मुट्ठी में वैकल्पिक व्यवस्था देख रहे थे। समग्र क्रांति के उनके सांकेतिक प्रयोग, चाहे वे जनता सरकार के हों अथवा 'विधानसभा भंग करो' के, चाहे वे जनेऊ तोड़ने की अपील के हों अथवा संसद पर प्रदर्शन के, चाहे वे विपक्षी दलों के विलय की कोशिश हो अथवा गांव-गांव में जनसंघर्ष समितियों के गठन के—सब मिलकर सत्ता और सम्पूर्ण व्यवस्था (या अव्यवस्था) के लिए सम्पूर्ण चुनौती थे। देश ने सम्पूर्ण क्रांति को मानसिक तौर पर कुबूल किया। इसकी यह मानसिक विश्वसनीयता सत्ता से अलिप्त रहने की जयप्रकाशजी की निजी कमाई थी। राजनैतिक दलों और छात्रों ने खून-पसीना दिया होगा, लेकिन इसमें आत्मा जयप्रकाशजी की थी।

जब इस क्रांति का रथ अपनी प्राथमिक यात्रा पर निकला तो सत्ता घबरा गई, क्योंकि जानी-मानी मौजूदा तकनीक से श्रीमती इन्दिरा गांधी अपनी गद्दी पर बहुत समय तक काबिज नही रह सकती थी। उन्होने इस क्रांति के गर्भपात की योजना बनाई। भ्रूण-हत्या के इस प्रयास को आपातस्थिति का नाम मिला।

आपातस्थिति की पृष्ठभूमि का एक और पहलू भी है। वह है, कुछ तत्कालिक घटनाएं। ये घटनाएं इस पूरी राजनैतिक प्रक्रिया का ही एक भाग है।

तात्कालिक उत्प्रेरक

जब तक लोकतन्त्र श्रीमती इन्दिरा गाधी को गद्दी पर बनाए रख सका, तब तक श्रीमती गाधी ने लोकतन्त्र को बनाए रखा। जिस दिन लोकतंत्र उन्हें प्रधानमन्त्री बनाए रखने मे नाकामयाब होने लगा, श्रीमती गाधी ने लोकतन्त्र को नाकामयाब कर दिया।

१२ जून, १९७५ को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले मे उन्हे चुनाव में भ्रष्ट आचरण करने का अपराधी माना गया और ६ वर्षो के लिए चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य करार दिया गया। पहली बार सत्ता से सत्ता अर्जित करने और उसे टिकाए रखने की उनकी राजनीति पर निर्णायक प्रहार न्यायपालिका ने किया और सत्ता मे बने रहने का उनका न्यायिक अधिकार समाप्त हो गया। इस प्रमाणित चुनावी भ्रष्टाचार ने १९७१ के बहुप्रचारित लोक-निर्णय के खोखलेपन को ज़ाहिर किया और भ्रष्ट तरीकों से जीते गए चुनाव का लोक-निर्णय कितना सही लोक-निर्णय था, इसपर सवालिया निशान लगा दिया।

इधर ठीक उसी दिन गुजरात में हुए चुनावों के घोषित परिणामों ने कांग्रेस के खिलाफ और जनता मोर्चा के पक्ष में लोक-निर्णय दिया। एक तरह से न्यायपालिका और जनता दोनों ने एक-दूसरे के निर्णय की पुष्टि की। श्रीमती गांधी का सत्ता में बने रहने का कानूनी और लोकतंत्री अधिकार समाप्त हो गया। फिर भारतीय जनसंघ, लोकदल, संगठन कांग्रेस और सोशलिस्ट पार्टियों का एका, जो गुजरात चुनाव में प्रकट हुआ, आगे बढ़ा और चारों दलों की कार्यसमितियों की सम्मिलित बैठक ध्रुवीकरण के इतिहास में पहली बार हुई। लगभग समान विचार वाले कांग्रेस-विरोधी दलों को एक दूसरे के विरुद्ध लड़ाए रखने की श्रीमती गांधी की राजनीति को इससे एक करारा झटका लगा।

इधर प्रशासन के धरातल पर श्रीमती गांधी की विफलताएं लोकनायक जयप्रकाश नारायण के आन्दोलन के दौर में काफी उजागर हो चुकी थीं। जैसा कि पहले कहा गया है, विकास-गति शून्य को छू रही थी। पांचवीं योजना का गर्भपात हो चुका था। बेरोज़गारी बेकाबू हो गई थी। विषमताएं बढी थीं। बड़े पूंजीपति घराने बेरोकटोक बढ़ रहे थे। कीमतें आसमान छू रही थीं। मारुति, नागरवाला, लाइसेंस स्केण्डल, बंसीलाल और ललित नारायण मिश्र के भ्रष्टाचार के काण्ड जन-आक्रोश के कारण बन गए थे। 'गरीबी हटाओ' के नारे को लेने के देने पड़ गए।

इस सारी स्थिति में श्रीमती गांधी को सत्ता में बनाए रख सकती थी, तो सिर्फ एक शक्ति—पुलिस। श्रीमती गांधी ने पुलिस राज का ही फैसला किया। आन्तरिक आपातस्थिति लगाने का फैसला बिना मंत्रिमण्डल से सलाह किए लिया गया।

चौधरी बंसीलाल जिस अघोषित इमर्जेन्सी का सफल प्रयोग हरियाणा में वर्षों से कर रहे थे, उसे औपचारिक रूप से सारे देश में बढ़-बढ़कर लागू किया गया। पहले ही दिन लोकनायक जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, चौधरी चरणसिंह, अटलबिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी, मधु लिमये, राजनारायण जैसे बहुत-से नेता गिरफ्तार कर लिए गए। अखबारों पर सेंसर लागू कर दिया गया। इनकी गिरफ्तारी की खबर तक नहीं दी गई। पहले हफ्ते में कोई २५,००० गिरफ्तारियां हो गईं।

महाआतंक का राज्य चालू हुआ। भारत के नागरिकों ने इसका अनुभव पहली बार किया। देखा कि शक्तिशाली और लोकप्रिय नेता कितने 'कमज़ोर'

साबित हुए। देखाकि इतनी बड़ी घटना के बावजूद छुटपुट घटनाओं के अलावा कहीं बगावत जैसी कोई बड़ी बात नहीं हुई। सारा मुल्क इस आतंक और दहशत मे चुप-सा हो गया। दमनकारी पुलिस-कार्रवाई सिलसिलेवार ढंग से चलती गई।

हिटलर और स्टालिन के परीक्षित तरीकों से दमन से अमन कायम करने के जटिल राजनैतिक प्रयोग की शुरुआत थी यह। श्रीमती गांधी ने शेर पर सवारी करने का खतरनाक निर्णय लिया था। शेर की सवारी, कि जिसपर से उतरना अपनी मौत को आमंत्रण देना होता है। उतरना आसान नहीं था। जैसे ही उतरी, वही हुआ, जो शेर की सवारी का नतीजा हुआ करता है। जब तानाशाही सच्चाई होती है, तो बगावत राजनैतिक धर्म होता है। यह बगावत खुलेआम नहीं हो सकती थी। इसलिए वह भूमिगत हो गई। भूमिगत बगावत क्रमश· अन्दर ही अन्दर ज्वालामुखी की तरह उबलने लगी। यह पुस्तक उसी विशाल भूमिगत बगावत का एक अल्पाशिक वर्णन है।

दिशा

इस भूमिगत क्रांति का प्राथमिक और तात्कालिक लक्ष्य था तानाशाही से मुक्ति। इसकी मूल प्रेरणा मुक्तिवादी थी, लेकिन बड़ा ज़बरदस्त अन्तर था १९४२ या कुछ अन्य देशों की संघर्षशील जनता के तरीकों से। तानाशाह विदेशी नहीं था। उसने लोकतंत्र का भ्रमोत्पादक तानाबाना बना रखा था। श्रीमती गांधी ने लोकतंत्र का सार निकाला था, पर लोकतंत्री संस्थाओं के प्राणहीन ढांचों से उनका मोह था। संसद थी और उसकी बैठकें होती थीं, पर विरोधी नेता और सांसद जेलों में थे। विरोधी दल थे. पर उनको कार्य नहीं करने दिया जा रहा था। कार्यकर्ता बन्दी थे, पर नेताओं में कुछ अपेक्षया कम-प्रभावी नेताओं को बराए नाम छोड़ रखा गया था। संविधान था, पर सशोधनों से उसे पंगु बना दिया गया था। सर्वोच्च न्यायालय और बाकी के न्यायालय थे, पर न्यायाधीशों को जकड़ने की पूरी नाकेबन्दी संविधान, कार्य-पालिका व राजनैतिक तल पर की गई थी। अखबार थे, पर सेंसर था और एकतरफा खबरों का साम्राज्य था। देश के सामूहिक दिमाग की धुलाई-रंगाई का एक बेहद जटिल कार्यक्रम चल रहा था। ऐसे समय में मुक्तिवादी संघर्ष-कर्ताओं के सामने भावनाप्रधान आदर्शवाद की एक व्यापक अपील तो थी, किन्तु समाज मे अनेक तहों पर राजनैतिक अवरोधक कार्यरत थे। मुक्तिकामी

मूल्य प्रेरक तो थे, पर जनसाधारण की भावनाओं को झंकृत नहीं कर पाते थे, क्योंकि जिन स्तरों पर तानाशाही प्रहार उत्पीड़क था, वह आम जनता का स्तर नही था।

लेकिन तानाशाही के नसबन्दी-अभियान ने आम जनता को तानाशाही की की अनुभूति दी। भले ही वे तानाशाही की व्याख्या न कर सकते हों, लेकिन अनुभूति के धरातल पर, तानाशाही निर्विवाद रूप से प्रमाणित हो गई थी। वह किसी अकादमिक पुष्टि की मोहताज नहीं थी। राजनैतिक धरातल पर संजय गाधी ने पारिवारिक तानाशाही को उजागर किया और भूमिगत कार्य-कर्ताओं को तानाशाही का एक प्रहार-बिन्दु मिला। आदर्शवादी विरोध को वाहन मिला। यह मुक्तिवादी लक्ष्य स्थूलतः नकारात्मक तत्त्व नज़र आ सकता है, लेकिन लोकतंत्र की लड़ाई किसी भी नाम से मूलत. विधायक व रचनात्मक ही होती है, और थी। यही आदर्शवादी लक्ष्य सम्पूर्ण संघटन का विधायक सूत्र था। यही तरह-तरह के तत्त्वों को एकसाथ बांधता था। मतभेदों को विलीन करता था और 'ऐक्शन प्रोग्राम' को पीछे से धक्का देकर संघर्ष को आगे बढाता था।

लोकशाही को पटरी पर लाना या तानाशाही का विरोध करना अपने में एक तैयारशुदा लक्ष्य था। यह कहीं से कृत्रिम मांग नही थी। यह आम आकाक्षा थी। यही कारण था कि भूमिगत संघर्ष ने बिना किसी दार्शनिक प्रशिक्षण के एक दिशा ग्रहण कर ली। इस दिशा की निम्न प्रमुख रश्मियां थीं।

(क) श्रीमती गांधी के तानाशाही शासन की कथनी और करनी के बीच की खाई को नंगा करना, ताकि तानाशाह का चरित्र जनसमाज समझ सके।

(ख) यह भूमिगत आन्दोलन शासकों के नैतिक और सैद्धांतिक मनोबल को अपनी चोटों से गिरा रहा था और तानाशाह और उनके समर्थकों की आवाज़ में से नैतिक दम को समाप्त कर रहा था।

(ग) यह आदर्शवादी लक्ष्य भूमिगत कार्यकर्ताओं के तमाम कार्यो को जनता की नजरो मे नैतिक, कानूनी और राजनैतिक धरातल पर देश-विदेश में न्यायोचित प्रतिपादित कर रहा था। उनकी तमाम मार्गों को गरिमा प्रदान कर रहा था।

(घ) यह लक्ष्य संघर्षकर्ताओं में एकता, सामूहिकता और एकरसता का संचार कर रहा था।

(ङ) यह लक्ष्य कार्यकर्ताओं और आम जनता को कष्ट सहने, बड़े से बड़ा बलिदान करने का उत्साह पैदा करता रहा।

(च) यह मुक्तिकामी लक्ष्य अपने-आपमें जनता के सामने जाने का एक शक्तिशाली उपकरण और कवच था। जनता ने भूमिगत आन्दोलन और कार्यकर्ताओं का जो साथ दिया, उसके पीछे लोकतंत्र की व्यापक निष्ठाओं की प्रेरणा थी। जनता ने संघर्ष के इतिहास में जो बल उत्साहपूर्वक संचारित किया, उसका श्रेय लोकतंत्र की अपनी आन्तरिक आत्मशक्ति को है।

आमना-सामना

भारत में हुई इस भूमिगत बगावत का चरित्र दुनिया की दूसरी बगावतों से पूरी तरह जुदा है। सामान्यतया भूमिगत क्रांतिकारी सत्ता की किलेबन्दी पर हिंसक चोट करते है। भारत की भूमिगत गतिविधियां अहिंसा का ब्रह्मचर्य व्रत लिए चलती रहीं। आमतौर पर भूमिगत क्रान्तिकारी संख्या-बल में बहुत कम होते हैं और क्रमशः उनका समर्थन बढ़ता है। यहां सत्ता जनता से बुरी तरह कटी थी, और आम जनता मानसिक रूप से भूमिगत बगावतियों से समानुभूति का अनुभव करती थी। प्रायः भूमिगत आन्दोलन किसी न किसी विदेशी सरकार की मदद पर चलते है। भारत का भूमिगत आन्दोलन सिर्फ स्वदेशी शक्ति, सामान और प्रेरणा से चलता रहा। (भले ही श्रीमती गांधी ने इस बारे में कितने ही आरोप लगाए हों, लेकिन न तो वे इस बेबुनियाद आरोप को सिद्ध कर सकती थीं, न कर पाईं। जनता ने भी इसपर कभी विश्वास नहीं किया) मानवीय शक्ति और समर्थन के पैमाने पर भारत का भूमिगत आन्दोलन दुनिया का सबसे बड़ा भूमिगत आन्दोलन था। दुनिया की दूसरी भूमिगत बगावतों के समक्ष बहुत कम शक्ति से राज्य-परिवर्तन का लक्ष्य था। इसलिए उनकी प्रक्रिया बड़ी जटिल और दुस्साहसपूर्ण थी। यहां लक्ष्य तो बड़े थे, लेकिन अपेक्षया अनुकूलताएं भी अधिक थीं।

श्रीमती गांधी ने आपातस्थिति लागू करके गिरफ्तारियां और सेंसरशिप आदि से परिवर्तनकारी नेताओं से आम जनता के बीच की संचार-व्यवस्था काट दी थी। उनका सोचना यह था कि इससे ये नेता जनता से कट जाएंगे और क्रान्ति धरी रह जाएगी। भूमिगत आन्दोलन के सामने सबसे बड़ा काम सिर्फ तोड़ी गई संचार-व्यवस्था को भूमिगत प्रचार-अभियान से फिर स्थापित करना था। भूमिगत आन्दोलन ने अगर कुछ बड़ी सफलता से किया तो यही किया कि

जनता और क्रान्तिकारी नेताओं के बीच संचार हर कीमत पर बनाए रखा। यह व्यापक जनसहयोग के कारण ही सम्भव हो पाया। इसकी गति सरकारी प्रचार से कहीं कम थी, लेकिन इसकी विश्वसनीयता सरकारी प्रचार से कहीं अधिक थी। चुनाव-परिणामों ने यह बता दिया है कि भूमिगत संचार-प्रचार ने सरकारी प्रचार को मात दे रखी थी। इसीलिए जब चुनाव-घोषणा के बाद दिल्ली में पहली आम सभा ३० जनवरी को हुई तो अपार जनता पहुंची। यह एक बानगी थी जनता की मनोदशा की। इस मनोदशा को भूमिगत आन्दोलन ने बनाए रखा था।

भूमिगत आन्दोलन ने एक अन्य महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर सरकार को बुरी तरह पराजित किया। सिर्फ यह तथ्य कि सरकार अपनी एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाकर भी लाखों भूमिगत कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार नहीं कर सकी, अथवा भूमिगत कार्यकर्ता गिरफ्तारी के लिए शुरू से अन्त तक अनुपलब्ध रहे, सरकार के लिए निराशाजनक और जनता के लिए आशा और उत्साह का कारण रहा। नानाजी देशमुख या जार्ज फर्नाण्डीज को सरकार जब तक गिरफ्तार नहीं कर सकी, तब तक फकत उनका गिरफ्तार नही किया जाना जनता के लिए कितना चमत्कारिक था। इसी तरह प्रो० स्वामी या श्री केदारनाथ साहनी ही नहीं, संघ के तमाम चोटी के नेताओं और जनसंघ के लगभग कई दर्जन बड़े नेताओं का अन्त तक गिरफ्तार नहीं होना जहां तानाशाही के लिए सिरदर्द का कारण था, आम कार्यकर्ता और जनता के लिए आशा का प्रबल ज्योति-स्तम्भ था।

सरकार का बार-बार यह मानना कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ज़्यादातर लोग भूमिगत है, समाज के लिए स्फूर्तिदायक था। देश-भर में मिलाकर सभी भूमिगत साप्ताहिक पत्रों की वितरण-संख्या पांच लाख से भी ऊपर थी। एक-एक प्रति भूमिगत आन्दोलन के जीवन्त होने का प्रमाण थी। भूमिगत संचार-व्यवस्था न ठप्प हो सकी, न उसके चलाने वाले लोग गिरफ्तार किए जा सके (इक्की-दुक्की गिरफ्तारियो को छोड़कर)। यह अपने-आप में सरकार की एक और पराजय थी।

भारतीय भूमिगत क्रान्ति ताकत से ज़्यादा, दम की लड़ाई थी। भूमिगत आन्दोलन का दम नहीं टूटा। अन्ततः श्रीमती गांधी का दम ही टूटा। भूमिगत आन्दोलन ने घुटने नहीं टेके। जब कुछ नेताओं को छोड़ा गया तो बातचीत के अनौपचारिक दौर मे भूमिगत नेताओं की तरफ से छोड़े गए नेताओं ने सरकार की कोई भी शर्त नहीं मानी। मुझे याद है, जब एक बार प्रारम्भ के

दिनों में प्रो० सुब्रह्मण्यन स्वामी से मिला था तो उन्होंने विश्वासपूर्वक कहा था कि आपातस्थिति दो साल से ज्यादा चल नही सकती। श्रीमती गाधी का दम दो साल के अन्दर तब तक पैदा हुए बहुत-से कारणों से टूट जाएगा।

भूमिगत आन्दोलन की तरफ से जो सत्याग्रह किया गया, वह भी एक तरह से जनता और सरकार के समक्ष भूमिगत आन्दोलन की शक्ति का प्रदर्शन था। साथ ही प्रकट रूप से कुछ नही होने के कारण जो मानसिक दुर्बलता लोक-मानस में पैदा हो सकती थी, उसे रोकने का प्रभावी उपकरण था। दूसरे अर्थ मे यह 'संचार-अवरोध' को तोड़ने का खर्चीला (मानवीय शक्ति के सिक्के में) माध्यम था। लेकिन यह खर्चा आवश्यक था।

जार्ज फर्नाण्डीज का रास्ता थोडा अलग था। जिस तरीके से लोक संघर्ष समिति भूमिगत सघर्ष चला रही थी, कदाचित् उनका उसमें विश्वास नहीं था। भूमिगत दिनों में उनसे लोकसंघर्ष समिति के तीन वरिष्ठ नेताओं की इस विषय पर लम्बी बातचीत भी हुई। लेकिन लक्ष्य के बारे मे कोई मतभेद न होने के बावजूद तरीके के बारे में मतभेद थे। वे गर्म रास्ते के हिमायती थे। अपने तरीके से कुछ कर भी रहे थे। लेकिन गर्म रास्ते का अर्थ यह नही कि वे खून खराबे के हिमायती थे। अलबत्ता वे खून खराबे और सरकार को ठप्प या विफल कर देने के बाकी के रास्ते मे विवेकपूर्वक फर्क करते थे।

इस तरह की गर्मी किसी भी मुल्क की आज़ाद तमन्नाओं की खास पूंजी होती है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। कौन जनता है अगर आपातकाल और लम्बे काल तक चलता तो संघर्ष निराशोन्मत्त होकर उसी रास्ते चलने को बाध्य होता, जिसकी दिशा जार्ज फर्नांडीज़ ने दिखाई थी।

भूमिगत आन्दोलन के सन्दर्भ में श्रीमती गांधी ने जो संचार-अवरोध पैदा किया, वे स्वयं उसका शिकार बनीं। यह संचार-अवरोध जहां भूमिगत आन्दोलन को बड़ा 'अवसर' देता था, वहीं श्रीमती गांधी को एक अर्थ में पंगु बना रहा था। उन्हें जनता की असली मनोदशा मालूम ही नहीं हो सकी। यहां तक कि गुप्तचर-व्यवस्था भी मनोदशा को सही तौर पर नहीं नाप सकी। यही कारण है कि श्रीमती गांधी अपनी 'रिसर्च एण्ड एनालिसिस विंग' द्वारा दिए गए सम्भावित चुनाव-परिणामों के आकलन के मुगालते में आकर और देश-विदेश सब ओर से पड़ने वाले दबाव में चुनाव करा बैठी।

नेतृत्व

भूमिगत आन्दोलन का असली नेतृत्व कौन कर रहा था, इसे समझने के लिए थोड़ा विस्तार मे जाना आवश्यक है। लोकनायक जयप्रकाश नारायण आपातकालीन स्थिति लागू होते ही बन्दी बना लिए गए थे। जब छूटे तो भी उनपर कड़ी निगरानी बनी रही। उनकी गतिविधियों और मिलने-जुलने पर पाबन्दी थी। सिर्फ उनसे मिलने के अपराध में भी कई लोग गिरफ्तार किए गए। इसलिए यह कहना कि भूमिगत आन्दोलन का नेतृत्व वे कर रहे थे, सम्भव प्रतीत नहीं होता। लेकिन यह तभी तक असम्भव प्रतीत हो सकता है, जब तक हमारी दृष्टि स्थूल नेतृत्व पर अटक कर रह जाती है। थोड़ी गहराई में जाएं तो जयप्रकाशजी भूमिगत आन्दोलन के प्राण के रूप में नज़र आते हैं। जयप्रकाशजी की स्थूल काया भले ही चण्डीगढ़ के कैदखाने या जसलोक अस्पताल अथवा कदमकुआं के निवास-स्थान पर कहीं भी रही हो, लेकिन अपनी प्रेरणा के रूप मे पूरे भूमिगत आन्दोलन में वे सब जगह स्थित थे। शायद ही कोई महीना गया हो, जब लोकनायक ने भूमिगत आन्दोलन के नाम प्रेरणास्पद सन्देश जारी न किया हो। १९ महीनों के दौरान उन्होंने हर महत्त्वपूर्ण मौके पर भूमिगत कार्यकर्ताओं को 'ऐक्शन प्रोग्राम' दिया। इनमें से कुछ दस्तावेज़ इस पुस्तक मे प्रकाशित किए जा रहे है। भूमिगत कार्यकर्ताओं ने इन 'ऐक्शन प्रोग्रामों' का अक्षरश: पालन किया। जितना भी भूमिगत साहित्य प्रकाशित हुआ, उसमें से किसीके कुछ अंक ही होंगे, जिनमें लोकनायक जयप्रकाश नारायण के बारे में कुछ न कुछ न छपा हो। भूमिगत आन्दोलन के सारे साहित्य की वे धुरी थे। फिर सभी पक्षों के जो कुछ नेता बराएनाम बन्दी नहीं बनाए गए थे—वे उनसे बराबर मुलाकात करते रहते थे। इतना ही नहीं, बीसियों ऐसे मौके आए जब शीर्षस्थ भूमिगत नेता जयप्रकाशजी से मिलने में कामयाब

हो गए और कुशलतापूर्वक बच निकले।

उनके सन्देशों और कार्यक्रमों में क्रान्तिकारी नेतृत्व के अनेक तत्त्व देखे जा सकते है:

(१) कठिनाइयों और मुसीबतों की घोर उपेक्षा करने की उनकी प्रवृत्ति, स्थापित तानाशाही के प्रति पूर्ण अवज्ञा, विरोध में असीम आनन्द और तृप्ति का समाधान आदि ऐसे तत्त्व है, जिन्हें हम उनके पत्रों मे तथा उनके द्वारा दिए गए कार्यक्रमों में स्पष्ट रूप से देख सकते है।

(२) लक्ष्य के प्रति अन्धा और पागलपन-भरा प्रेम। अन्धा या पागल प्रेम इसलिए कहा जा सकता है क्योंकि जवान तानाशाही के दमन-दौर में लक्ष्य के प्रति अडिग पागल श्रद्धा ही टिक सकती है, दूसरा कुछ नही।

व्यावहारिक बुद्धि-विवेक से चलने वाला आम व्यक्ति लक्ष्यों के बारे में समझौतावादी रुख अपना सकता है। बहुत-से लोगों ने ऐसे समझौते किए भी। जिन्होंने नहीं किए, उनमें से भी कुछ की लक्ष्य-प्राप्ति की श्रद्धा डगमगाने लगी। लेकिन जयप्रकाशजी की लक्ष्य-चेतना हर चरण के साथ दृढ़तर होती गई।

(३) भूमिगत आन्दोलन के दौरान उनका लोकनायकत्व अथवा वैयक्तिक चुम्बकत्व अधिक प्रभावी हुआ। यही भूमिगत कार्यकर्ताओं के आत्मिक बल का पाथेय था। उनका व्यक्तित्व एक शक्तिशाली राजनैतिक चुम्बक बन गया।

(४) भारतीय राजनीति के अधिकांश शक्तिशाली राजनैतिक नेताओं को अपने लेफ्टिनेंट्स के रूप में सहयोगी बना लेना, उनके क्रांतिकारी नेतृत्व का एक जबर्दस्त पहलू है।

आदर्शवाद, चेतना और विचार के धरातल पर लोकनायक का नेतृत्व भूमिगत आन्दोलन को मिला, यह राजनैतिक महापरिवर्तन के भूमिगत आन्दोलन के इतिहास में एक बहुत महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम है।

ज़्यादातर क्रान्तियों के तीन या चार चरण होते हैं और उन सब चरणों का नेतृत्व प्रायः अलग-अलग होता है।

पहला चरण क्रान्तिकारी स्थितियों के निर्माण का होता है। इसमें नेतृत्व वर्तमान पद्धति और व्यवस्था को झकझोर देता है। १९७३ के अन्त से १९७५ के मध्य तक समग्र क्रान्ति का वही पहला दौर चलता रहा। दूसरा दौर चालू तब होता है, जब कार्यकर्ता 'ऐक्शन प्रोग्राम' लेते है। यह आपतकालीन स्थिति

लागू होने के पहले से चालू होता है, लेकिन इसकी असली परीक्षा 'संघर्ष' की स्थिति में होती है। इसमे शब्दों और कंठशक्ति के बहादुर पिछड़ते है, छंट जाते हैं, छूट जाते है और संघर्षशील व्यक्ति ही टिक पाते है। इसमें जुनूनी, हद दर्जे के आदर्शवादी और साहसी व्यक्तियों के हाथों मे नेतृत्व आता है। तीसरा दौर तब आता है, जब क्रांति की उपलब्धियों को राष्ट्रीय स्तर पर आत्मसात् करने की ज़रूरत होती है।

लोकनायक भारत में हुई हाल की क्रान्ति के, जिसे हम समग्रक्रान्ति का प्रथम चरण कह सकते हैं, नेता रहे।

दूसरे चरण के नेता

इनके साथ ही भूमिगत आन्दोलन अर्थात् दूसरे चरण के संघर्षशील नेताओं में पहले नेता थे, लोक-संघर्ष समिति के महासचिव नानाजी देशमुख। असल में भूमिगत आन्दोलन की प्रथम चुनौती उनके सम्मुख ही उपस्थित हुई। लोकनायक जयप्रकाश ने संघर्ष का नेतृत्व करने का दायित्व उन्हें ही दिया था। उन्हें ही गिरफ्तारियों से छिन्न-विछिन्न राजनैतिक शक्तियों को जोड़ने, ऊपर से लेकर नीचे तक टूटी हुई कड़ियों को जोड़ने का काम करना था। उन्हे ही पहली बार भूमिगत कार्यकर्ताओं को ऐक्शन प्रोग्राम देना था। उन्होंने २१ सूत्री भूमिगत कार्यक्रम भूमिगत कार्यकर्ताओं को दिया था। उन्हे ही भूमिगत प्रचारतंत्र को व्यापक अभियान का सूत्रपात्र करना था।

उन्हें ही सभी पक्षों के भूमिगत नेताओं को—यथा, संगठन काग्रेस के श्री रवीन्द्र वर्मा, मोहिन्दर कौर, सोशलिस्ट पार्टी के श्री सुरेन्द्र मोहन, भारतीय लोकदल के श्री जोशी आदि के साथ सतत सम्पर्क रखते हुए व्यापक पैमाने पर भूमिगत संगठन खड़ा करना था। यह अच्छा ही हुआ कि भूमिगत आन्दोलन जब टेक ऑफ स्टेज से आगे बढ गया, तब ही नानाजी बन्दी बनाए जा सके।

उनके बाद रवीन्द्र वर्मा लोक-संघर्ष समिति के महासचिव हुए। उन्होंने सुन्दरसिंह भण्डारी, सुरेन्द्र मोहन, दत्तोपन्त ठेंगड़ी, कर्पूरी ठाकुर आदि के साथ मिलकर भूमिगत आन्दोलन का नेतृत्व किया।

कार्यान्वयन—लेकिन भूमिगत आन्दोलन के निर्णयों का कार्यान्वयन मुख्य रूप से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ताओं के द्वारा ही हुआ। यह बिलकुल अतिशयोक्ति नहीं, कि यदि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ न होता तो भूमिगत आन्दोलन बराए नाम चला होता। संघ ने अपनी पूरी शक्ति से लोक-संघर्ष समिति के निर्णयों को क्रियान्वित किया। निर्णय के धरातल पर संघर्ष समिति

के नेता संघ के नेताओं से हर मौके पर विचार-विमर्श करते थे। सही मायने में संघ भूमिगत आन्दोलन की रीढ़ की हड्डी था और सर्व श्री माधवराव मुले, मोरोपन्त पिंगले, भाउराव देवरस, बापूराव मोघे, दत्तोपन्त ठेंगड़ी और प्रो० राजेन्द्रसिंह के नेतृत्व मे लोक-संघर्ष को यशस्वी करने के लिए राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने अतुलनीय योगदान किया।

उम्र के लिहाज से देखा जाए तो भूमिगत संघर्ष के ये सारे नेता ५५-६० के आसपास थे। सब अविवाहित थे। एक-दो को छोड़कर सभी कॉलेज शिक्षा-प्राप्त थे। ये सभी मध्यम वर्ग या निम्न मध्यम वर्ग के थे।

इनके अलावा भूमिगत आन्दोलन के नेतृत्व में एक चमत्कारपूर्ण व्यक्तित्व उभरकर आया, उसका नाम है प्रो० सुब्रह्मण्यन स्वामी। शुरू के महीनों में वे भारत में रहे। फिर विदेश चले गए, पत्नी और बच्चों को संकट के अग्निकुण्ड मे झोंककर और भारत सरकार की तमाम व्यवस्थाओं को धत्ता बताकर भारत के लोकतंत्री संघर्ष की अलख जगाने के लिए। उन्होंने पश्चिमी दुनिया में भारत सरकार के प्रचार को करारी मात दी। इसके बाद भारत में गुप्त रूप से आए। ससद मे प्रकट हुए और अन्तर्धान हो गए। यह भूमिगत आन्दोलन का सर्वाधिक प्रभावी विस्फोट था। सबने प्रो० स्वामी के भूमिगत आन्दोलन के सर्वाधिक चमत्कारी नेतृत्व के दर्शन किए। स्वाभाविक रूप से पूरे देश में उनकी तुलना सुभाषचन्द्र बोस से की गई।

इस तरह का दूसरा व्यक्ति था केदारनाथ साहनी। भाषणखोर राजनीति मे नेतृत्व की सही परीक्षा नहीं हो पाती। अल्पभाषी लोग मामूली माने जाते है। लेकिन श्री साहनी ने पूरी आपातस्थिति के दौरान देश का कई बार दौरा किया। उनके ये भूमिगत दौरे रुटीन भूमिगत दौरे नहीं होते थे। उनके सामने कुछ खास 'टास्क' था। असल मे राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ की ओर से बने एक अखिल भारतीय 'टास्क फोर्स' के वे प्रमुख थे। वैसे उनकी व्यक्तिगत धातु की परीक्षा तो उस दिन भी हो गई थी, जिस दिन विदेश-यात्रा के दौरान एक भारतीय राजनयिक को, जो गहरे पानी मे डूब रहा था और मौत के मुंह में एक तरह से चला ही गया था, खुद की जान की पूरी जोखिम होने के बावजूद कूदकर बचाया था। इस आपातस्थिति के दौरान भूमिगत आन्दोलन के 'टास्क फोर्स' के प्रमुख के नाते किए गए उनके कार्य जब कभी सामने आएंगे, तो शायद उसपर कुछ अधिक प्रकाश पडे। अभी तो वे 'टास्क' के बारे मे मुंह खोलने की मुद्रा में नही है।

प्रान्तों में, राजस्थान में श्री ब्रह्मदेव शर्मा, उत्तर प्रदेश में श्री हरिश्चन्द्र, अशोकजी, जयगोपालजी, कौलश किशोर और रामबहादुर राय, बिहार में सर्वश्री मधुसूदन देव, कैलाशपति मिश्र और गोविन्दाचार्य, मध्यप्रदेश में बाबा साहेबनातू और श्री प्यारेलाल खण्डेलवाल, दिल्ली में श्री मदनलाल खुराना और श्री धनराज ओझा, श्री विश्वनाथ और श्री सुरेश वाजपेयी, दक्षिण मे श्री शेषाद्रिजी, बंगाल मे बसन्त राव भट्ट, हिमाचल में प्रेमचन्द जी, उड़ीसा मे बापूराव पालघीकर, महाराष्ट्र में बसन्त राव केलकर, पंजाब मे नारायण दास, कर्नाटक में मध्वराव, आंध्र मे श्री सोनैया, असम मे श्रीकात जोशी वगैरह ऐसे नेता थे, जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में भूमिगत आन्दोलन का क्रियान्वयन किया। यहां कुछ नाम ही गिनाए गए है। इनके अलावा भी अनेक प्रमुख लोग है। यहां किसी प्रमुख व्यक्ति का नाम नही होना, मेरी जानकारी के अभाव का ही द्योतक है।

मुख्य कार्य

अहिंसक या हिंसक दोनों तरह की क्रान्तियों की एक बुनियादी शर्त यह होती है कि सत्ताधीश का राज्य करने का कानूनी अधिकार समाप्त हो जाए। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के बाद संविधान में संशोधन करके सर्वोच्च न्यायालय का अनुकूल निर्णय प्राप्त कर लेने के बावजूद श्रीमती इन्दिरा गांधी की सत्ता की वैधानिकता आम लोगों की नज़रों में समाप्त हो गई थी। अब वे पुलिस बल और प्रशासनिक उपकरण पर परम्परागत सरकारी पकड के जरिये ही शासन कर रही थीं। आम जनता के मूक मानस में उनकी तानाशाही विवादातीत विषय बन गई थी।

समाज अपने परम्परागत सामूहिक लोक-चरित्र के कारण खुली बगावत न कर सकता था, न उसने किया। व्यापक पुलिस-दमन के उस दौर में खुले आम विरोध विरोधियों के लिए आत्मघाती रणनीति होती। इसलिए लोक-संघर्ष को भूमिगत होना पड़ा।

कोई इस भूमिगत संघर्ष के चरित्र को मूलतः आत्मरक्षात्मक मान सकता है, लेकिन यह वस्तुतः लम्बे अरसे के लिए चलने वाला एक अहिंसक युद्ध था। कहना कठिन है कि यह कब तक अहिंसक रहता, क्योंकि डेढ साल गुज़र जाने के बाद बहुत-से नौजवान, जिनमे से कुछ की मुझे व्यक्तिगत जानकारी भी है, रुटीन के तौर पर भूमिगत आन्दोलन चला रहे थे। असल में वे इस पद्धति से निराश हो चुके थे। यह परिगणना करना भी कठिन है कि कब उनकी निराशा निराशोन्मत्तता में बदल जाती और भूमिगत आन्दोलन का चरित्र अहिंसक से हिंसक बगावत का रूप धारण करने लगता। सम्भव है, श्रीमती गांधी ने इसी स्थिति को समझकर बातचीत करने का माहौल बनाने की कोशिश की हो। अन्तिम महीनों में मध्यम स्तर पर अनौपचारिक बातचीत भी हुई, लेकिन यहां

हमारा उद्देश्य १९ महीने के भूमिगत संघर्ष का वर्णन-विश्लेषण करना है।

भूमिगत आन्दोलन के मुख्य रूप से निम्न कार्य थे :

१. प्रभावी भूमिगत संगठन बनाए रखना, २. प्रचार, ३. सूचना एकत्र करना, ४. बन्दी बनाए गए लोगो के परिवारों की सहायता करना, ५. सत्याग्रह का आयोजन करना, ६. साधन एकत्र करना।

संगठन

आपातस्थिति की घोषणा के ठीक पहले लोक-संघर्ष समिति का गठन हो गया था। इसमें भारतीय जनसंघ, लोकदल, संगठन कांग्रेस और सोशलिस्ट पार्टी के प्रतिनिधियों के अलावा कुछ ऐसे लोग भी थे, जिनका किसी पक्ष से सम्बन्ध नहीं था। इनके अलावा पंजाब की अकाली पार्टी भी इसमे थी।

आपातस्थिति की घोषणा के बाद लगभग तमाम केन्द्रीय नेता पकड़ लिए गए, किन्तु संघर्ष समिति के सचिव श्री नाना देशमुख ने पकडे जाने से अपने को बाल-बाल बचा लिया। आपातस्थिति हालांकि बिलकुल अनपेक्षित नहीं थी, तो भी ये संगठन इतनी व्यापक धर-पकड़ के लिए कतई तैयार नहीं थे। श्रीमती गांधी ने पहले दो हफ्ते में ही जिला स्तर तक के लगभग तमाम प्रमुख राजनैतिक कार्यकर्ताओं को पकड़वा लिया। एक आधिकारिक अनुमान के अनुसार प्रारंभ के चार हफ्तों में लगभग ५०,००० कार्यकर्ता पकड़े जा चुके थे। इनमें राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ के कार्यकर्ता बहुतांश में थे। जुलाई के पहले हफ्ते में राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ पर पाबंदी लगी थी, लेकिन उनकी गिरफ्तारियां पहले ही चालू हो गई थी। सबसे ज्यादा संख्या में गिरफ्तारी के बावजूद संघ के अधिकांश सक्रिय कार्यकर्ता और अपवादों को छोड़कर समस्त प्रचारक वर्ग पुलिस की पकड़ में नहीं आया।

राजनैतिक दलों के कुछ लोगों को सरकार ने जानबूझकर छोड दिया था। इसमें सोशलिस्ट पार्टी के श्री एन० जी० गोरे, एस० एम० जोशी संगठन कांग्रेस के श्री दिग्विजय नारायणसिह, जनसंघ के श्री ओमप्रकाश त्यागी और लोकदल के श्री एच० एम० पटेल भी थे।

दलों के जो लोग तमाम घेरेबन्दी के बावजूद पकड में नही आए थे, उनमें नानाजी देशमुख के अलावा जार्ज फर्नाण्डीज, कर्पूरी ठाकुर, सुरेन्द्र मोहन, मोहन धारिया, जगदीशप्रसाद माथुर, सुब्रह्मण्यन स्वामी, केदारनाथ साहनी, दत्तोपंत ठेंगड़ी जैसे कोई एक दर्जन नेता थे।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक अण्डरग्राउंड नहीं हुए और पकड़ लिए गए, लेकिन कुछ प्रान्त संघ-सचालकों को छोड़कर सरकार संघ के किसी केन्द्रीय नेता, प्रान्त-प्रचार के विभाग प्रचारक को नहीं पकड़ सकी। जिला प्रचारक भी बहुत कम पकड़े जा सके।

अब सघर्ष समिति के सचिव श्री नानाजी देशमुख ने संघर्ष समिति के बचे हुए भूमिगत सदस्यों अथवा दलों के एवजी प्रतिनिधियों के साथ भूमिगत बैठक की। योजना बनी, रणनीति निर्धारित हुई। स्वाभाविक रूप से पहला काम भूमिगत संगठन खड़ा करना था। व्यापक गिरफ्तारियों के कारण विभिन्न संगठनों के बीच की कड़ियां छिन्न-विच्छिन्न हो गई थीं। संघर्ष समिति ने भी २१-सूत्री संघर्ष चलाने का निर्णय किया था।

२६ जून के बाद प्रारभ के दो महीने भूमिगत कार्रवाई की प्राथमिक तैयारी का ही कार्य हुआ। केन्द्र से लेकर कस्बे और बडे गांवों तक की कड़ियों को जोडना अपने-आप मे एक महत् कार्य था। ५०,००० से भी अधिक कार्यकर्ताओं के गिरफ्तार हो जाने से बीच की अधिसख्य कड़ियां टूट गई थी। सचार के साधनो का इस्तेमाल नही किया जा सकता था। ऐसी स्थिति मे बचे हुए कार्यकर्ताओं में से कुछ प्रमुखों का स्थानान्तरण किया गया, ताकि नई जगह पर स्थानीय पुलिस उन्हे पहचान न सके। भूमिगत रूप से रहने और कार्य करने की नई व्यवस्था बनाना, पत्र-व्यवहार के लिए नये विश्वस्त पते और कुछ संकेत-शब्दो का प्रचलन करना, सूचनाओं के नियमित आदान-प्रदान के लिए 'कुरियर सिस्टम' की नियमित पद्धति विकसित करना आदि ही मुख्य कार्य थे।

ये तमाम कार्य लोक-संघर्ष समिति के नाम से हुए, यानी यह संघर्ष दलीय सम्बद्धताओं से ऊपर उठकर चलाया गया।

नियुक्तियां

लगभग डेढ़ महीने मे केन्द्र से लेकर जिला तक तदर्थ संघर्ष समितियों का गठन बचे हुए लोगो को लेकर कर लिया गया। इसमें कोशिश यही थी कि सभी पक्ष के लोगों को लिया जाए। जहां जिनका संगठन नही था अथवा जिनके सभी कार्यकर्ता बन्दी बना लिए गए, उनके किसी प्रतिनिधि का उसमें न होना मजबूरी ही थी।

समाचार-संचार

देश-भर में समाचार-संकलन और उसे ठीक स्थान पर ऊपर या नीचे भेजने का तंत्र विकसित किया गया। नियमित कार्यालयों के बजाय देश-भर मे इस कार्य के लिए गुप्त पतों की सूची बनाई गई। ज़िला, प्रान्त केन्द्र और सार्वदेशिक केन्द्र तक सूची सिर्फ निश्चित व्यक्तियों के पास रही। जहां तक हो सके, तार और टेलीफोन का इस्तेमाल करना वर्जित रखा गया। 'कुरियर सिस्टम' पर ज़ोर दिया गया।

प्रचार साधन

प्रेस, साइक्लोस्टाइल मशीन, टाइपराइटरों की व्यवस्था यथासम्भव हर स्थान पर की गई। कुछ केन्द्रों पर संघर्ष समिति ने अपने भूमिगत प्रेस भी लगाए।

नेतृत्व, संगठन, आदर्शवादी लक्ष्य के अतिरिक्त एक तत्त्व, जो भूमिगत क्राति के लिए बहुत आवश्यक होता है, वह है विदेशी जनमत। आज के विश्व मे देशी स्थितियों पर अन्तर्राष्ट्रीय जनमत-सन्तुलन का बहुत व्यापक असर पडता है। यहां तक कि आम जनता का अन्तर्राष्ट्रीय जनमत अपने-अपने देशों में सरकारी निर्णयों को भी प्रभावित करता है।

इसलिए कोई भी क्रांति अपनी समस्या का अन्तर्राष्ट्रीयकरण स्वाभाविक रूप से करती है। क्रांति-विरोधी शक्ति भी अपने ताने-बाने को स्थानीय स्थितियों के परिप्रेक्ष्य मे विदेशी जनता और सरकारी मत को प्रभावित करने के लिए विदेशों में फैलाती है। इसलिए श्रीमती गांधी ने भी अपना दृष्टिकोण दुनिया-भर में फैलाने की भरपूर कोशिश की।

लेकिन भूमिगत आन्दोलन के प्रतिनिधियों को स्वाभाविक रूप से व्यापक समर्थन विदेशस्थ भारतीयों तथा दुनिया की समझदार मुक्त जनता से मिला। अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति-सन्तुलन भी श्रीमती गांधी के विरुद्ध था। एक तो श्रीमती गांधी द्वारा भारत को रूस के साथ जोड देने के कारण स्वाभाविक रूप से स्वतन्त्र विश्व जनमानस का झुकाव भूमिगत आंदोलन के साथ था। दूसरे, भारत के भूमिगत आन्दोलन ने रुपये-पैसे या साधनों के लिए विदेशी मदद का निषेध किया था। अलबत्ता भूमिगत आन्दोलन नैतिक और भावनात्मक समर्थन चाहता था और वह उसे मिला।

अन्तर्राष्ट्रीय जनमत की महत्ता समझकर भूमिगत आन्दोलन के द्वारा विदेश भेजे गए कार्यकर्ताओं ने उपलब्ध स्थितियों का इस्तेमाल भूमिगत आन्दोलन के समर्थन में कैसे किया, इसका विस्तृत ब्योरा आगे दिया जा रहा है।

विदेशों में प्रचार

विदेशों में प्रचार के लिए यूरोप, अमेरिका, कनाडा, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया में रहने वाले भारतीयों की मदद से विभिन्न सेल और संगठन बनाए गए। इसके लिए समिति ने लगभग डेढ दर्जन प्रमुख कार्यकर्ताओं को गुप्त तरीकों से विदेश भेजा। इसमें प्रो० सुब्रह्मण्यन स्वामी, केदारनाथ साहनी और मकरन्द देसाई आदि प्रमुख है। श्री राम जेठमलानी, लैला फर्नाण्डीज़ और स्टेट्समैन के श्री इरानी भी इसी हेतु से विदेश गए।

गुप्तचरी

विभिन्न सरकारी महकमों, प्रधानमंत्री के सचिवालय, पुलिस-प्रशासन, काग्रेस मन्त्रिमंडल के सदस्यों, गृहमंत्रालय आदि से सूचना प्राप्त करने के लिए दिल्ली तथा राज्यों की राजधानियों मे विशेष गुप्तचर सेलों के गठन किए गए।

आचार-संहिता

भूमिगत कार्यकर्त्ताओं के लिए कुछ आचार-संहिताएं बनाई गई। मोटे तौर पर इसके निम्न मुद्दे थे :

१. नाम और वेश बदलकर कार्य करना। २. व्यक्ति-विशेष के पास उसकी अपनी जिम्मेदारी से सम्बन्धित आवश्यकता से अधिक जानकारी न देना और न पूछना। ३. आन्दोलन के नेताओं के रहने के तथा अन्य गुप्त केन्द्रों की जानकारी सिर्फ 'काण्टेक्टमैन' के पास ही होना। ४. सूचनाओं के आदान-प्रदान में निश्चित संकेत-भाषा का प्रयोग करना। ५. किसी भी संगठनात्मक बैठक में एक निश्चित संख्या से अधिक लोगों का भाग न लेना। ६. किसी भी सूचना को बहुत अग्रिम तौर पर न देना। ७. प्रेस, साइक्लोस्टाइल या टंकण केन्द्रों का पता एक-दो व्यक्तियों से ज़्यादा को किसी भी हालत में न होने देना। ८. बिना बहस के निर्णयों का पालन करना। ९.

भूमिगत कार्यकर्ताओं द्वारा अपने निवास, बैठक और प्रचार-केन्द्रों को यथा-संभव जल्दी ही बदल दिया जाना। १०. गिरफ्तार होने का प्रसंग उपस्थित होने पर पुलिस को कोई अतिरिक्त सामग्री या जानकारी न मिले, इसका ध्यान रखना। ११. आम बातचीत में साहसिक दर्पोक्तियों से बचना और अन्यों को वर्जित करना। १२. कम से कम खर्च करके काम चलाना। १३. पुलिस, गुप्तचर और भेदियों के प्रति हमेशा सतर्क रहना। १४. संघर्ष के साथियो में दलीय भिन्नता के कारण मनोमालिन्य न होने देना। १५. दुस्साहसिक कार्यों से बचना।

प्रचार

भूमिगत प्रचार-तंत्र को हिंसक क्रान्तियों मे भी गुरिल्ला हमलों के बाद सबसे ज़्यादा महत्त्व का कार्य माना जाता है, लेकिन अहिंसक भूमिगत आंदोलन मे इसका महत्त्व अहिंसक सीधी कार्रवाई सत्याग्रह से ज़्यादा नही, तो कम भी नहीं माना जा सकता। आपातस्थिति के दौरान भूमिगत प्रचार-आन्दोलन के निम्न मुख्य उद्देश्य थे :

१. संघर्षरत भूमिगत कार्यकर्ताओं का नैतिक साहस ऊंचा बनाए रखना। २. आम जनता को देश-विदेश की उन सच्ची घटनाओं से वाकिफ रखना, जिन्हे दबाने के लिए सरकार ने प्रेस और प्रचार-तंत्र के बाकी के साधनों पर सेंसरशिप का शिकंजा जकड रखा था। ३. सत्ता और सत्ता के उपकरणों पर प्रचार-तंत्र का दोहरा दबाव बनाए रखना अर्थात् एक तो भूमिगत आन्दोलन और लोक-विक्षोभ की जानकारी के ज़रिये से और दूसरे, उनपर सीधे प्रचारात्मक हमला करके। ४. सरकारी प्रचार-तंत्र की साख सच्ची-सही खबरों को प्रसारित करके खत्म करना। ५. सरकार की तानाशाही करतूतों को प्रचारित कर तानाशाही को अपने सही नंगे रूप मे जनता के सामने लाना। ६. जेल में बन्दी कार्यकर्ताओं को भूमिगत प्रचार के ज़रिये चलनेवाली गतिविधियो से जानकार रखना और उनका हौसलाअफजाई करना। ७. विश्वव्यापी प्रचार के लिए सामग्री मुहैया कराना।

भूमिगत प्रचार की महत्ता इससे कुछ अंश तक समझी जा सकती है कि हज़ारों कार्यकर्ता पर्चे बांटते हुए गिरफ्तार किए गए। छापने, लिखने, बांटने की किसी भी प्रक्रिया मे लगे लोग बडी जोखिम उठाकर ही भूमिगत काम कर सकते थे। किसी सन्देहास्पद व्यक्ति को गिरफ्तार करने के बाद उससे पूरी

जानकारी के लिए पुलिस तीसरे दर्जे के हथकण्डों का इस्तेमाल करती थी। भूमिगत पर्चे के साथ जुड़ी हुई दहशत का एक वाकया यहां दे रहा हूं।

आतंक

यह घटना उन दिनों की है, जब इमरजेंसी जवान हो गई थी। चारों ओर बीस-सूत्री के ढोंगी नगाड़े बज रहे थे। राजौरी गार्डन के बस-स्टैण्ड पर एक नौजवान खड़ा था। वह बढा और उसने मेरे मित्र अंग्रेजी के पत्रकार बलबीर पुंज से हाथ मिलाया। वह अनजान हाथ जब लौटा तो बलबीर के हाथ मे फोल्ड किया हुआ एक पैम्फलेट अटक गया। उसने खोला—शीर्षक था, दक्षिण के कारावास से कार्यकर्ताओं के नाम एक चिट्ठी। उसे उसने पलटकर किताब के बीच रख लिया। बस आई और वह चढ़ गया। एक सैनिक अधिकारी ने किताब देखने के लिए उससे ली। अचानक वह पन्ना निकल पडा। इससे पहले कि वह उस पन्ने को उससे ले, सैनिक अधिकारी ने सरसरी तौर पर नजर डालकर समझ लिया कि यह 'अण्डरग्राउंड लिटरेचर' है। खैर, बमुश्किल तमाम पुंज उससे वह कागज़ ले पाया। अपनी जेब के हवाले कर बिना यात्रा पूरी किए बीच में उतरने की सोचने लगा।

लेकिन होनी कुछ और ही थी। कोई चिल्लाया कि उसकी जेब कट गई है और बस को थाने पर ले जाया जाए। सब एक-दूसरे को शक की नज़र से देख रहे थे। इत्तफाक देखिए कि बलबीर उस व्यक्ति के काफी करीब खड़ा था, जिसकी जेब कटी थी। बस थाने पहुंची। पुलिस ने बस को घेर लिया। यात्री तलाशी दे-देकर नीचे उतरने लगे। बलबीर ने जेब मे से वह कागज़ निकाला और नज़र बचाते हुए मोड़कर बस में फेंककर गेट पर तलाशी देता हुआ उतर गया।

जब सब उतर गए तो पुलिस बस की तलाशी लेने ऊपर चढी। उसे एक जगह एक देशी पिस्तौल, निकाला गया बटुआ, एक छुरा और उसीके बीच पड़ा वह पर्चा मिला, जिसे बलबीर ने फेंका था। पुलिस उलट-पलटकर उस पर्चे को पढ़ रही थी। अब वह सैनिक अधिकारी कभी उस पर्चे को और कभी बलबीर को देख रहा था। उस पर्चे को वह पहले ही देख चुका था। उसे पक्का शक था कि जेब भी बलबीर ने ही काटी होगी। खैरियत यह गुज़री कि घिरे हुए यात्रियों में पुलिस ने एक नज़र डालकर एक माने हुए गिरहकट को पकड़ लिया और दो-चार हाथ में ही कुबूल करवा लिया कि जेब उसीने काटी

है। अब पुलिस का सवाल था कि वह पर्चा तेरे पास कैसे आया। वह मार खाकर भी बार-बार कह रहा था कि पर्चा उसका नहीं है। जिसकी जेब कटी, वह भी घबराया हुआ था। वह भी यही कह रहा था कि पर्चा उसका नहीं है। जेबकतरा जेब काटने का जुर्म कबूल कर सकता था, मगर पर्चे वाला जुर्म तो उसके हिसाब से ज़्यादा बड़ा जुर्म था, इसीलिए बावजूद पिटने के वह कबूल नहीं कर रहा था। करता भी क्यों? इधर सैनिक अधिकारी की शंका निर्मूल हो चुकी थी। उसने बलबीर को इशारे से बाकी के कुछ और लोगों की तरह निकल जाने का संकेत किया।

आपातस्थिति के दौरान किसीके पास 'अण्डरग्राउंड लिटरेचर' पकड़ा जाना अपने-आपमें जेल के वारंट से कतई कम नहीं था। अनगिनत लोग पर्चा पाए जाने के कारण देश-भर में गिरफ्तार हुए। इसीलिए ज़्यादातर पर्चों का वितरण जाने-पहचाने और विश्वास के लोगों के द्वारा हुआ। ऐसे साहित्य के कारण जेल जाने वालों के अलावा बहुत-सी अन्य परेशानियों के शिकार हुए लोगों की हजारों घटनाएं गिनाई जा सकती है। उन दिनों ऐसे पर्चे लिखना, छापना, बांटना, रखना, पढ़ना या उसकी चर्चा मात्र करना अपने-आपमें एक साहसिक कार्य माना जाता था।

नमूने की उक्त घटना से कुछ बाते साफ है। एक तो सरकारी रवैया साफ है। पुलिस का महकमा जेबकतरी के अपराध से कहीं ज़्यादा तवज्जह पर्चे को दे रहा था। ठीक भी है, जेबकतरा पकड़ने से उन्हें कुछ नहीं मिलना था, लेकिन यदि वे कहीं उस पर्चे के मूल तक पहुंच जाते तो कुछ सौ रुपये के इनाम के हकदार हो जाते।

दूसरे, इस घटना से तमाम यात्रियों को ऐसे पर्चे के रखने-पढ़ने के 'भयानक जुर्म' का एहसास हो गया।

तीसरे, यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि एकमात्र व्यक्ति, जो पर्चे वाले की सही पहचान रखता था, सहानुभूतिपूर्वक खामोश रहा और अन्तिम कि ऐसे वातावरण के बावजूद पर्चे निकलते रहे, बंटते रहे और पढ़े जाते रहे।

तंत्र

लोक-संघर्ष समिति के केन्द्रीय नेता संसद् सदस्य श्री सुन्दरसिंह भण्डारी के अनुसार देश-भर में कोई ढाई सौ केन्द्रों से पर्चे निकलते थे।

पर्चों की मूल सामग्री केन्द्र से राज्य को, फिर प्रान्तीय राजधानी से ज़िला

केन्द्रों को जाती थी। अधिकांश छपाई प्रान्त या जिला केन्द्रों में हुई। छपने के लिए मूल समाचार भेजने की दोहरी प्रणाली थी।

एक तो केन्द्र से तमाम राज्यों को और दूसरे राज्यों के केन्द्रों से बाकी के राज्यों को सीधे, ताकि समय कम लगे। नीचे से महत्त्वपूर्ण सामग्री राज्य और केन्द्र को भेजने की भी व्यवस्था थी।

भण्डारीजी का कहना था कि देश मे कितनी तरह के पर्चे निकले, इसकी कोई कल्पना तक नही की जा सकती। भण्डारीजी ने गिरफ्तार होने के पूर्व भूमिगत आन्दोलन को गति देने के लिए सम्पूर्ण देश-भर का कोई तीन बार विस्तृत भ्रमण किया। यह जानकारी उनकी नितान्त निजी और अधिकृत जानकारी पर आधारित है।

उनका कहना था कि छपे हुए, साइक्लोस्टाइल किए हुए, हाथ से लिखे हुए या कार्बन से निकाले हुए पर्चे, साप्ताहिक, मासिक या स्पेशल बुलेटिन वगैरह के रूप मे देश के लगभग हर जिले से निकले। यह लेखक कम से कम तीस-चालीस ऐसे छात्रों को जानता है, जो रात-रात-भर ऐसे पर्चों को टाइप करते थे। जब देश-भर में लगभग २०० से ज्यादा छापाखानों पर छापा पड़ गया और वे बन्द हो गए, तब छपाई का काम सिर्फ बहुत ज़रूरी पर्चों के लिए होता था। साइक्लोस्टाइलिग पर जोर बढ़ गया था।

जब तक गुजरात और तमिलनाडु मे विपक्ष की सरकारें रहीं तब तक स्थानीय मुद्रण के अलावा कुछ पर्चे बड़ी तादाद मे छापकर व्यापारिक फर्मों के सामान के रूप मे व्यापारियों के जरिये विभिन्न केन्द्रों को भेजे जाते रहे। उसके बाद इस काम का विकेन्द्रीकरण किया गया।

पद्धति

भण्डारीजी का यह कहना था कि लगभग १० दिनों में तमाम महत्त्वपूर्ण खबरें देश के कोने-कोने मे पहुंचा दी जाती थीं। आम जनता का अखबारों और आकाशवाणी पर से असत्य और अर्धसत्य प्रचार के कारण विश्वास खत्म हो गया था। दूसरी तरफ अण्डरग्राउंड साहित्य की जनमानस में अद्भुत साख और विश्वसनीयता थी। इसीलिए सरकार का भारी-भरकम इकतरफा प्रचार भी सफल न हो सका। एक पर्चे को कम से कम दस पढ़ते थे और विद्युत् गति से यह समाचार कानोंकान सामान्य जनसमाज तक पहुंच जाता था।

भूमिगत प्रचार की कार्य-पद्धति कितनी सक्षम थी, इसका एक नमूना यह

घटना प्रकट करती है। घटना उन दिनों की है, जिन दिनों भारत में राष्ट्र-मण्डलीय देशों का सम्मेलन हो रहा था। दर्जनों देशों के वरिष्ठ सरकारी प्रतिनिधि आए हुए थे। सरकार हर तरह से उनपर यह प्रभाव डालने की कोशिश करती रही कि देश मे लोकतन्त्र चल रहा है। बिलकुल शान्ति है। भूमिगत आन्दोलन नाम की कोई चीज यहां नही है। आम जनता सन्तुष्ट और श्रीमती गांधी के साथ है।

अब भूमिगत आन्दोलन के लोगों के सामने यह सवाल था, उन्हे सही जानकारी कैसे दी जाए। लगभग २० दिन पहले से उन्हे देने के लिए प्रचार-साहित्य की तैयारी चालू हो गई। सरकारी गुप्तचर और पुलिस इस सम्मेलन के कारण बहुत अधिक सक्रिय हो गई थी। दो वैकल्पिक 'टास्क फोर्स' बनाए गए, ताकि दोनों में से कम से कम एक सफल हो जाए।

सरकार को यह जानकारी मिल चुकी थी कि भूमिगत लोग विदेशी प्रतिनिधियों को अण्डरग्राउंड लिटरेचर देने वाले हैं। अतः जबरदस्त सरकारी नाकेबन्दी थी। फिर भी हर प्रतिनिधि के पास ठीक सम्मेलन-स्थल पर अण्डरग्राउंड साहित्य के पैकेट सकुशल पहुंचा दिए गए। यह सब सरकारी अफसरों के सहयोग के बिना असम्भव था। इतना ही नहीं, भूमिगत नेता कुछ प्रतिनिधियों से मिले। लालकिले में उनके स्वागत के समय समिति के कार्यकर्ताओं ने ठीक मंच के सामने खड़े होकर सत्याग्रह किया। हालांकि उस दिन अन्दर जाने पर कड़ी छानबीन, निगरानी और प्रतिबंधक व्यवस्था थी। ये प्रतिनिधि जब लखनऊ, पटना, भोपाल, जयपुर, बम्बई, बंगलौर आदि स्थानों पर गए, तो वहां भी उनसे भूमिगत आन्दोलन के लोग मिले और वहां भी स्थानीय भूमिगत साहित्य उन्हें दिया गया।

श्रीमती गांधी की सरकार उन्हें जो दिखलाना चाहती थी, विदेशी प्रतिनिधि ठीक उसके विपरीत प्रभाव अपने साथ ले गए।

सत्याग्रह चालू करने के निर्णय की घोषणा व्यापक पैमाने पर कैसे हो, यह सवाल था। नवम्बर १९७५ की बात है यह। संघर्ष समिति, दिल्ली, के उस समय के प्रचार-प्रमुख बी० एल० शर्मा 'प्रेम' ने एक योजना बनाई। उसके अनुसार राजधानी के ४० सिनेमाघरों के सामने कार्यकर्ता गए। ६.३० से ९.३० के शो समाप्त होने के ठाक ३ मिनट पूर्व सिनेमा देखने वाले ५-४ कार्यकर्ता उठे और दनादन पर्चो को बांटते-फेकते हुए, इससे पहले कि कोई पढ़े, कुछ समझे, तत्काल बाहर आ गए। वहां चालू हालत में मोटरसाइकल या

स्कूटर खड़े थे, उनपर बैठकर वे रवाना हो गए। अगले दिन सत्याग्रह की घोषणा स्थान-समय आदि के साथ राजधानी की आम जानकारी बन गई।

उस पर्चे के ऊपर सत्ता को सम्बोधित करके एक शेर लिखा था :

तुमने जो देखा होगा, कोई और देखा होगा,
हम नहीं आग से बच-बचके गुजरने वाले।

ऐसा ही प्रचार-सामग्री के वितरण का एक सवाल था। प्रचार-सचिव ने दिल्ली के तमाम १४ जोन के वितरण-प्रमुखों को लिबर्टी के सामने बुला लिया। वे सब अपने बीवी-बच्चों सहित सिनेमा देखने आए। पूर्व सूचित संकेत के अनुसार शर्मा स्कूटर का पहिया खोलकर बदलने का नाटक कर रहे थे। एक-एक करके ये लोग मदद करने के बहाने आते गए और अपना-अपना पैकेट पास खड़ी गाड़ी से लेकर चले गए। लेकिन कुछ प्रमुखों ने अपने एवज़ में किसी और को भेज दिया था। ये नये लोग इस काम की पूरी नज़ाकत नहीं समझ पाए। चार-पांच लोग इकट्ठे पहुंच गए। फलत: पुलिस ताड़ गई। पुलिस के ताडने को शर्मा भी ताड़ गए और स्कूटर छोड़कर एक दूसरी मोटरसाइकल से निकल भागे।

उस दिन ग्रेटर कैलाश में संजय गांधी का कार्यक्रम था। पूरे रास्ते-भर पुलिस बैठी हुई थी। एक कार्टून पैम्फ्लेट, जिसमें ससद् को हथौड़ी से तोड़ने के चित्र के ज़रिये कटाक्ष किया गया था, वितरण करना था। सारा माल दक्षिण दिल्ली मे था। सामग्री निकालना और उसे दिल्ली में और देश-भर में भेजने की समस्या थी। होलडाल और अटैची में पर्चे बन्द करके लड़कियों को देकर टैक्सी मे भेज दिया गया। पुलिस ने महिलाओं को देखकर जाने दिया। सेना के अधिकारियों, बड़े सरकारी अफसरों, पुलिस अफसरों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण अधिकारियों को भूमिगत साहित्य भेजने के लिए तरह-तरह के उपाय अपनाए गए। प्रारंभ में शुभ विवाह के लिफाफों पर 'वीना वेड्स रमेश' के रंगीन और मंगल धागों वाले लिफाफे छपाए गए। उनमें भूमिगत साहित्य डालकर पोस्ट कर दिए गए। तीन-चार बार ऐसा करने पर यह तरीका पकड़ा गया और एक बार डाक की छंटाई हो गई। अब दूसरा तरीका निकाला गया। हूबहू परिवार-नियोजन मंत्रालय के लिफाफों जैसे लिफाफे छपाए गए। अब समस्या आई कि मंत्रालय के लिफाफों पर सर्विस स्टाम्प लगते है। उनका कैसे इन्तज़ाम हो! खैर, चार-पांच दिन की कोशिश के बाद पहली बार साढ़े सात हज़ार सर्विस स्टाम्पों

का 'इन्तज़ाम' किया गया और उनके माध्यम से लोकनायक जयप्रकाश की अपील के साथ मंत्रालय के लिफाफे को देश-भर के कोई चार हज़ार अफसरों के पास भेजा गया। यह तरीका कोई दो महीने तक सुरक्षित चलता रहा। उसके बाद यह तरीका भी पकड़ा गया। हालांकि पतों को टाइपराइटर बदल-बदलकर, हाथ से और बाकी तरह से हर बार फर्क डालकर लिखा गया था। बाद में सरकारी प्रकाशनों के बीच मे ऐसे पन्ने डाल देने की विधि भी अपनाई गई।

कुछ कार्यकर्ताओं के गिरफ्तार हो जाने पर प्रचार-सामग्री को एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाने और विभिन्न केन्द्रों पर पहुंचाने के लिए महिला कार्य-कर्त्रियों का सहयोग लिया गया। दिल्ली में कुछ पखवाड़ों तक यह कार्य छः लड़कियों से लिया गया, लेकिन एक बार ऐसा हुआ कि सामान पहुंचाकर जिस केन्द्र पर ये महिलाएं पहुंचती थीं, वहा नही पहुंचीं। तीन घण्टे विलम्ब हो जाने पर मोटरसाइकल पर प्रमुख महोदय वेश बदलकर चक्कर काटते रहे। केन्द्रों से सामान पहुंचने की खबर मिली। पर लड़कियां गईं कहां? शका होने लगी कि कहीं पुलिस के हाथ तो नहीं पड़ गईं? रात ग्यारह बजे उनमें से दो लडकियां एक केन्द्र पर मिलीं। उन्होंने बताया कि रोहतक रोड के केन्द्र पर पुलिस की नज़र है। सामने के एक मकान में छापा भी पड़ा है। फिर दूसरी रात उस केन्द्र से साइक्लोस्टाइल मशीन, टाइपराइटर हटाए गए। प्रचार-तंत्र और तकनीक की चर्चा इस सारी पुस्तक में जगह-जगह पर और तरह-तरह से होगी, इसलिए अधिक विस्तार में जाने की यहां आवश्यकता और गुंजाइश नही है।

सूचना-संचार

इसमें मुख्यतया दो तरह के काम थे। एक तो अधिकृत सूचना एकत्र करना और दूसरे, उन्हें सही जगह पर पहुंचाना। सूचनाओं के चार प्रमुख वर्ग थे :

(क) संगठनात्मक सूचनाएं, (ख) सरकार के तानाशाही कदम, जैसे गिरफ्तारियों, दमन, गोलीबारी, मकानों, बाज़ारों आदि की तोड़-फोड़, आततायी सरकारी आदेश, नसबंदी के अमानुषिक अभियानों और सम्राज्ञी इन्दिरा गांधी व राजकुमार संजय गांधी की हरकतों की जानकारियां, (ग) सरकारी घबराहट, कमज़ोरियों और कमियों आदि के बारे मे जानकारी एकत्र करना, (घ) सरकारी महकमों, प्रधानमंत्री सचिवालय, मन्त्रिमण्डल, गुप्तचर

संगठनों आदि में दबी हुई या गुप्त जानकारियों को प्राप्त करना।

इन सूचनाओं का संगठन के अलावा, प्रचार तथा गिरफ्तारियों से बचने, गुप्त केन्द्रों के स्थान-परिवर्तन करने, संघर्ष के अन्दर घुसने की कोशिश करने वाले सरकारी गुप्तचरों से बचने तथा भूमिगत आन्दोलन की रणनीति बनाने व बदलने की दृष्टि से काफी महत्त्व होता था।

हालांकि इसकी रचना में सुप्रशिक्षित लोगों के अभाव के कारण कई बार अधपकी, अधूरी और भ्रम पैदा करने वाली सूचनाओं से नुकसान भी होता था।

पुलिस की नाकेबन्दी और सतर्कता की इतनी अतिरंजित खबरें मिलने लगीं कि कुछ केन्द्रीय नेताओं को विभिन्न केन्द्रों पर बिलकुल अचानक पहुंचने की रणनीति अपनानी पड़ी। फलतः स्थानीय तौर पर नेता के अचानक पहुंचने पर सभी सम्बद्ध व्यक्तियों से सीमित समय में मुलाकात सम्भव नहीं हो पाती थी।

लेकिन कुल मिलाकर सूचना व संचार के कार्य की बहुत बड़ी भूमिका रही।

एक बार केन्द्रीय लोक-संघर्ष समिति की बैठक दक्षिण भारत में रखी गई। इसकी सूचना सरकार को मिल गई। सरकार को इसकी सूचना मिली, यह जानकारी लोक-सघर्ष समिति के नेताओं को भी मिल गई। फलतः बैठक उससे बहुत दूर दूसरे शहरों में की गई।

एक बार का वाकया है, श्री राजेन्द्र शर्मा (संसदीय जनसंघ दल के कार्यालय सचिव) को प्रचार-सामग्री की व्यवस्था की दृष्टि से उत्तरप्रदेश जाना था। उन्होंने पुलिस का ध्यान बंटाने के लिए अपने पूरे नकली प्रवास का विवरण पंजाब में कोड भाषा में इस तरतीब से भेजा कि पुलिस को वह मिल जाए। इतना ही नहीं, यह प्रबन्ध भी किया कि जिन दिनों वे उत्तरप्रदेश में घूम रहे हों, उन दिनों चण्डीगढ, अमृतसर, फिरोजपुर आदि से अपने प्रवास का विवरण का पत्र दिल्ली की पुलिस की नजर में आए हुए एक पते पर बराबर आता रहे। इसका अनुकूल परिणाम निकला। पंजाब में गुप्तचर विभाग ने मय उनके हुलिया के एक परिपत्र जारी किया। पुलिस उन्हें सरगर्मी से पजाब में ढूंढ़ती रही और वे उत्तरप्रदेश में घूमते रहे।

सहायता करना

बन्दी बनाए गए लोगों में कुछ तो खाते-पीते परिवारों के थे, लेकिन बहुत-से ऐसे कार्यकर्त्ता भी थे, जिनके गिरफ्तार होते ही उन परिवारों में भयानक आर्थिक तंगी उत्पन्न हो गई। कानूनी तौर पर सरकार को उन परिवारों को माहवारी आर्थिक मदद करनी चाहिए थी, जिनके एकमात्र अर्जक सदस्य जेल में राजनैतिक बन्दी के रूप मे थे; लेकिन सरकार ने ऐसा नही किया। फलतः ऐसे परिवारों को कुछ माहवारी मदद सस्थागत तौर पर करना भी अपने-आपमे बड़ा भारी काम था। मुझे जिन कुछ जिलों की जानकारी है, उनके कार्यकर्ताओं के घरों पर मासिक सहायता-राशि ५ से ८ हज़ार रुपये थी। इतनी बड़ी राशि ज़िले के अन्दर से ही सहानुभूति रखने वाले मध्यमवर्गीय लोगों से सहायता-राशि के तौर पर लेना अपने-आपमें एक बड़ा कार्य था। लेकिन यह किया गया। हालांकि परिवारों को दी गई सहायता-राशि मुश्किल से काम-चलाऊ होती थी, फिर भी भूमिगत आन्दोलन के नैतिक साहस को बनाए रखने में इसका एक महत्त्व था।

सत्याग्रह

१९७५ के दिसम्बर से १९७६ की जनवरी तक तानाशाही के खिलाफ देश-भर में सत्याग्रह हुआ। पूरे समाज में ऊपरी तौर पर पूरी चुप्पी और शान्ति के बावजूद जब लोक-संघर्ष समिति ने सत्याग्रह का फैसला किया तो देश के सभी प्रदेशों मे विभिन्न केन्द्रों पर सत्याग्रह हुए। हालांकि यह सत्याग्रह लोक-संघर्ष समिति के नाम से चला, लेकिन मुख्यतः सारे देश मे यह सत्याग्रह राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने ही चलाया।

इसकी सारी तैयारी, सत्याग्रहियों की पूर्ति, उनकी बैठक, गिरफ्तारी के बाद होने वाली पुलिस की ओर से सम्भावित मारपीट में टिके रहने और कुछ भी जानकारी न देने या सिर्फ निर्धारित जानकारी-भर देने की मानसिक तैयारी व सत्याग्रह के दौरान बांटने के लिए पर्चों की छपाई वगैरह सब कुछ भूमिगत रूप से की गई।

कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, बिहार, राजस्थान, दिल्ली, गुजरात आदि कुछ राज्यों मे सत्याग्रह आशातीत रूप से सफल रहा। अकेले कर्नाटक में

१५ हज़ार लोगो ने सत्याग्रह किया। देश-भर मे सत्याग्रह करके जेल जाने वाले लोगों की संख्या लगभग एक लाख रही।

इस सत्याग्रह के अलावा दिल्ली में आपातकाल के प्रारम्भ में ही एक हफ्ते तक सत्याग्रह हुआ। इसमें सौ लोग जेल गए। पंजाब मे अकाली कार्यकर्ताओं ने दिसम्बर, '७५ से पूरे आपातकाल के दौरान प्रतिदिन सत्याग्रह किया। करीब ४० हज़ार अकाली कार्यकर्त्ता जेल गए।

सत्याग्रह करने की विधि में भूमिगत आन्दोलन के चातुर्य की कहीं-कहीं तो परीक्षा ही हो गई। चांदनी चौक में सत्याग्रह होना था। पर्चों के जरिये यह जानकारी आम जनता तक पहुंच गई थी कि सत्याग्रह होगा और दिल्ली जनसंघ के नेता श्री ईश्वरदास महाजन इसका नेतृत्व करेंगे।

पुलिस ने फैसला किया कि सत्याग्रह नही होने देना है। उन्हें चांदनी चौक के पहले ही गिरफ्तार कर लेना है, ताकि चौक में सम्भावित भीड़ के समय आन्दोलन का प्रभावी दृश्य न बने। यही पुलिस को हिदायत भी थी।

कोई १००० गुप्तचर इलाके-भर मे दो दिन पहले से लगा दिए गए। एक रात पहले पुलिस-बन्दोबस्त प्रकट हो गया। उसी रात अचानक श्री महाजन ने स्थानीय ज़िम्मेदार पुलिस अधिकारी को टेलीफोन किया। उसमे उन्होंने पुलिस के पक्के बन्दोबस्त के लिए बधाई दी। पुलिस अधिकारी ने उन्हें चुनौती दी और कहा कि वे उन्हे हर हालत मे सत्याग्रह नही करने देंगे। यह भी कहा कि अगर आप कामयाब हो गए तो मैं 'पेशाब से मूंछ मुड़ा दूंगा।'

सत्याग्रह के समय के पहले ही चादनी चौक मे गहमागहमी चालू हो गई। भीड़ बढ रही थी। बहुत-से लोग मकानों और छतों पर नज़ारा देखने के लिए मोर्चा बांधकर बैठे थे।

ठीक समय के कोई ७-८ मिनट पहले भाई मतिदास चौक के समीप सत्याग्रहियों का पांच-पांच का जत्था प्रकट होने लगा। पुलिस उधर दौड़ी। उस तरफ जनता की भीड़ कम थी। पुलिस को अपनी कामयावी पर प्रसन्नता हुई कि चांदनी चौक मे आखिरकार सत्याग्रह नहीं ही करने दिया।

लेकिन ठीक समय इधर ईश्वरदास महाजन भारी संख्या में सत्याग्रहियों के साथ माला पहनकर नारा लगाते हुए ठीक चांदनी चौक मे श्रद्धानन्द की मूर्ति के सामने प्रकट हो गए। पुलिस हैरान थी। पुलिस-दबाव काफी कम था, सो तत्काल गिरफ्तारी नहीं हो सकी। नारेबाजी काफी समय तक चली। असल में हुआ यह था कि श्री महाजन ने आपातस्थिति में बढ़ाई हुई दाढ़ी

मुड़ा ली थी और वेश बदलकर काफी समय से आसपास की दूकानों में साड़ी खरीदने का नाटक कर रहे थे। अन्य सत्याग्रही भी किसी न किसी बहाने आस-पास अपने को व्यस्त बनाए हुए थे। ठीक समय पर श्री महाजन अपने स्थान पर पहुंचे और नारे का जवाब देते हुए सभी सत्याग्रही बिजली की तरह वहां गोलबन्द हो गए।

साधन एकत्र करना

छपाई, प्रचार, प्रवास आदि मदों में होने वाले खर्चों के लिए साधनों की जरूरत थी। साधनों का मिलना आम दिनों मे भी एक कठिन कार्य होता है। आपातकाल में तो इसमें ज्यादा कठिनाई थी। फिर भी कार्यकर्ताओं और भूमिगत कार्य के साथ सहानुभूति रखने वाले लोगों ने शक्ति-भर त्याग किया। इसके अलावा टाइप, साइक्लोस्टाइलिंग वगैरह बहुत-से कार्य सरकारी दफ्तरों में होते थे। आपातस्थिति के दौरान मैंने २२ पृष्ठ का जो पेपर लिखा, उसकी कॉपियां संसद भवन में टाइप हुई। वह भाई अंत मे वह कार्बन पेपर भी दे गया जिसके इस्तेमाल से कार्बन पर कुछ लाइनें पढी जा सकती थी और जिनके पकड़े जाने पर उसकी नौकरी तो जाती ही, गिरफ्तारी भी हो जाती।

भूमिगत आन्दोलन की कार्य-पद्धति के ये वर्णित मुद्दे सुसंगठित होने का आभास देते है, किन्तु सच्चाई यह है कि इसका धीरे-धीरे विकास हुआ। अनेक कार्यकर्त्ता पूरी तरह प्रशिक्षित न होने के कारण गिरफ्तार होते रहे। कदम-कदम पर गलतियों का मूल्य चुकाना पड़ा।

लेकिन इन सबके बावजूद भूमिगत आन्दोलन मोटे तौर पर व्यवस्थित, संगठित और नियोजित था। इसकी कार्य-पद्धति दिनोंदिन अधिक वैज्ञानिक व प्रभावी होती जा रही थी। यही कारण था, अन्तिम आठ महीनों में श्रीमती गांधी के अत्यधिक दबाव के बावजूद प्रशासन मोटे तौर पर भूमिगत आन्दोलन की गतिविधियों को बढने से रोकने में नाकामयाब रहा।

भेंट-वार्ताएं

श्री बापूराव मोघे से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका के बारे में भेंटवार्ता

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने भूमिगत आन्दोलन में अतुलनीय कार्य किया। यही कारण था कि श्रीमती गांधी ने आपातस्थिति लगाने से लेकर ७७ के चुनावों तक अपना मुख्य निशाना राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को ही बनाया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के खिलाफ रेडियो और टी० वी० पर प्रचार की आंधी चलाई गई। सघ के खिलाफ दर्जनों पुस्तिकाएं डी० ए० वी० पी० ने छपाकर लाखों की संख्या में वितरित कीं। गिरफ्तारियों का कहर भी मुख्यतया संघ पर ही ढाया गया। सरकार ने यह अच्छी तरह मान लिया था कि जे० पी० आन्दोलन और भूमिगत आन्दोलन दोनों को संघ के कार्यकर्ता ही चलाते रहे है। हालांकि संघ लोक-संघर्ष समिति का नियमित सदस्य नहीं था, फिर भी उसने अपनी पूरी ताकत से संघर्ष समिति के भूमिगत कार्यक्रमों को चलाया।

लोक-संघर्ष समिति में जो राजनैतिक दल थे, उनमें संगठन कांग्रेस और भारतीय लोकदल मूलतः महत्त्वपूर्ण व प्रभावी नेताओं और प्रत्याशियों के दल थे। गिरफ्तारियों के पहले चरण में ही अधिसंख्य लोग बन्दी बना लिए गए। समाजवादी पार्टी में यत्र-तत्र लड़ाकू कैडर था। उनमे से कुछ जाने-माने लोग बन्दी बना लिए गए और कुछ नेता और कार्यकर्ता भूमिगत हो गए। कैडर वाली पार्टी से जनसंघ के बहुतांश लोग गिरफ्तार किए गए लेकिन ज़्यादातर राज्यों में नेतृत्व की दूसरी पक्ति के लोग और लगभग आधे कार्यकर्त्ता भूमिगत हो गए। लेकिन संगठन कांग्रेस, जनसंघ, लोकदल और सोशलिस्ट पार्टी के बचे हुए लोग, जो लोक-संघर्ष समिति मे थे, इतनी संख्या में नही थे कि सारा भूमिगत आन्दोलन चला पाते।

यह ठीक है कि देश की लगभग तमाम जेलों में संघ के स्वयंसेवकों की ही

बहुतायत थी, लेकिन इसका एक दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि संघ के ९० प्रतिशत कार्यकर्त्ताओं को पुलिस तमाम कोशिशों और इनामी घोषणाओ के बावजूद गिरफ्तार नहीं कर सकी।

संघ के सरसंघचालक मा० बालासाहब देवरस ने प्रारम्भ में ही अपने को गिरफ्तार होने दिया। वे भूमिगत हुए ही नही। इनके अतिरिक्त संघ के किसी भी केन्द्रीय नेता को पुलिस अर्से तक गिरफ्तार नहीं कर सकी। अलबत्ता आपातकाल के उत्तरार्ध में दक्षिणांचल के प्रचारक श्री यादव राव जोशी को पुलिस ने पकड़ लिया। अर्थात् मा० माधवराव मुले, श्री मोरोपन्त पिंगले, श्री भाऊराव देवरस, श्री बापूराव मोघे, प्रो० राजेन्द्रसिंह, श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी, श्री शेषाद्रि आदि मे से पुलिस किसीको भी गिरफ्तार नहीं कर सकी। हालाकि ये सब देश-भर मे प्रवास करते रहे और भूमिगत आन्दोलन को संचालित व क्रियान्वित करते रहे।

संघ के प्रान्त-प्रचारकों, विभाग-प्रचारकों और ज़िला-स्तर के प्रचारकों को गिरफ्तार करने में भी सरकार को कोई खास सफलता नही मिली। ये सब भूमिगत आन्दोलन का कार्य करते रहे।

आपातस्थिति लागू होने के १५ दिन के अन्दर संघ ने केन्द्र से लेकर शाखा-स्तर तक अपना तंत्र पुनः ठीक-ठाक कर लिया। यहां तक कि दैनिक शाखाएं भी नियमित रूप से लगने लगीं। हालांकि उसका रूप बिलकुल बदल दिया गया। कहीं क्लब के रूप में, कहीं जागरण के रूप में, कहीं किसी खेल के बहाने, कहीं और किसी रूप में, लेकिन यह तो एक मिलने का बहाना होता था। असली कार्य तो भूमिगत आन्दोलन के कार्यक्रमों का क्रियान्वयन होता था। इन गतिविधियों के दौरान कभी-कभार कहीं कोई गिरफ्तारी हो जाती तो आगे के लिए अतिरिक्त सावधानी की सीख दे जाती।

भूमिगत आन्दोलन के सन्दर्भ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका के सन्दर्भ मे इस लेखक की संघ के अखिल भारतीय बौद्धिक प्रमुख श्री बापूरावजी मोघे से जो बातचीत हुई, उसे यहां संक्षेप मे दिया जा रहा है।

आपातकाल में लोक-संघर्ष समिति के भूमिगत आन्दोलन को संघ की ओर से पूर्ण सहयोग देने की केन्द्रीय ज़िम्मेदारी मा० माधवराव मुले, श्री मोरोपन्त पिंगले और श्री भाउराव देवरस पर थी। इसके क्रियान्वयन की मुख्य ज़िम्मेवारी श्री मोरोपन्तजी पर थी। इनके अलावा श्री बापूराव मोघे,,

श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी, प्रो० राजेन्द्रसिंह और श्री शेषाद्रि सारे देश में कार्य के संचालन में सहयोग कर रहे थे।

श्री बापूराव मोघे से जब इस लेखक ने इस दौरान आई निर्णय की महत्त्वपूर्ण घड़ियों के बारे में पूछा तो उन्होंने तीन ऐसे मौकों का ज़िक्र किया :

(१) आपातकाल में आए संकट मे पहला सवाल था कि संघ अपने पर प्रतिबन्ध और बाकी के सवालों पर अकेले लड़े या लोक-संघर्ष समिति के साथ मिलकर। विचार किया गया कि भले ही हम राजनीति में नहीं है, लेकिन इस संकट का चरित्र राष्ट्रीय है और इसलिए संघर्ष को हर सम्भव ढंग से सफल बनाने मे भरपूर सहयोग करना चाहिए। साथ ही यह फ़ैसला भी किया कि संघ लोक-संघर्ष समिति का नियमित सदस्य नहीं बनेगा।

(२) दूसरा महत्त्वपूर्ण निर्णय था सत्याग्रह का। कुछ लोनों का कहना था कि सत्याग्रह बेमानी है। यह सरकार सत्याग्रह की भाषा समझने वाली नहीं है। व्यर्थ मे एक लाख स्वयसेवकों को जेल भेज देना गलती होगी, लेकिन अन्ततः सत्याग्रह का निर्णय लिया गया। सोचा गया कि तानाशाही को प्रकट चुनौती देने से समाज से भय घटेगा, इसके विरोध मे देश का विरोध मुखरित होगा और लोकतंत्री चेतना बल पकड़ेगी।

(३) तीसरा, संघ के नेतृत्व में तो नहीं, लेकिन कैडर में बीच-बीच में कहीं-कही से यह लहर उठती थी कि इन शान्तिपूर्ण उपायों से श्रीमती गाधी मानने वाली नहीं है। बिना हिंसक विरोध के कोई रास्ता नहीं निकलेगा। इस प्रवृत्ति को देखकर नेतृत्व ने अहिंसक रास्तों में अपनी निष्ठा की पुनः घोषणा की और हिंसक रास्तों के बारे में 'लूज टाक' को हर जगह निरुत्साहित किया गया तथा और दूसरी तरह की चर्चाओं को पूरी तरह रोक दिया गया।

प्रश्न—सत्याग्रह मे सघ के कितने स्वयंसेवक जेल गए और सत्याग्रह के अलावा कितने लोग पकड़े गए ?

उत्तर—आपातकाल मे चलने वाली धर-पकड़ में संघ के कोई ३५,००० स्वयंसेवक पकड़े गए। सत्याग्रह करके जेल जाने वाले स्वयंसेवकों की सख्या करीब एक लाख होगी।

प्रश्न—संघर्ष की व्यापकता बढ़ाने के लिए संघ ने क्या प्रयास किए ?

उत्तर—अकाली दल, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी और द्रविड़ मुनेत्र कड्गम से लोकतंत्र की रक्षा के सवाल पर मिलकर काम करने का हमारा आग्रह रहा, और बाकी के दलों के अलावा इन्होंने भी काफी सहयोग दिया।

अकाली दल ने तो अपना सत्याग्रह चुनाव-घोषणा तक लगातार चलाया।

प्रश्न—क्या आपातकाल के एक साल गुज़र जाने के बाद पद्धति में कोई विशेष परिवर्तन करने की ज़रूरत समझी गई?

उत्तर—हमे लगा कि हो सकता है, यह संघर्ष हम जितना सोचते हैं, उससे भी अधिक लम्बा चले। इस दृष्टि से संघ ने तैयारी की। संघर्ष को कैडर से आगे बढाकर आम जनता तक पहुंचाने की प्राथमिक तैयारी हमने चालू की। विद्यार्थियों, किसानों, हरिजनों, मजदूरों, वनवासियों, व्यापारियों आदि में व्यापक पैमाने पर कार्य करने, इन वर्गों को भयमुक्त करके सामूहिक जागृति की तरफ बढाने और संगठित करने के विशेष प्रयास चालू किए। इसके लिए हमने हरेक वर्ग के लिए अलग-अलग प्रचार-साहित्य और पुस्तिकाओं का प्रकाशन और वितरण चालू किया। भूमिगत रूप से ही इन वर्गों मे पृथक् संगठनात्मक व्यवस्था चालू की। अभी इस जागरण-अभियान का प्रथम चरण ही चल रहा था कि चुनाव की घोषणा हो गई।

प्रश्न—चुनाव की घोषणा होगी, क्या आपको इसकी उम्मीद थी?

उत्तर—अभी होगी, यह तो हम नहीं सोचते थे, लेकिन देर-सवेर चुनाव श्रीमती गांधी को कराना पड़ेगा, यह हम पूरे विश्वास के साथ मानते थे। उस समय संगठन अच्छी अवस्था में हो, समाज जाग्रत् हो, इसकी तैयारी हम सतत करते रहे थे।

प्रश्न—समाज के जागरण की तैयारी आप किस-किम तरह से कर रहे थे?

उत्तर—एक ही रास्ता था—भूमिगत साहित्य। इसके लिए सामग्री जुटाना, साधन जुटाना, छपाना, विभिन्न केन्द्रों पर भेजना और उसकी समुचित वितरण-व्यवस्था करना इत्यादि। ऐसे पत्र संघ ने लोक-संघर्ष समिति के या किसी भी अन्य नाम से हरेक प्रान्त से निकाले। सरकार अन्त तक यह पता नहीं लगा सकी कि इसे कौन लिखता है या कहां छपती है और कैसे बंटती है?

प्रश्न—भूमिगत पत्रों की वितरण-संख्या क्या होती होगी?

उत्तर—आप इससे ही समझ सकते है कि केरल तक के भूमिगत पत्र 'कुरुक्षेत्र' की वितरण-संख्या ५५,००० थी। राजस्थान की साप्ताहिक बुलेटिन ८८ हजार प्रति सप्ताह तक छपी है।

प्रश्न—संघ के विरुद्ध सरकार ने आपातकाल के दौरान ज़बर्दस्त अभियान छेड़ रखा था। क्या आपने उसका प्रत्युत्तर दिया?

उत्तर—संघ ने उनके जवाब में ३२ पुस्तिकाएं छापी। इनमें से कोई भी

पुस्तिका एक लाख से कम नही छापी गई। इन पुस्तिकाओं में सघ पर सरकार द्वारा लगाए गए आरोपों के उत्तर थे। कुछ पुस्तिकाओं में संघ की विचारधारा के विभिन्न पहलुओं पर जोर डाला गया था।

प्रश्न—भूमिगत आन्दोलन की एक लड़ाई विदेशों में प्रचार के धरातल पर लड़ी जा रही थी।

उत्तर—प्रारम्भ मे ही संघ ने अपने कुछ वरिष्ठ कार्यकर्त्ताओं को विदेशों में भेज दिया था। वे वहा पर रहने वाले स्वयसेवकों की मदद से दूतावासों द्वारा किए गए प्रचार का मुकाबला करते थे। इनमें प्रो० स्वामी, मकरन्द देसाई और दूसरे स्टेज पर केदारनाथ साहनी भी थे।

प्रश्न—भूमिगत आन्दोलन के दौरान आप कहां-कहां गए ?

उत्तर—दिल्ली के केन्द्र की कुछ अधिक महत्ता होने के कारण यह उचित समझा गया कि संघ का कोई ज़िम्मेदार आदमी दिल्ली मे अवश्य रहे। कई बार तात्कालिक निर्णयों की जरूरत होती थी। मुझे दिल्ली मे रहने को कहा गया था। मेरी कोशिश भी यही रहती थी कि मैं ज़्यादा से ज़्यादा समय दिल्ली रहूं। फिर भी योजना के अनुसार मैंने सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश, पंजाब, हिमाचल, हरियाणा, राजस्थान, आन्ध्र और तमिलनाडु का विस्तृत प्रवास आपातकाल में किया।

प्रश्न—दिल्ली मे केन्द्रीय सत्ता का बड़ा भारी दबाव था और प्रवास और कार्यक्रम के सिलसिले काफी एक्सपोज़ होने की गुंजाइश रहती है। जब नानाजी देशमुख पकड़ लिए गए, तो पुलिस को यह पक्का भरोसा नही था कि पकड़ा गया आदमी 'नाना देशमुख' ही हैं। इसलिए उन्होंने पुलिस एलबम निकालकर फोटो का मिलान किया था। नानाजी के साथ जिन कुछ लोगों के फोटो एलबम में चिपके थे उनमें आपका भी चित्र था। पूछताछ के दौरान भी आपका नाम आया था। शाम को एडवोकेट अप्पा घटाटे जब नानाजी से मिलने गए तो वहां उपस्थित पुलिस अफसर मराठी-भाषी नही था। अतः नानाजी ने सारी बातचीत मराठी में की। उन्होंने और बातों के अलावा आपको जल्दी से जल्दी दिल्ली छोड़ देने को कहा था। पुलिस ने वहां टेपरेकार्डर लगा रखा था। वे सारी सूचनाएं सरकार के पास पहुंच गईं। ७ बजे तक दिल्ली से बाहर जाने के तमाम रास्तों पर नाकेबन्दी हो गई थी। फिर भी आप दिल्ली छोड़कर क्यों नहीं गए ?

उत्तर—मुझे यह सूचना मिली थी। नानाजी ने मराठी में बातचीत की थी। वहां उपस्थित पुलिस अफसर मराठी नहीं समझता था। टेप की शंका

मानते हुए भी नानाजी ने मराठी मे बात करके कुछ सूचनाएं भेजने का सुविचारित खतरा उठाया था। मुझे जब सूचना मिली तो उसके पहले टेप किए जान और मराठीभाषी व्यक्ति के जरिये पूरी बातचीत के सरकार के पास पहुंच की सूचना भी मिल गई थी। यह भी पता लग गया था कि दिल्ली से बाहर निकलने के सभी रास्तों पर पूरी नाकेबन्दी कर दी गई है। मैंने दिल्ली मे ही रहने का फैसला किया। सिर्फ अपना ठिकाना बदल लिया।

पकड़ मे नहीं आने का एक ही कारण मानना चाहिए कि मैंने भूमिगत जीवन और गतिविधियों की आचारसंहिता का पूरी कड़ाई से पालन करने की कोशिश की।

श्री जगदीश प्रसाद माथुर से भेंट-वार्ता

श्री जगदीश प्रसाद माथुर (भारतीय जनसंघ के मंत्री) उन नेताओं में थे जो आपातकाल के शुरू से लेकर अंत तक भूमिगत कार्य को लेकर संपूर्ण उत्तर भारत मे सक्रिय रहे हैं। मीसा वारंट उनके पीछे घूमता रहा। उन्हें पकड़ने के इनाम बढ़ाए जाते रहे, लेकिन पुलिस उन्हें पकड़ने में कामयाब नहीं हो सकी।

जब विश्व-प्रसिद्ध स्तंभ लेखक जैक एण्डरसन ने श्री जगदीश प्रसाद माथुर के हवाले से भारत के भूमिगत आंदोलन की खबरे देनी प्रारम्भ कीं, और सैकड़ों पत्रों मे छपने वाले उस स्तंभ के माध्यम से पश्चिमी दुनिया में भूमिगत बगावत का ब्योरा सामने आने लगा तो श्रीमती गांधी की परेशानी बढ़ी। पुलिस को जानकारी मिली कि विदेशों में हो रहे प्रचार का नियोजन हिन्दुस्तान में बैठा यह आदमी (जगदीश प्रसाद माथुर) कर रहा है। तब श्री माथुर पर पुलिस-दबाव बढ़ने लगा। मगर इससे श्री माथुर की गतिविधियों मे कोई अंतर नहीं आया। अलबत्ता उन्होंने कुछ अधिक सावधानियां बरतनी प्रारंभ कर दीं।

इस लेखक को श्री जगदीश प्रसाद माथुर के साथ काम करने का अवसर पूरे आपातकाल के दौरान (जेल-जीवन को छोड़कर) मिला। श्री माथुर ने विदेशी प्रचार के लिए थ्री टायर तंत्र बनाया था। एक तो दिल्ली स्थित विदेशी पत्रकारों या भारत में आनेवाले विदेशी पत्रकारों को भूमिगत आंदोलन के समाचार मुहैया कराके, दूसरे सीधे विदेशी पत्रों की अन्तर्राष्ट्रीय संचार-व्यवस्था का इस्तेमाल करके; इसके लिए विदेशी यात्रियों के द्वारा वे भारत से बाहर डाक डलवाया करते थे; तीसरे विदेशों में कार्यरत भारतीय बंधुओं के संगठनों अथवा व्यक्तियों और प्रो० सुब्रमण्यन स्वामी और श्री केदारनाथ साहनी जैसे

लोगों को, जो इसी मिशन पर गए, लगातार भूमिगत आंदोलन के बारे में प्रचार-सामग्री भेजकर।

मुझे स्मरण है, जब आपातस्थिति लागू हुए कुछ हफ्ते ही हुए थे 'न्यूज़वीक' के श्री जैक लेजली भारत आए थे और किसी वरिष्ठ भूमिगत नेता से मुलाकात करना चाहते थे और मैंने उनकी मुलाकात श्री माथुर से आयोजित की थी। उस भेंट-वार्ता की और बातों के अलावा एक पंक्ति मुझे खास तौर से याद है जो उन्होंने लेजली को कही थी—"मैं आज जब भूमिगत रहकर कार्य कर रहा हूं मनोवैज्ञानिक तौर पर अपनी उम्र दस साल कम अनुभव कर रहा हूं।" वैसे श्री माथुर की उम्र ५१ वर्ष की है। आपात काल मे यह पहला मौका था जब कोई विदेशी पत्रकार किसी भूमिगत नेता से मिल पाया था। जब चुनाव की घोषणा हुई तब भी श्री माथुर के नाम वारंट कायम था। इसलिए वे प्रकट नहीं हुए। यहा तक कि घोषणा के बाद जनसंघ कार्य समिति की पहली बैठक में भी भाग लेने नहीं गए। लेकिन जब भूमिगत नेता श्री कर्पूरी ठाकुर गिरफ्तार होकर छूट गए, तब किसी कार्य से कुछ और नेताओं के साथ कुछ स्थानीय मामलों को लेकर सीधे दिल्ली के आई० जी० श्री भवानीमल से मिलने गए। असल में वे यह परीक्षा करने भी गए थे कि उनको गिरफ्तार किया जाने वाला है कि नहीं। श्री भवानीमल इस व्यक्ति को देखकर चकित थे कि जो पूरे १६ महीनों तक पकड़ में नही आया आज ठीक उनसे हाथ मिलाने के लिए हाथ बढा रहा था। चुनाव-परिणाम के विपरीत आने की संभावना अभी समाप्त नहीं हुई थी और वे आवश्यकता पड़ने पर पुन: भूमिगत हो जाने की पूरी तैयार स्थिति में थे। इस पुस्तक के सन्दर्भ मे उनसे हुई बातचीत इस प्रकार है :

प्रश्न—वह कौन-सा गुर था जिसके कारण आप एक प्रमुख भूमिगत नेता होने और सक्रिय रहने के बावजूद पुलिस की पकड़ में नहीं आए ?

उत्तर—वेश बदलकर रहना, कुछ लोगों को छोड़कर अपना अता-पता किसीको नहीं बताना, जिनसे सम्पर्क रखना उन्हें भी आवश्यकता से अधिक जानकारी नही देना, हमेशा चौकस रहना, दूसरे दर्जे में यात्रा करना, दुस्साहसिक यात्राओं, मुलाकातों और कार्यों से बचना आदि। संगठन की सावधानी के कारण ही मैं बचा रहा। मैं यह भी मानता हूं कि यह संयोग ही है कि मैं बचा रहा। मुझसे अधिक सावधानी रखने वाले पकड़े गए। इसमें मेरा अपना कोई वैशिष्ट्य रहा होगा, ऐसा मैं नहीं मानता। सर्वाधिक श्रेय तंत्र को है।

प्रश्न—भारत में आपातकाल में जो भूमिगत आन्दोलन चला उसके चरित्र की तुलना विश्व के दूसरे देशों में हुए भूमिगत आन्दोलन से किस प्रकार करते है ?

उत्तर—भारत में चला भूमिगत आंदोलन का चरित्र दूसरे देशों के भूमिगत आन्दोलनों से बिलकुल जुदा था। एक तो भारतीय समाज का चरित्र उस प्रकार से बगावती नही है जैसा कुछ अन्य देशों का है। हमारी परम्परा अहिंसक रही है। खास तौर से विगत १०० वर्षो से भारतीय राजनीति का भारत की जनता और संगठनों पर एक विशेष संस्कार पड़ा है। इसलिए यह भूमिगत आन्दोलन अपने-आप मे अपने प्रकार का अकेला उदाहरण है, व्यापकता की दृष्टि से, चरित्र की दृष्टि से और उपलब्धि की दृष्टि से। गांधीजी के आन्दोलनों और विदेशों में चले भूमिगत आन्दोलनों के बीच का चरित्र था इसका। चेतना और संस्कार की दृष्टि से यह गांधीवादी था। तंत्र और तकनीक की दृष्टि से यह उससे कहीं आगे था। कुछ कुछ अर्थों में सशस्त्र भूमिगत क्रान्ति की तकनीक की छाप उसपर थी, हालांकि उसकी अहिंसक चेतना बिलकुल बरकरार रखी गई।

प्रश्न—इस भूमिगत आन्दोलन की मुख्य विशेषताएं आपके अनुसार क्या-क्या थीं।

उत्तर—एक तो जैसाकि मैंने पहले भी कहा, इसका चरित्र अहिंसक था। दूसरे, नौजवानों का उसमें ज़बरदस्त योगदान रहा। तीसरे, यह शहरों से लेकर देहातों तक फैला हुआ था। चौथे, इसने अपना संचारतंत्र विकसित कर लिया था। पांचवें, इसका अधिष्ठान राष्ट्रवादी था और इसने किसी भी सरकारी, गैर सरकारी विदेशी शक्ति का कोई सहयोग नहीं लिया, जबकि भूमिगत क्रान्ति करने वाले प्राय: विदेशी मदद के मोहताज होते है।

प्रश्न—क्या इस दौरान कुछ खास निर्णय की घड़ियां उपस्थित हुई ?

उत्तर—एक सवाल था कि प्रो० स्वामी को विदेश भेजा जाए या कि नहीं। भेजने के अपने खतरे थे। न भेजने के नुकसान थे। पश्चिम के लोकतंत्री जनमत का अपना एक महत्त्व था। इस दृष्टि से प्रो० स्वामी को बाहर भेजने का फैसला किया गया।

सत्याग्रह करने और उसे वापस लेने के निर्णय भी ऐसे ही महत्त्व के निर्णय थे। सत्याग्रह करने और उसे वापस लेने के निर्णय काफी लम्बे विचार-विमर्श के बाद लिए गए।

प्रश्न—इस पूरे भूमिगत काल में क्या कुछ निराशा की घड़ियां भी आईं ?

उत्तर—मैं उसे निराशा की घड़ी नहीं मानता, लेकिन हां, संघर्ष के लम्बे होने के बारे में सोचने पर और जेल मे पड़े कार्यकर्ताओं के बारे में सोचकर मन कुछ भारी हो जाता था। ऐसे कार्यकर्ताओं के परिवार में भुखमरी की स्थिति हमने हर हालत से रोकी। इन परिवारों की नियमित मदद चलती रही। गिरफ्तारियों से. जेलों मे हुई मौतों और कार्यकर्ताओं की आर्थिक दुरावस्था के कारण दुखी होने के मौके अक्सर आते थे।

प्रश्न—क्या ऐसे समय में श्रीमती गांधी से बातचीत या समझौता होना चाहिए, इस तरह की कोई बात आप लोगों के मनों में नहीं आई ?

उत्तर—समर्पण या समझौते की चाह हमारे मनों में रंचमात्र भी नहीं आई। अलबत्ता बातचीत के बारे में हमारे मानस में कोई अवरोध नहीं था। लेकिन हम बातचीत के लिए भी उत्सुक नहीं थे न ही हमने कोई पहल की। श्रीमती गांधी ने भी कोई पहल की, इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है। आपसे तो उन दिनों भी मेरी बातचीत होती रहती थी। आप उन दिनों की मेरी मनस्थिति जानते है।

प्रश्न—जो कुछ राजनीतिक परिवर्तन हुआ है, उससे आप भूमिगत आन्दोलन का कितना योगदान मानते है ?

उत्तर—मैं यह मानता हूं कि अगर भूमिगत आन्दोलन न चलता, व्यवस्थित रूप से प्रचारतंत्र न चलता और जनता को एकतरफा सरकारी प्रचार का शिकार होने दिया जाता, इतना बड़ा सत्याग्रह न होता, जिसमें एक लाख लोग जेलों में गए और इससे भूमिगत आन्दोलन की शक्ति का प्रदर्शन न होता, तो जनता पार्टी को समाज की वैसी स्वागतपूर्ण राजनीतिक मानसिकता नहीं मिलती और उसका सफल होना मुश्किल होता।

प्रश्न—आपके ख्याल से कितने लोग भूमिगत कार्य में जुटे रहे ?

उत्तर—जो अंडरग्राउंड रहे और वारंट उनका इंतजार करता रहा, पुलिस उनको तलाशती रही, ऐसे लोगों की संख्या कम से कम दस हजार होगी। लेकिन जो भूमिगत आन्दोलन में पुलिस की नजरों को बचकर लगातार सक्रिय योगदान करते रहे, भले ही उनके वारंट नहीं थे, ऐसे लोगों की संख्या लाखों में है, इनमें कई तरह के लोग है और उन सबका बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान है।

इनमें मैं उन तमाम लोगों को सम्मिलित करता हूं जिनके यहां ये भूमिगत

कार्यकर्त्ता रहते थे, जिनसे आर्थिक मदद मिलती थी, जो प्रचारतन्त्र के संचालन में योगदान करते थे, जो सूचना के आदान-प्रदान के माध्यम थे, जो गुप्त सरकारी सूचनाए देते थे, जिन्होंने वाहन दिए, अर्थात् किसी न किसी तरह भूमिगत आन्दोलन की मदद करने वाले सक्रिय लोगों की सख्या कई लाख होगी। आप केवल इस एक तथ्य से इस संख्या का अदाज लगा सकते है कि दस हज़ार भूमिगत कार्यकर्ता १९ महीनों में जिन मकानों में ठहरे होंगे, इनकी संख्या एक लाख से ऊपर होगी।

लेकिन इन दस हजार पूर्णकालिक भूमिगत कार्यकर्ताओं के अलावा लगभग इतने ही सक्रिय रहने वाले लोग, जो स्थूल अर्थ मे भूमिगत नही थे, पर जिनकी गतिविधिया गुप्त रूप से चलती थी, इनकी सख्या लगभग पचास हज़ार होगी।

श्री केदारनाथ साहनी से भेंट-वार्ता

प्रश्न—आप इतने सक्रिय रहते हुए और जनता के इतने जाने-पहचाने चेहरा होने के बावजूद पकड़े नहीं जा सके, इसका क्या राज है ?

उत्तर—जब एक बार संगठन ने तय कर दिया कि नहीं पकडा जाना है, तो इसके लिए हर सम्भव सावधानी बरती। मैने धोती-चोले के बजाय पेंट-बुश्शर्ट पहनना चालू किया था, ताकि आम लोगों से अलग नहीं दिखूं। बाकी दाढी-मूंछ बढाने जैसी कोई बात मैंने नही की थी। दिल्ली में मैं दिन को नहीं निकलता था। सिर्फ ज़रूरी लोगों से मिलता था। छद्म नाम से यात्रा करता था। यात्रा मे रेलवे स्टेशन, एरोड्रोम वगैरह पर विशेष सतर्क रहता था। कार से यात्रा करते समय अक्सर किसी न किसी परिवार को साथ रखता था।

प्रश्न—आपके ज़िम्मे मुख्य रूप से क्या काम था ?

उत्तर—सारे देश में प्रवास करना। 'लाइन ऑफ कम्युनिकेशन' को चालू हालत में रखना। साधनों की व्यवस्था करना—मुख्य रूप से मेरे ज़िम्मे यही कार्य था।

प्रश्न—साधनों के बारे में आपका कैसा अनुभव रहा ?

उत्तर—बहुत पैसे वालों से भूमिगत आन्दोलन को शायद ही कोई मदद मिली हो। हमने कोई सम्पर्क भी नहीं किया, क्योंकि वे प्राय: सरकार के साथ प्रतिबद्ध थे। मध्यवर्ग, वेतनभोगी और व्यापारी वर्ग से प्राय: हमे अच्छी मदद मिली। लेकिन संघ के कार्य के साथ वैचारिक सम्बन्ध रखने वाले लोगों ने ताकत से ज़्यादा बोझ उठाया।

प्रश्न—संगठनात्मक बैठकों में आप क्या मुख्य विषय रखते थे ?

उत्तर--मुख्य रूप से नैतिक साहस बनाए रखने का प्रयास रहता था। वस्तुस्थिति की जानकारी देता था कि दमन के बावजूद हमारा सगठन यथावत् चल रहा है। हम तैयारी करते रहे। अवसर आएगा। अवसर आने पर उसका लाभ उठाने की हमारी पात्रता चाहिए। जनसम्पर्क करे। जो जेलों मे है, उनके घरवालों की खोज-खबर ले। उनकी यथाशक्ति मदद करे। ताकि जेल के अन्दर बन्द लोग तसल्ली से रहे कि हमारे परिवारों की चिन्ता समाज कर रहा है।

प्रश्न—अपने भूमिगत प्रवास मे क्या आप कुछ अन्य प्रमुख लोगों से मिलते थे ?

उत्तर—मैं प्राय: संघ और जनसंघ के कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त जहां मौके मिले, वहां अन्य पक्षों के भूमिगत लोगों से भी मिलता था। यहां तक कि सरकारी कांग्रेस के कुछ मित्रों से भी मिला। पत्रकारो-साहित्यकारों से भी अकेले-अकेले मिलता था।

प्रश्न--आप अन्त तक नहीं पकड़े गए, इसका श्रेय किस बात को है ?

उत्तर—न पकड़े जाने का श्रेय संगठन को है, जो सारी व्यवस्था बड़ी कुशलता से करता था। ४-५ लोगों की उस टीम को है, जिनके साथ मैं काम करता था। देश के हर जोन मे एक प्रमुख व्यक्ति नियुक्त था, जिनमें आपके परिचित लखनऊ के श्री अश्विनीकुमारजी भी है। इसी तरह कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई, अहमदाबाद आदि केन्द्रों और आसपास के प्रान्तों के लिए एक-एक व्यक्ति नियुक्त था।

प्रश्न—क्या कभी ऐसा हुआ कि आप पुलिस की पकड़ में आते-आते बच गए हों ?

उत्तर—ठीक ऐसा तो नही कह सकता, लेकिन हां, इस तरह की कुछ घटनाएं घटी थी। ग्रेटर कैलाश, साउथ एक्सटेंशन और वसन्त विहार, इन तीन कॉलोनियों में ऐसी आशंकाए हुई। अचानक पता चला कि मेरे वहां होने की जानकारी पुलिस को हो गई है। बतौर सावधानी के हमने स्थान बदल लिया।

प्रश्न—क्या कभी आपको ऐसा भी अनुभव हुआ कि कुछ पुलिस के लोग भी भूमिगत आन्दोलन से सहानुभूति रखते है ?

उत्तर—सहानुभूति कहे या नहीं, यह अलग बात है, लेकिन एक बार एक पुलिस अधिकारी ने अपने-आप कोई सूत्र ढूंढकर मुझे सूचना भेजी कि मैं पुरानी दिल्ली से नई दिल्ली को मिलाने वाली उस सड़क के अक्सर निकलता हूं, यह

आशंका कुछ पुलिस अफसरों को है। अब इस सड़क का इस्तेमाल मैं न करूं, यह सुझाव भी भेजा।

प्रश्न—आप हिन्दुस्तान से बाहर कब गए और कहां-कहां गए ?

उत्तर—वैसे तो जनवरी, १९७६ में ही जाना था, लेकिन देश के अन्दर के कुछ कार्यों का दबाव ज़्यादा था। अतः मैं सितम्बर, १९७६ में गया। मै पहले भी उन देशों में विशेष रूप से गया हूं, जहां भारतीयों की संख्या अच्छी है। इन देशों मे रहने वाले भारतीयों के साथ मेरे सम्बन्ध भी थे। इस बार मैं मलयेशिया, थाईलैंड, सिंगापुर, मारीशस और केनिया होता हुआ इंग्लैंड गया।

प्रश्न—विदेशों में कार्य करते समय आपने किन विधि-निपेधों का पालन किया ?

उत्तर—मुख्य रूप से तीन निषेध निश्चित थे—

(क) दूसरे देश के सरकारी व्यक्ति से बात नहीं करना। (ख) विदेशी शक्ति से किसी प्रकार का सहयोग नहीं लेना। (ग) विदेश में कोई पैसे की मदद करना भी चाहे तो स्वीकार नहीं करना।

प्रश्न—विदेशों मे भारतीय तानाशाही के चरित्र को उजागर करने के प्रयासों मे आपको क्या अनुभव आया ?

उत्तर—हमारे दूतावासों ने श्रीमती इन्दिरा गांधी की छवि बनाने के लिए करोड़ों रुपये खर्च किए, लेकिन इसके बावजूद प्रो० स्वामी और मकरन्द देसाई जैसे व्यक्तियों और फ्रेंड्स ऑफ इंडिया सोसायटी और इंडियन्स फॉर डेमोक्रेसी जैसी संस्थाओं के प्रयास से सरकारी प्रचार का प्रभाव क्षीण हो गया। देश से बाहर के भारतीयों ने खूब सहयोग दिया। यद्यपि शुरू-शुरू में उनमें से अधिकांश सरकारी प्रचार का शिकार होने के कारण कटु होते थे। 'आप यहां क्या कर रहे हैं ? क्या यह देशद्रोह नहीं है ?' आदि प्रश्नों से हम लोगों का स्वागत होता था, परन्तु बाद में न केवल यह कटुता नहीं रही, बल्कि लोग हर तरह का सहयोग देते थे।

आपातस्थिति के तुरन्त बाद से भारत सरकार अपने दूतावासों, राजदूतों एवं समाचार द्वारा जे० पी० और विरोधी दलों तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को बदनाम करने पर पूरा बल लगा रही थी। सारा यत्न यही था कि ये सब देश में खून की नदियां बहाने, प्रधानमंत्री आदि की हत्या करके, सेना-पुलिस को 'बगावत' के लिए उकसाने और 'चुनी हुई' सरकार को हिंसा से उखाड़ पटकना चाहते हैं। मानो इन्दिरा सरकार ने आपातस्थिति की घोषणा कर भारत और

यहां के प्रजातन्त्र की रक्षा की है और देश को बचा लिया है। विभिन्न देशों में बसे भारतीयों पर भारत के ही समान आतंक जमाने का पूरा यत्न था। उनके पासपोर्ट ज़ब्त करने अथवा भारत लौटने पर स्वयं उनको भुगतना पड़ेगा अथवा उनके यहां रहने वाले सम्बन्धियों पर क्या बीतेगी—ये भय दिखाकर लोगों पर धौंस जमाई गई। प्रचार के लिए दूतावासों में नये-नये प्रकाशन करके अथवा भारत में डी० ए० वी० पी० द्वारा प्रकाशित सामग्री भारी संख्या में बांटी गई। भारत से मंत्रियों—ओम मेहता, धर्मवीर सिन्हा, यशवन्तराव चव्हाण, गोखले, बरुआ के दौरे करवाए गए। राजदूतों द्वारा विभिन्न कार्य-क्रमों में श्रीमती 'इन्दिरा' की छवि सुधारने की कोशिश की गई।

हमारा यत्न इस प्रचार का खण्डन करने का तथा उधर बसे भारतीयों को भारत की वस्तुस्थिति से जानकार करने का था। इसके लिए व्यक्तिगत सम्पर्क, जनसभाएं, प्रेस-सम्मेलन, रेडियो-वार्ता और टी० वी० साक्षात्कार आदि साधनों का उपयोग किया गया। कांफ्रेंस की गई। हर सभा के बाद 'प्रश्नोत्तर' का समय होता था। मानव-अधिकारों पर बल रहता था। सरकार द्वारा बोले गए झूठ के बारे में सही जानकारी दी जाती थी। छोटी-छोटी अनेक पुस्तकें व 'सत्यवाणी', 'स्वराज्य' पत्रों के प्रकाशन से विशेष लाभ हुआ। भारत में छपने वाली बुलेटिनें, 'सत्य समाचार' आदि से तथ्य मालूम होते थे। जे० पी० के टेप भाषण काम में लिए गए। आपातस्थिति से पहले जे० पी० पर बनी एक फिल्म भी कुछ जगहों पर दिखाई गई।

हमारा बल इस बात पर था कि विदेश के लोगों की समझ में आए कि भारत में प्रजातंत्र के नाम पर तानाशाही है और इन्दिराजी झूठ बोल-बोलकर मात्र अपनी कुर्सी बचाने के लिए सारे देश को दबाकर रख रही हैं। वास्तव में आपातकाल के लिए कोई कारण ही नहीं थे। श्री संजय को दिया जाने वाला महत्त्व, बिना मुकदमा चलाए बड़ी संख्या में लोगों को बन्दी बनाना, समाचार-पत्रों का गला घोंटना, जजों को दबाने का सरकारी यत्न, अन्य अत्याचार, जबरिया नसबन्दी आदि मुद्दों पर तथ्यों के साथ रखी गई बातें और फिर अकाट्य तथ्यों से सरकारी झूठे प्रचार का खण्डन हुआ।

प्रश्न—क्या आपको आत्मविश्वास था कि तानाशाही को पराजित किया जा सकेगा?

उत्तर—कभी भी यह नहीं लगा कि इन काले दिनों का अन्त नहीं होगा। पहले दिन से यह विश्वास था कि संघर्ष लम्बा है, कष्ट होंगे, परन्तु सत्य की

जीत अवश्य होगी। हर बैठक मे अपने बन्धुओं से यही कहता था कि धैर्य रखो, दम साधो, दम टूटने न पाए। पहले दांव में हम नीचे जरूर आ गए है, परन्तु यदि हमने धैर्य नही छोड़ा और दम नही तोडा तो अवसर आते ही हम लोग ऊपर आ सकेंगे। प्रश्न इतना ही है कि उस समय हमने उस अवसर का लाभ उठाने के लिए शक्ति बचा रखी होगी अथवा नही।

प्रश्न—क्या ऐसे प्रसग आए जब आप बहुत दुखी हो गए हों ?

उत्तर—अवश्य कुछ ऐसे प्रसग आए है, जब भावनामय हो उठता था। कुछ बन्धुओं की मृत्यु का समाचार उद्विग्न कर देता था। दिल्ली के श्री तिलकराज नरूला, श्री बैजनाथ कपिल, श्री मोहनलाल जाटव की मृत्यु और उस अवसर पर भी उनके लड़के को पैरोल पर रिहा न करना, नागपुर के श्री क्षीरसागर और सहारनपुर के श्री बिशनस्वरूप की मृत्यु का समाचार, जालन्धर के सरदार वतनसिंह, कलकत्ता के श्री भवरलाल आदि की मृत्यु से मन बहुत उद्विग्न हो उठा था।

कुछ लोगों के पकडे जाने से भी थोड़ी देर के लिए मन पर असर हुआ—सर्वश्री नानाजी देशमुख, रवीन्द्र वर्मा, यादवराव जोशी, मदनलाल खुराना, धनराज ओझा के बन्दी होने पर विशेष रूप से।

अनेक बन्दी बन्धुओं के घर की परिस्थिति देखकर और जेलों में उनका दृढ़ मनोबल देखकर भी मन द्रवित हो उठता था। भूमिगत बन्धुओं की सम्पत्ति कुर्क कर लेने तथा उनके परिवारों पर होने वाले कष्ट के समाचार भी मन पर थोड़ी देर के लिए असर करते थे, परन्तु इतने बडे संघर्ष मे यह सब होता ही है, यह मानकर पहले से भी अधिक काम करने का संकल्प करता था। डा० स्वामी की पत्नी के चारों ओर विचित्र ढंग से पुलिस लगा रखी थी। उन लोगों के समाचार पाकर जिनकी नौकरियां छूट जाने के कारण उनके पास जीवन-निर्वाह का कोई साधन नहीं था, ऐसी जानकारी भी बहुत परेशान करती थी। परन्तु बड़े संघर्ष की इन अनिवार्य स्वाभाविकताओं से संकल्प को ज़्यादा मजबूत करने की कोशिश करता था।

प्रो० सुब्रह्मण्यन स्वामी

प्रो० स्वामी भूमिगत आन्दोलन के ऐसे चमत्कारी व्यक्तित्व हैं, जिन्हें भारत की दूसरी आजादी के इतिहास मे वही दर्जा मिलेगा, जो पहली आज़ादी में सुभाषचन्द्र बोस को मिला। आपातस्थिति लागू होते ही

वे भूमिगत हो गए। यहा भूमिगत आन्दोलन की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि और रण-नीति बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक सघ के निर्णय करने पर भारत सरकार की पूरी सावधानी बरतने के बावजूद वे भारत से बाहर निकल गए। कई महीने तक विश्वव्यापी प्रचार-अभियान चलाया और श्रीमती गांधी की तानाशाही की कलई खोलकर रख दी। श्रीमती गांधी ने इस प्रचार का मुकाबला करने के लिए अनेक केन्द्रीय नेताओं को विदेश भेजा, लेकिन स्वामी द्वारा चलाई गई आधी मे इन मंत्रियों की बोलती बन्द हो गई और वे नाकाम होकर लौट आए। श्रीमती गांधी ने उन्हें किसी तरह भी पकड़ने के लिए एक पूरी टीम भेजी, लेकिन टीम के रवाना होने के पहले राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ के सूत्रों से उन्हें उसकी पूरी जानकारी मिल गई और वे सचेत हो गए। उनपर भारतीय दूतावास द्वारा जब क़ातिलाना हमला कराया गया, तब वे पूरी तरह सतर्क थे और बच गए। इधर संसद मे ६ महीने अनुपस्थिति पूरी होने को थी। उन्होंने संघ के अधिकारियों से संसद में उपस्थित होकर और बच निकलने की योजना रखी। संघ के अधिकारी इस खतरे के लिए पहले सहमत नहीं थे। प्रो० स्वामी ने अपनी योजना बताते हुए पूरे आत्म-विश्वास के साथ संघ-अधिकारियों को कहा कि मुझे इसमे ५ प्रति-शत से ज़्यादा खतरा नहीं लगता। अगर मैं बच निकलता हूं तो भूमिगत कार्यकर्ताओं के साहस और आम जनता के आत्मविश्वास पर भारी असर पड़ेगा। सरकार को एक जोरदार धक्का लगेगा।

प्रो० स्वामी के भारत आने की भनक सरकार को लग गई। उसने पूरी सावधानी बरती, पर इसके बावजूद वे यान से भारत में घुस आए। ससद मे गए, अपनी उपस्थिति बताई और संसद से बचकर निकल गए। सरकार हाथ मलती रह गई। वे फिर हिन्दुस्तान से बाहर चले गए और तानाशाही के विरुद्ध व्यापक प्रचार-अभियान मे जुट गए। चुनाव घोषित होने पर वे इसी तैयारी से भारत की धरती पर घोषित तौर पर आए कि उन्हे गिरफ्तार भी किया है जा सकता है। हिन्दुस्तान की जनता ने उनको सिर-आखों पर बैठा लिया।

उन दिनों जनवाणी ने उनके अगमन का जो ब्यौरा लिखा था, वह इस प्रकार है :

"जनसंघ संसद सदस्य सुब्रह्मण्यन स्वामी का एकाएक ससद में आना और गिरफ्तार करने की तमाम सरकारी कोशिशों के बावजूद बच निकलने की चमत्कारपूर्ण घटना आज आश्चर्य का विषय बनी हुई है। जहां आम जनता

इस घटना की तुलना सुभाषचन्द्र बोस और वीर सावरकर की ऐतिहासिक घटनाओं से कर रही है, वहां कम्युनिस्ट और सरकारी क्षेत्रों मे भारी क्षोभ व्याप्त है।

" प्रो० स्वामी की इस घटना पर कम्युनिस्ट नेता श्री इन्द्रजीत गुप्ता ने व्यंग्यपूर्वक निम्न विचार रखे—हमारी सरकार अरबों रुपये पुलिस-प्रशासन पर खर्च करती है, लेकिन पुलिस किस कदर नाकामयाब हुई है, यह प्रो० स्वामी की घटना से समझा जा सकता है। आपातस्थिति के तुरन्त बाद से सरकार प्रो० स्वामी को गिरफ्तार करने की कोशिश करती रही। प्रो० स्वामी भूमिगत रहकर सरकार के खिलाफ काम करते रहे। सरकार की हर सम्भव कोशिश के बावजूद यह व्यक्ति हिन्दुस्तान से (नियमित पासपोर्ट) से निकल गया। विदेशों मे भारतीय दूतावासों के भरपूर प्रयासों के बावजूद यह व्यक्ति आपात-स्थिति के खिलाफ अन्तर्राष्ट्रीय आयोजन करता रहा। आपात स्थिति की तमाम सावधानियों के बावजूद प्रो० स्वामी हिन्दुस्तान आ गए। इतना ही नहीं, जहां बिना सरकारी इच्छा के परिन्दा भी नहीं घुस सकता, उस संसद में प्रो० स्वामी अचानक उपस्थित हुए और सिर्फ घुस ही नही गए, बल्कि ओम मेहता (गृह मंत्रालय के राज्यमंत्री) के देखने और गिरफ्तार कर लेने की हिदायतों के बावजूद प्रो० स्वामी गायब हो गए।

" कामरेड इन्द्रजीत गुप्ता का क्षोभ स्वाभाविक है। सरकार द्वारा वाच एण्ड वार्ड के जिम्मेदार लोगों के खिलाफ की गई कार्रवाई भी समझ मे आती है। लेकिन एक बात जो सरकार की समझ मे नही आ रही, वह यह है कि आखिर प्रो० स्वामी इतने ज़बर्दस्त बन्दोबस्त के बावजूद कैसे आए और कैसे चले गए।

" सरकार प्रो० स्वामी के द्वारा तानाशाही पर्दाफाश के विश्वव्यापी अभियान से काफी परेशान हो चुकी है। इस हद तक परेशान हुई कि जून के पहले सप्ताह में एक सेल प्रो० स्वामी को लन्दन से अपहरण करके भारत लाने के लिए भेजा गया।

" चूंकि यह खबर आन्दोलन के नेताओं को भी अपने सूत्रों से मालूम हो चुकी थी, इसलिए प्रो० स्वामी को लन्दन मे इस बारे मे सूचित कर दिया गया था। लन्दन में २६ जून की शाम को जब प्रो० स्वामी अपने कुछ साथियों के साथ उपनगरीय क्षेत्र में 'काला दिवस' आयोजन के सिलसिले मे जा रहे थे, तब एक कार से चार गुण्डों ने तीन बार हमला करने की कोशिश की। अन्तिम बार जब प्रो० स्वामी और उनके साथी जवाबी कार्रवाई के लिए झपटे तो कार

रफूचक्कर हो गई। स्कॉटलैंड यार्ड को सूचित किया गया। कोई दस मिनट बाद स्कॉटलैंड यार्ड ने प्रो० स्वामी को सूचित किया कि वह कार मलावियों की थी। उसके गुण्डों को भारतीय दूतावास ने 'हायर' किया था।

" अपने गुप्तचरों से भारत सरकार को प्रो० स्वामी के लौटने की योजना की जानकारी मिल चुकी थी। इसलिए २ अगस्त को पुलिस प्रो० स्वामी के बम्बई स्थित ससुराल के घर पर गई और पूछताछ करती रही। उसके बाद सरकार ने हवाई अड्डे पर पूरी नाकेबन्दी कर दी थी, पर सब व्यर्थ गया।

"प्रो० स्वामी ६ अगस्त को भारत आ गए थे। १० अगस्त को संसद शुरू होते ही ठीक समय पर राज्यसभा में गए। रजिस्टर पर हस्ताक्षर किया। सदन में पहुंचे। एक संदर्भ मे 'पॉइट ऑफ ऑर्डर' उठाया। राज्यसभा के सभापति श्री जत्ती साहब चकित हुए। देखने वाले अन्य संसद सदस्य प्रो० स्वामी की उपस्थिति देखकर चकित थे। ओम मेहता साहब ने देखा तो तत्काल खड़े हुए और तेज कार्रवाई के लिए लम्बे कदमों से निकल गए, लेकिन उधर ओम मेहता निकले, इधर स्वामी भी निकल गए। दरवाज़े पर प्रो० स्वामी को श्री गौड मुराहरी मिले। वे हेलो-हेलो के बाद बात भी करने की मुद्रा में थे, लेकिन प्रो० स्वामी तुरन्त लौटकर मिलने की बात कहकर चलते बने। श्री ओम मेहता की कार्रवाई का कोई असर नही हुआ और प्रो० स्वामी ठीक संसद के बीच से निकल गए।

" बाहर खड़ी चालू कार से सर्र से निकल गए। कोई एक मील निकलकर वेश बदला और कार बदली। अब वे पकड़ के बाहर थे।"

प्रो० स्वामी का भूमिगत कार्य एक स्वतंत्र पुस्तक का विषय है। इस पुस्तक मे उसकी कुछ घटनाएं अन्यत्र दी जा रही है।

घटनाएं : वे रोमांचक क्षण

बच निकलना नानाजी का

नानाजी देशमुख को २५ जून,' ७५ की रामलीला मैदान की आम सभा के बाद एक सज्जन ने रात को सावधान रहने की सूचना दी थी। उन्हें कुछ खतरनाक सम्भावनाओं की आहट तो थी, लेकिन इमर्जेंसी का इल्म नही था। बतौर सावधानी उन्होने डा० जे० के० जैन को बताया कि वे उनके (विट्ठल भाई भवन स्थित) निवास पर आ रहे है। डाक्टर जैन ने कहा, "नानाजी, आप क्यों तकलीफ करेंगे, मैं ही आ रहा हूं।"

"नही, नहीं, मैं ही आ रहा हूं।"

वे वहां पहुंचे। डाक्टर जैन की पत्नी ने अभी ७ दिन पूर्व ही शिशु को जन्म दिया था, सो परिवार के कई लोग उपस्थित थे। थोड़ी देर तक पारिवारिक बातें हुईं। उसके बाद इसी भवन के एक-दूसरे खाली कमरे में सोने का निर्णय किया गया। जाते-जाते नानाजी ने डाक्टर को कहा, "डाक्टर मुझे ४.३० बजे हवाई अड्डे जाना है। जयप्रकाश जी पटना जा रहे हैं। रात को बाते हो नहीं पाईं। सुबह कुछ कहना चाहते है वे।" तय पाया गया कि डाक्टर जैन सुबह साथ जाएंगे, लेकिन सुबह नानाजी उठे और बिना डाक्टर को लिए सीधे पालम पहुंचे। कोई ४.३० बजे होगे। नानाजी यह देखकर चकित थे कि पालम पर आज सुबह-सुबह इतनी पुलिस है। उन्होंने कार पुलिस की गाड़ियों के साथ पार्क की और अन्दर की तरफ बढ़े। ढेरों पुलिस अफसर और सिपाही खड़े थे। एक अफसर करीब आया और उसने कहा, "आप नानाजी देशमुख है ?"

"हां, क्यों ?"

"आप क्यों आए है यहां ?"

"मिलना है किसीसे, लेकिन बात क्या है ?"

"क्या आपको मालूम है कि जयप्रकाशजी और कई नेता गिरफ्तार कर लिए गए ? आपकी भी ज़बरदस्त खोज है। और हम लोग आप लोगों की तलाश में खड़े है।"

"जयप्रकाशजी कहां है ?"

"वे गिरफ्तार है और कहीं ले जाए गए हैं। आप जल्दी से जल्दी जाइए यहां से।"

इतने में नानाजी के सामने जे० पी० के व्यक्तिगत सचिव आए। एक पत्र देकर बोले कि गिरफ्तारी से बचिए और भूमिगत आन्दोलन का कार्यभार संभालिए, यह जे० पी० का आपके लिए सदेश है। अब नानाजी लौटने को मुड़े तो रास्ते में वही अफसर खड़ा था। नानाजी ने सोचा कि शायद यह यहीं पकड़ेगा, पर नानाजी निकल गए। वहां से गुजरते समय उसने एक बार पूछा, "जा रहे है नानाजी ?"

"जा रहा हूं," पीछे मुडकर देखा भी नही।

"हा, जल्दी निकल भागिए।"

नानाजी सीधे विट्ठलभाई पटेल भवन में आए, डाक्टर से मिले। उनके यहां बराबर टेलीफोन आ रहे थे। वह पांच बजे का समय था। जगह-जगह पुलिस पकड-धकडकर रही थी। जो बच गए थे, वे सबको आगाह कर रहे थे। श्री जगदीश प्रसाद माथुर, मदनलाल खुराना, मिसेज मलकानी आदि के फोन आ चुके थे।

"डाक्टर, चलो—यहा से जल्दी निकल चलना है।" डाक्टर ने जल्दी से नाइट पाजामे पर चोला डाला और दोनों रवाना हुए। नानाजी की कार ठीक हालत मे थी, पर डाक्टर की कार गर्म हो रही थी। फैसला किया कि नानाजी की कार से ही चलेगे। लिफ्ट से नीचे उतरे तो कारीडोर से सामने देखा घास के मैदान में कोई दो ट्रक पुलिस उतर चुकी थी। कुछ अफसर इधर-उधर टहल रहे थे। अब क्या हो ? दोनों कारीडोर मे खडे थे। इतने में और ट्रको की आवाज आई। मावलकर हाल के पास पुलिस उतर रही थी। निकलना जरूरी था। नानाजी की कार से डाक्टर की कार कुछ दूरी पर खड़ी थी। प्रतीत हो रहा था कि पुलिस नानाजी की कार पर नजर रखे हुए है। डाक्टर ने कहा, "मेरी कार मे निकल चलिए।" अब दूसरी आशंका यह थी कि गाड़ी बैक की नहीं कि पुलिस ताड़ेगी। और सामने के रास्ते में ट्रकों से पुलिस उतर रही है। एक ट्रक खाली हो चुका है।

डाक्टर ने कहा, "सामने से ही चलेंगे।" यही तय पाया गया। धकधक करते कलेजे पर पूरे विश्वास के साथ पुलिस वालों को हार्न दे-देकर हटाते हुए दोनों निकल गए। जब चेम्सफोर्ड क्लब के चौराहे पर पहुंचे तो पुलिस अफसरों की जीप सामने पड़ गई। पर राम-राम करते वह भी निकल गई। अब कार राजपथ पर थी। दक्षिण दिल्ली के एक बड़े घनिष्ठ साथी के यहां पहुंचे। सारी स्थिति बताने पर उसने हाथ जोड़कर नानाजी को १२ घंटे रखने के लिए भी असमर्थता प्रकट की। अन्त में एक रिश्तेदार के यहां गए। उसने प्रसन्नतापूर्वक रखा। यह भी बताया कि १९४२ मे अरुणा आसफ अली मेरे घर में १५-१५ दिन रहती थीं।

जार्ज साहब मछुआरे के वेश में

२६ जून की सुबह की घटना है। श्री जार्ज फर्नाण्डीज़ उड़ीसा राज्य के गोपालपुर मे थे। २६ जून के सुबह ही एक ट्रेड युनियन कार्यकर्ता श्री जार्ज के पास आए और बताया कि आपातस्थिति लागू हो गई है। उन्हें इसकी आशंका पहले ही थी। इन्होंने एक वक्तव्य बनाया, जिसमें लोगों से आह्वान किया कि वे तानाशाही का मुकाबला करें, कामगार काम ठप्प कर दें, छात्र-नौजवान सड़कों पर संघर्ष करें और जो लोग तानाशाही की पकड़ मे नहीं आ पाए है, वे तुरन्त भूमिगत हो जाएं।

अब सवाल था कि जार्ज साहब वहां से निकले कैसे ? उनके यहां कार्यक्रम थे और पुलिस उनकी उपस्थिति को जानती थी। यही नहीं, पुलिस ने उन्हें पकड़ने का पक्का इन्तजाम कर रखा था। कार की मांग की तो आगे-पीछे दौड़ने वाले नेताओं तक ने इनकार कर दिया। अन्ततः एक टैक्सी की व्यवस्था हुई। इधर गंजाम जिलाधीश का एक सन्देश इत्तफाक से बीच में सुन लिया गया, जिसे वे बहरामपुर पुलिस को दे रहे थे। उसमे जार्ज साहब की गिरफ्तारी के वारंट का जिक्र था। बहरामपुर पुलिस उन्हें बता रही थी कि कैसे उन्हें पुलिस रेलवे स्टेशन पर भाषण के बाद गिरफ्तार कर लेगी।

इसपर उधर जार्ज साहब ने अपने कार्यकर्त्ताओं को यह सन्देश दिया कि उस भाषण के कार्यक्रम की घोषणा ज़ोर-शोर से चालू रखी जाए। इधर वे मछुआरे के वेश में टैक्सी पर सवार हो गए और रवाना हो गए। जब पुलिस को धोखा खा जाने का एहसास हुआ, जार्ज साहब भुवनेश्वर पहुंच गए थे। वहां वे एक विधायक के यहां पहुंचे। उसके मकान पर पुलिस की नजर थी। फिर

भी कुशलतापूर्वक टैक्सी से उस विधायक के परिवार के साथ निकल गए और ४५ किलोमीटर दूर एक गेस्ट हाउस मे पहुंच गए।

कलकत्ता की बस में उसी मछुआरे के वेश मे जार्ज साहब सवार हो गए। मुंह पर गमछा लपेट लिया। बीच मे जार्ज साहब को सन्देह भी हुआ कि ड्राइवर ने उन्हें पहचान लिया है। राज्य की सीमा पर पुलिस का भारी जमाव था। पर खैरियत ही गुज़री। नजर नही पड़ी। साढ़े तीन सौ मील के लम्बे सफर के दौरान जार्ज साहब एक बार भी बस से नही उतरे।

श्रीमती गोरे बाल-बाल बचीं

ये शुरू के दिन थे। श्रीमती मृणाल गोरे भूमिगत रहकर कार्य कर रही थीं। जाने-पहचाने चेहरे के लिए चौबीसों घंटे पीछे पड़ी पुलिस से बचते हुए रहना ही वैसे मुश्किल काम है, उसपर अगर बगावती दिमाग और काम करने की आन्तरिक जिद्द हो तो और मुश्किल होती है। उसमें बड़ी मुश्किल होती है रहने की समस्या। आवास बदल-बदलकर रहना मजबूरी होती है। श्रीमती गोरे एक दिन माहिम के एक फ्लैट मे थीं। पड़ोस के मकान में चोरी हो गई थी। इसलिए पड़ोसिन पुलिस को फोन करके आई थी। श्रीमती गोरे के पहचान लिए जाने की आशंका से परिवार की एक लड़की ने तुरन्त एक झूठ बोल दिया—"फोन तो खराब पड़ा है।" लेकिन बात यही खत्म नही हुई। आधा घंटा बाद पुलिस आई और उसने विचार किया कि अगर इस मकान का ताला बिलकुल ठीक है तो सम्भव है, चोर पड़ोस के मकान में से होकर आया हो। पुलिस ने पड़ोस के मकान की यानी उस मकान की रचना को देखना चाहा, जिसमें श्रीमती गोरे थीं। पुलिस के इधर आने की सम्भावना मालूम होते ही श्रीमती गोरे कम्बल ओढकर लड़की की बीमार मौसी बनकर सो गई। पुलिस आई तो लड़की ने पुलिस को घुसने देने से इनकार कर दिया। तर्क यह दिया कि घर में कोई नहीं है, मैं अकेली हूं, किसीको आने नहीं दूंगी। जब सब आ जाएं तो आप आ सकते है। पुलिस के आश्वासन और आग्रह उस किशोर हठ के सामने टिक नहीं सके। पुलिस शाम को आने की बात कहकर लौट गई।

मन्दिर के तलघर में पुलिस

बनारस में उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों की बैठक होने वाली थी। तमाम भूमिगत कार्यकर्ता पहुंच गए थे। बैठक पंच गंगा घाट के एक मन्दिर के तहखाने

में थी। अब सवाल था कि केन्द्रीय नेता श्री जगदीश प्रसाद माथुर को पहुंचाया कैसे जाए। एक लड़की नेताओं को एक-एक कर पहुंचा रही थी। आसपास पुलिस चौकस खडी है। अगर अबकी बार लड़की फिर गई तो पुलिस को शक हो जाएगा। फलत: इस बार मा को रास्ता बताने जाना पड़ा। उन्होंने हाथ में आरती-प्रसाद वगैरह की थाली ली और गलियों की भूलभूलैया को पार करके मन्दिर मे पहुंची। बताए हुए तरीके के अनुसार श्री माथुर भी पीछे-पीछे थे। वहा पहुंचकर पूजा की मुद्रा मे हाथ जोडकर बैठ गए। वृद्धा चली गई। उन्हे बैठा रहना था। एक सिपाही आकर स्तम्भ के पास खडा होकर लौट गया, और ये सज्जन पूजा-मुद्रा में प्रात:-स्मरण के मन्त्र बुदबुदाते रहे। थोडी देर बाद पुजारीनुमा बालक आया, चरणामृत देकर संकेत से एक किनारे ले गया। वहा से नीचे तहखाने मे गए। वहा प्रदेशमन्त्री श्री हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव सहित सभी कार्यकर्ता मौजूद थे। बैठक शुरू ही हुई थी कि पुजारी आए। कहने लगे, "पुलिस तलाशी लेने आई है। मैं कमरा बन्द करके जाता हूं। आप लोग बिलकुल चुप बैठे रहिए। अब ये अन्दर बैठे थे। ताला बाहर से बन्द। तहखाने के सब कमरे दिखा दिए गए। "इस कमरे की चाबी लड़के के पास है और वह बाज़ार गया है।" पुजारी ने यह बहाना बनाया, "आप घंटा-भर यहीं इन्तज़ार करिए। आ ही जाएगा।" पुलिस की शंका जाती रही। वह चली गई। पिछली रिपोर्टिग और अगली योजना का विचार कर बैठक सांयकाल समाप्त हुई। इसी तरह एक-एक करके लोगों को वहां से निकाला गया।

पिंक सिटी पब्लिशर्स का खेल खत्म

जयपुर में राजस्थान के लिए जन-संघर्ष नाम की बुलेटिन छपती थी। राजस्थान में इसकी वितरण संख्या ७८ हजार तक पहुच गई। छपाई की व्यवस्था पुलिस की नजरों से बची रही। इस व्यवस्था को देखकर केन्द्रीय नेताओं ने कुछ पुस्तिकाओं की एक-एक लाख प्रति छापने का ज़िम्मा राजस्थान को दे डाला। छप तो गई, लेकिन देश-भर में भेजा कैसे जाए? तरकीब निकाली गई। पिंक सिटी पब्लिशर्स नाम से एक फर्ज़ी प्रकाशन बना डाला गया। लेटरहेड, चालान वगैरह सब कुछ छपा लिया। किसी एक पुस्तिका की, जो रंग-रूप में भूमिगत पुस्तिका जैसी ही थी, दो हज़ार प्रतियां छपा ली। रोडवेज़ और रेलवे बुकिग से माल भेजा जाने लगा। जब कभी कोई पूछताछ की गई तो वह पुस्तिका दिखा दी गई।

लेकिन एक पैकेट कर्नाटक में पुलिस ने पकड़ लिया और प्रतियां पुलिस के सामने पड़ गईं। अब केन्द्रीय जांच ब्यूरो ने पिंक सिटी पब्लिशर्स की जड़ तक जाने की कोशिश की। जयपुर मे बुकिंग सेंटर पर नज़र रखी जाने लगी। माल डिस्पैच कराने के इन्चार्ज श्री सत्यनारायण सदा की भांति अगली पुस्तिका के बण्डल लेकर जयपुर के रेलवे स्टेशन के माल बुकिंग आफिस पहुचे। उन्हें इसकी भनक भी नहीं थी। जाते ही कागज दिए।

"आप पिंक सिटी पब्लिशर्स से आए है ?"

"जी हां," उन्हें अब भी कोई शक नहीं हुआ।

उसने धीरे से कहा, "भाग जाओ एक मिनट के अन्दर। तुम्हारा खेल खत्म हुआ। शाम को अमुक स्थान पर मिलूंगा, तब बताऊंगा।" श्री सत्यनारायण बड़ी स्वाभाविक गति से निकल गए। शाम को 'खेल कैसे खत्म हुआ,' इसका ब्यौरा उन्हे मिला।

दोनों पकड़े गए

राजस्थान के दो भूमिगत कार्यकर्त्ता श्री धनप्रकाश और श्री रघुवीर शरण मोटर साईकल से आमेर पार कर जयपुर की तरफ बढ़ रहे थे। चुंगी-चौकी के आगे पुलिस ने उन्हें पहचान लिया और रुकने का संकेत किया। पर वे क्यों रुकने लगे ? उन्होंने मोटरसाइकल तेज़ की। पुलिस ने मोटरसाइकल पर ही तेज़ी से उनका पीछा किया। काफी तेज चलाने के बाद भी पुलिस कोई एक मील बाद उनके आगे आ गई। फिर भी जब उन्होंने रुकने का नाम नहीं लिया तो पुलिस ने झटका देकर उन्हें गिरा दिया। खैरियत रही, कोई घायल नहीं हुआ। रघुवीरजी खड़े रहे और धनप्रकाश गार्डन की ओर तेजी से भागे। पुलिस चोर-चोर करके पीछे भागी। वे आगे-आगे और पुलिस पीछे-पीछे। लेकिन धनप्रकाशजी अपना फासला बढ़ाते जा रहे थे। आगे मुसलमान फकीरों की बस्ती थी। वे चोर-चोर सुन रहे थे। मगर पुलिस उन्हें तब तक नज़र नहीं आई थी। धनप्रकाशजी ने बताया कि वे चोर नहीं है। जयप्रकाशजी के आन्दोलन के भूमिगत कार्यकर्त्ता है। एक बूढ़े फकीर ने उन्हें छिपा दिया। कुछ ही क्षण बाद पुलिस पहुंची तो उन्होंने भागने वाले की (गलत) दिशा बता दी। पुलिस घूम-फिरकर लौट गई।

धनप्रकाशजी कोई आठ घंटे बाद रास्ता काटते-काटते जयपुर पहुंचे और श्री ब्रह्मदेव शर्मा को वाकया बताते हुए कहा कि मैं निकल आया। रघुवीरजी

पकड़ लिए गए हैं। तुरन्त पुलिस थानों में पूछताछ चालू की गई कि रघुवीरजी को किस जेल में भेजा। इतने में एक दूसरे वरिष्ठ कार्यकर्त्ता ने ब्रह्मदेवजी को सूचित किया कि आमेर रोड पर धनप्रकाशजी को पीछा करके पुलिस ने पकड़ लिया है। रघुवीरजी ने मौका देखते ही अपनी 'घायल' मोटर-साइकल स्टार्ट करने की कोशिश की और वह स्टार्ट हो गई। वे निकल आए है। मगर धनप्रकाशजी पकड़े गए है। देवजी ने बताया कि असल में दोनों एक-दूसरे को गिरफ्तार हुआ समझ रहे है और सच यह है कि दोनों बचकर निकल आए है।

नमस्ते भी करते हो और···

एक शाम संघ के प्रचारक श्री चमनलालजी पार्लियामेंट स्ट्रीट थाने के पास एक आफिस से निकले। उन्होंने कुछ 'जरूरी कागजात' पास के किसी दफ्तर में टाइप कराने को दिए थे।

"नमस्ते चमनलालजी," उन्होंने सुना तो चौकन्ने हो गए। "नमस्तेजी, नमस्तेजी," कहते हुए गर्दन झुकाकर बड़े कदमों से बढ़ने लगे।

"चमनलाल, रुक जाइए", सुना तो वे रुक गए, "चलिए थाने में।" यह काफी सख्त आवाज़ थी।

उन्होंने बड़े भोले भाव से कहा, "एक तरफ तो आप नमस्ते करते हैं और दूसरी तरफ गिरफ्तार करने की बात कर रहे है! मुझे बहुत ज़रूरी काम है, मैं चलता हूं।"

"नही, रुकिए। आपकी हिम्मत कैसे हुई कि इस इलाके मे आ गए!"

"मुझे जाने दीजिए। मैं अब इधर नहीं आऊंगा। आज मुझे ज़रूरी काम था। अब नहीं आऊंगा।" उसी भोले अन्दाज में उन्होंने यह सब दोहरा दिया।

उन दोनों पुलिस वालों ने अपना टोन बदलते हुए कहा, "चमनलालजी, बुरा मत मानिए। सब थानों में आप सबकी फोटो है। और आप हैं कि ठीक पार्लियामेंट थाने के सामने से यों गुज़र रहे है।"

"आप जैसे सहानुभूति रखने वाले लोग है, तभी हिम्मत होती है भाई!" चमनलालजी बगल में थैला दबाकर नमस्ते करके चलते बने।

जब तूफान साहब ने अपना पता बता दिया

२६ जून को सुबह पुलिस बृजमोहन तूफान को पकड़ने कनाट प्लेस के

सुपर बाजार के करीब स्थित रेलवे यूनियन के दफ्तर पहुंची। ऑफिस का चपरासी ज्ञानचन्द वहीं सोया हुआ था। पुलिस की आवाज़ से तूफान साहब नीचे ज़मीन पर बोरी बिछाकर सोने का नाटक करने लगे। सिर्फ अण्डरवियर पहने थे। ऐनक खाट पर रखी थी। पुलिस ने उनसे ही पूछा। उन्होंने पूरी स्वाभाविकता से बता दिया कि या तो तूफान साहब बाड़ा हिन्दूराव या हरिनगर के अपने घर में सोए होंगे। और बड़े इत्मीनान से पड़े रहे। पहला दिन था। पुलिस शक नहीं कर पाई। पुलिस के जाने के बाद वे वहां से निकले और एक मित्र के यहां से लगे टेलीफोन मिलाने। वे सबको सावधान करना चाहते थे। श्री सिकन्दर बख्त साहब का जवाब था—"जा रहा हूं, मेजबान बैठे है।"

श्री राजेन्द्रपुरी ने कहा, "आपरेशन टेक ओवर हो गया।"

श्री अशोक मेहता ने कहा, "वी आल आर अंडरअरेस्ट।"

इसके बाद कुछ दिनों मे तूफान साहब ने समाजवादी नेताओं और कार्य-कर्त्ताओं से सम्पर्क किया। इनमे श्री सुरेन्द्र मोहन, रामगोपाल सिसोदिया वगैरह थे। श्री तूफान ने दिल्ली से निकल जाने मे ही खैरियत समझी और वे अलीगढ, कानपुर, झांसी, पटना, पूना यानी करीब-करीब देश के काफी बड़े भागों में घूमते रहे। लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण उनका कार्य था विदेशों मे स्थित अपने मित्रों व परिचितों को पत्र लिखकर भारत में हो रहे तानाशाही ताण्डव की जानकारी देना। इस दृष्टि से तूफान साहब का दो दशक पहले का यूरोप-प्रवास काफी उपयोगी सिद्ध हुआ। उनका कहना है कि उन्होंने इस पूरे काल में कुल ३,५०० पत्र लिखे। बिहार के क्रान्तिकारी नेता बसावनसिंह के साथ एक बार एक क्रान्तिकारी योजना भी बनी, पर धनाभाव से कारण सिरे नहीं चढ़ाई जा सकी।

सिर्फ बनियान में

बिहार के भूमिगत कार्यकर्त्ताओं की एक बड़ी बैठक थी। यह बैठक गया में फल्गू पार इलाके मानपुर में हो रही थी। बड़ी बैठक के खतरे को देखकर उपस्थित केन्द्रीय नेता कुछ नाराज़ भी हुए। इस बैठक में दो-तीन महिला कार्य-कर्त्रियां भी थीं। न जाने कैसे पुलिस को इस बैठक की जानकारी मिल गई और वह उस भवन के सामने गोलबन्द होने लगी। जैसे ही पुलिस की जानकारी अन्दर मिली, हड़बड़ी मची। गोविन्दाचार्य पिछवाड़े गए और छत से कांटे-

दार तार के पार छलांग लगा दी। फल्गू के किनारे के झुरमुटों से होते हुए भाग निकले। देखते-देखते और कई लोग कूदके भागे। एक सज्जन जो उस समय लुंगी-बनियान मे थे, कूद पड़े। मगर उनकी लुगी काटेदार तार में अटक गई और आप बिना लुंगी के सिर्फ बनियान मे नीचे आ पहुंचे। पास से एक गमछा लेकर लपेटा और उसी हालत मे भाग खड़े हुए; पर पुलिस से बच गए।

भगवान राम का वह हथियार

वे सत्याग्रह के दिन थे। नालन्दा से कुछ दूरी पर एक गांव में भूमिगत कार्यकर्त्ताओ की बैठक थी। ज़िले-भर के कार्यकर्त्ता आए थे। वहां से संसद में हाल मे चुनकर आए श्री वीरेन्द्र भी उस समय बैठक मे थे। केन्द्रीय नेता थे श्री जगदीशप्रसाद माथुर। गांव मे और इतनी बडी भूमिगत बैठक, जिसमें ५० भूमिगत कार्यकर्त्ता हों—श्री माथुर थोड़े परेशान थे। खैर, बैठक चली। गांव पक्की सड़क से दूर था। बरसात के दिन थे। श्री माथुर को इस तरह की दुस्साहसी बैठक की योजना अच्छी नहीं लगी। उन्हें तरह-तरह की आशंकाएं हो रही थीं। गांवों में २-४ बाहरी आदमियों का आना भी बड़ी घटना होती है।

जब इस परेशानी की जानकारी गांव के मुखिया के पास पहुंची, जिसने बैठक का सारा इन्तज़ाम किया था, तो वह आया और विश्वास दिला गया कि कुछ नहीं होगा। थोड़ी देर बाद तीन लोगों को लेकर मुखिया फिर आया। तीनों के हाथ में बन्दूकें थीं। दो के पास देशी थी और एक के पास थ्री नॉट थ्री। उन्हें दिखाकर मुखिया कहने लगे, "जब से आप लोग आए है. तब से ये लोग गांव के दोनों रास्तों पर बन्दूक लिए पहरा दे रहे है। कुछ गड़बड नहीं हो सकती। थ्री नॉट थ्री लिए ये आदमी यहां पर 'रिजर्व' मे तैनात है।"

"बाबू, इस थाने की क्या, ज़िला पुलिस की हिम्मत नहीं कि हमारा कुछ कर ले।" वह कहने लगा कि हम मानते है कि आपका आन्दोलन अहिंसक है, लेकिन उसकी हिफाज़त का ज़िम्मा हमारा है। हम आपको भरोसा दिलाते है कि यहां आपको गिरफ्तार नहीं होने देंगे और एक बूंद भी खून नही गिरेगा। बाबूजी, आप बड़े आदमी है। हथियार खून गिराता कम है, हिफाजत ज़्यादा करता है। सोचिए, हमारी फौज के पास हथियार न हो तो हमारा कितना खून

गिरेगा ? फिर भगवान राम और लक्ष्मण हथियारों से ही तो यज्ञ की रक्षा करते थे।...उसका दर्शन सुनकर श्री माथुर मुस्कराए।

कि तूफां आने वाला है

श्री जगदीशप्रसाद माथुर को जयपुर जाना था। सुबह की वातानुकूलित बस ज़्यादा सुरक्षित थी। सरकारी निगरानी प्रायः ८ बजे चालू होती है। इसलिए अक्सर ये इसी बस से जयपुर जाते थे, लेकिन टिकट बिक चुके थे। एक सज्जन टिकट बेचना चाहते थे। लेकिन उनके पास पति-पत्नी का एकसाथ टिकट था। उस टिकट से कोई पति-पत्नी ही जा सकते थे। न दो पुरुष जा सकते थे और न दो स्त्रियां। लेकिन संयोग से एक भद्र महिला भी टिकट न मिलने के कारण परेशान थीं। उनको भी इस जोड़े टिकट की जानकारी थी। उन्हें जब इनकी जानकारी मिली तो जोड़ा टिकट खरीदने का फैसला हुआ। रास्ते-भर बातें होती रहीं। भद्र महिला ने उन्हें परांठे भी खिलाए।

बीच मे वे कह गईं कि वे बड़ी मुश्किल से मीसा से बची है। कारण पूछने पर बताया—किसी गोष्ठी में उन्होंने एक शेर सुनाया था। जगदीशजी सोच ही रहे थे कि ऐसा क्या शेर था कि मीसा तक की नौबत आ जाए, वे शेर बोलने लगीं :

"अजब निजाम है, हरेक मुंह पे ताला है
खामोशियां दे रही इस बात का पता कि तूफां आनेवाला है।"

उन भद्र महिला ने यह भी बताया कि उनके पति एक बड़े अफसर हैं। स्टैंड पर उनसे मुलाकात होगी। लेकिन ये बस रुकते ही अपना रास्ता लेकर बिना मिले चल निकले।

आंखों ही आंखों में

आडवाणीजी बंगलौर जेल में थे। गुजरात से राज्यसभा के लिए उनके नामांकन आदि की व्यवस्था का ज़िम्मा श्री जगदीशप्रसाद माथुर को मिला। अहमदाबाद में केन्द्रीय गुप्तचरों का व्यापक जाल था। आडवाणीजी को न्यायालय के आदेश पर नामाकन पत्र भराने के लिए हवाई जहाज़ से अहमदाबाद लाया गया था। हस्ताक्षर करने के उस मौके पर कुछ गिने-चुने लोग उनके पास जाने वाले थे। पक्का सरकारी इन्तज़ाम था। लेकिन अपने एक अन्तरंग मित्र को इतने दिनों बाद मिलने का लोभ जगदीशजी संवरण न कर सके। रमेश भाई बनकर

वे भी खतरे के दायरे में चले गए। पुलिस और इंटेलिजेंस के लोगों से आडवाणीजी घिरे थे। अचानक दोनों मित्रों की नजरे मिली। इतने दिनों बाद कितनी बदली हुई हालत में इतने करीब खड़े थे। एक कैद में था, दूसरा भूमिगत। दोनों को रोमांच हो आया। आडवाणीजी की पलकों के नीचे आंसू की एक हल्की-सी परत उतर आई। स्थिति की नज़ाकत को देखकर दोनों क्षण-भर में सामान्य हो गए। जब चलने लगे तो हाथ मिलाया। इसके पहले वे कह चुके थे, "आपके पिताजी अब ठीक हैं।"

"क्या आप गए थे ?"

"हां।" यह जगदीशजी का जवाब था। वे सकुशल लौट आए।

प्रो० स्वामी की फिल्मी कार रेस

नई दिल्ली के जनसंघ मंत्री श्री केदारनाथ सचदेव के घर पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के केन्द्रीय नेता श्री बापूराव मोघे और जन-संघर्ष समिति के मंत्री नानाजी बैठे थे। प्रो० सुब्रह्मण्यन स्वामी को भी आना था। अभी वे विदेश नही गए थे। श्री स्वामी थोड़ा लेट हो गए। लेट होना अच्छा ही रहा। अन्दर घुसते ही कहा कि मुझे यहां पुलिस-घेरेबन्दी का पूरा इन्तज़ाम होता नज़र आ रहा है। तत्काल भागने की तैयारी हुई। प्रो० स्वामी ड्राइव करने बैठे। नानाजी और मोघेजी पीछे बैठे। गाड़ी जैसे ही रवाना हुई, पुलिस-कार भी पीछे हो ली। और फिर चालू हुई कार की वैसी दौड़ जैसी फिल्मों में देखी जाती है। ग्रेटर कैलाश, ग्रीन पार्क, हौज़खास सहित दक्षिण दिल्ली की आधे दर्जन कॉलोनियों में स्वामी घूमते रहे और पुलिस की गाड़ी उसी गति से पीछे लगी रही। अन्ततः रेड लाइट ने साथ दिया। रेड लाइट के पहले इनकी गाड़ी निकल गई और स्वामी चौराहे की वर्जित दिशा में गाड़ी निकालकर ले भागे। पुलिस की गाड़ी पीछे रह गई। दोनों नेताओं का कहना था कि पकड़े जाने से उस दिन बाल-बाल बचे। इसके निम्न कारण थे—

१. प्रो० स्वामी को दक्षिण दिल्ली की सड़कों के पूरे भूगोल की अच्छी जानकारी थी और फास्ट ड्राइविंग का अभ्यास था। २. पुलिस गाड़ी में वायरलेस सेट का अभाव। ३. स्वामी द्वारा स्थिति को तत्काल अच्छी तरह भांप लेना। बाद में उस गाड़ी को छोड़ देना पड़ा, क्योंकि पुलिस के पास उसका नम्बर पहुंच गया था।

गोविन्दाचार्य उर्फ भोलानाथ

गोविन्दाचार्य की घटनाएं बिहार के भूमिगत आंदोलन में लोक-कथाओं की तरह प्रचलित हो रही थी। पुलिस उन्हे पकड़ने को परेशान थी।

एक बार पुलिस गई और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सहप्रान्त कार्यवाह ७० वर्षीय श्री भोलानाथ झा को गोविन्दाचार्य समझकर पकड़कर ले आई। और उन्हें गोविन्दाचार्य समझकर पेश कर दिया। श्री भोलानाथ जी अपना परिचय देते रहे, लेकिन पुलिस गोविन्दाचार्य से इतने धोखे खा चुकी थी कि कुछ भी विश्वास करने को तैयार नहीं थी।

जब मजिस्ट्रेट साहब के सामने पेश किया तो अपना नाम-पता बताया। मजिस्ट्रेट महोदय ने नाम, पिता का नाम और पता वगैरह पूछा। उत्तर मिलने के बाद वे सज्जन यह समझ नहीं सके कि उसे गोविन्दाचार्य मानें या कि भोलानाथ झा।

उन्होंने बीच का रास्ता निकाला। शंका के कारण मीसा में नहीं डाला।

उन्होंने जेल के कागज़ातों में लिखा, गोविन्दाचार्य उर्फ भोलानाथ वल्द नीलमेघाचार्य उर्फ श्रीकान्त झा।

कुछ दिनों बाद जब तारीख पड़ी तो श्री भोलानाथ झा के वकील ने मजिस्ट्रेट को सम्बोधित करते हुए कहा—"योर आनर, मैं गोविन्दाचार्य को भी जानता हूं और भोलानाथ झा को भी। एक तीस वर्ष का है, दूसरा ७० वर्ष का। एक बिलकुल काला है, दूसरा बिलकुल गोरा। एक दुबला-पतला है, दूसरा भारी-भरकम। एक बनारस विश्वविद्यालय का इंजीनियरिंग स्नातक है, दूसरे कटिहार में तीस साल पहले वकालत करते थे और बाद में संघ का कार्य करते रहे। आज भी कटिहार का बच्चा-बच्चा भोलानाथ झा को जानता है और आप किसी को भी भेजकर पहचान के लिए बुला सकते हैं।" श्री भोलानाथ झा की ज़मानत हो गई और पुलिस गोविन्दाचार्य को फिर से खोजने लगी।

जब जयप्रकाशजी काली मन्दिर पहुंचे

पटना विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर है श्री रमाकान्त पाण्डे। आप बम्बई में जसलोक अस्पताल मे जयप्रकाशजी से मिलने गए और दुर्योग से एक दूसरे नेता को पकड़ने आई पुलिस द्वारा पकड़ लिए गए। लेकिन उन्होंने अपनी चतुराईपूर्ण सफाई से अपना निरपराध होना बम्बई पुलिस के सामने सिद्ध कर

दिया। जब लोकनायक पटना आए तो उन्होंने एक योजना बनाई।

विश्वविद्यालय के दायरे में एक दरभगा हाउस है। वहीं करीब है एक काली मन्दिर। काली मन्दिर में लोकनायक के स्वास्थ्य के लिए अनुष्ठान किया गया। अनुष्ठान २० दिनों तक चलने वाला था। रोज पुजारी प्रसाद वगैरह लेकर जाता और जयप्रकाशजी को बाहर की गतिविधियों का लिखित समाचार दे आता और संदेश ले आता। पहरे पर बैठी पुलिस को दाल में काला नजर आया। एक दिन पुलिस ने पुजारी को रोका और कहा कि प्रसाद हम दे देंगे। दे दो हमे प्रसाद। वह पुजारी होता तो शायद दे भी देता, लेकिन वह तो महा-पुजारी था। वह अड़ गया। जयप्रकाशजी की स्वास्थ्य-रक्षा के लिए हो रहे धार्मिक अनुष्ठान में विघ्न वह कैसे होने दे सकता था? उसने वहां वितण्डा खड़ा कर दिया। भीड़ जमा हो गई। भीड़ को स्वाभाविक रूप से धार्मिक अनुष्ठान मे खलल डालना बहुत अनुचित लगा। लोक-भावना को देखकर पुलिस को झुकना पडा।

दूसरे दिन अनुष्ठान समाप्त होना था। लोकनायक को विश्वविद्यालय से लगे हुए काली मन्दिर में उपस्थित होना था। जयप्रकाशजी गए। लेकिन तब तक पुलिस को षडयंत्र का पता लग गया। हज़ार से ज़्यादा पुलिस के लोग वहां पहुंच गए। जयप्रकाशजी जब काली मन्दिर से निकले, दो हज़ार छात्र भी कक्षाओं से निकलकर सब इन्तज़ाम के बावजूद वहां पहुंच गए। छात्र 'लोकनायक ज़िन्दाबाद' के नारे लगा रहे थे। लोकनायक ने अभिवादन स्वीकार किया। वे एकटक छात्रों को देख रहे थे। उनकी आंखों मे आंसू थे। छात्र बेकाबू हो रहे थे। लोकनायक ने उन्हें इशारे से रोका। यह एक अद्‌भुत दृश्य था, जिसमें भावावेग था, पर समझदारी भी थी; एक बेचारगी थी, पर सकल्प भी था; एक अजीब मौन था, लेकिन वह मौन बेबाकी से मुखर भी था। वहां पर उपस्थित बड़े-बड़े पुलिस अफसरों ने कहा—"कुछ भी हो, लोकनायक तो जयप्रकाश ही है।" संकेत पाते ही छात्र बिलकुल शान्त हो गए। लोकनायक छात्रों से विदा लेकर गाड़ी में बैठ गए।

कुछ दिलचस्प चकमे

नाम का चक्कर

भानुप्रताप शुक्ल दिल्ली मे केन्द्रीय लोक-संघर्ष समिति के भूमिगत साहित्य के निर्माण-कार्य से सम्बन्धित रहे। लखनऊ के ये सज्जन दिल्ली के लिए बिलकुल अपरिचित थे। जिस निश्चिन्तता से ये घूमते, कोई सोच भी नहीं सकता था कि लखनऊ में पुलिस का मीसा वारंट बड़ी बेजारी से उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। लेकिन कब तक चलता यह सब। एक दिन दिल्ली पुलिस जान गई कि जिस रविशकर का नाम टेलीफोन टेप के ऊपर बार-बार आ रहा है, वह लखनऊ के भानुप्रताप शुक्ल है। इधर इन्होंने अपना नाम बदलकर आदित्य कर लिया। एक दिन इनके मीनाबाग के गुप्त पते पर एक सी०आई० डी० सज्जन पहुंचे।

"यहां रविशंकर जी है ?" उसने पूछा।

'जी हां, है।" नौकर का जवाब था।

बुलाने पर कपड़ा धोते-धोते अण्डरवियर में ही वे आ गए। देखते ही ताड़ गए।

"आप ही रविशंकरजी हैं ?"

"नहीं, मैं आदित्य हूं। वे आज ही बिहार गए है। नौकर नया है, पहचानता नहीं है। आप कौन है ?"

"मैं रविशंकरजी का घनिष्ठ मित्र हूं। लखनऊ में हम साथ ही थे।" वह कह गया।

इधर खुद रविशंकर उर्फ भानुप्रताप उर्फ आदित्य अपने ही इतने जिगरी दोस्त को नहीं पहचान पाये। और पिण्ड छुड़ाने को वेताब थे। बोले, "रविशंकर जी बिहार गए है शायद परसों आएं। बैठिए, चाय-वाय पीजिए।" इतना कह-कर हाथ पकड़कर बैठने का आग्रह किया।

उसका रहा-सहा शक भी जाता रहा। बेचारा बिना चाय पिए चला गया। इधर उसके जाने के बाद ये हजरत तुरन्त गायब हो गए। दूसरे दिन वह फिर आया। कहने लगा कि वही रविशंकर थे। अब उन्होंने अपना नाम बदलकर आदित्य कर लिया है। लेकिन अब वह किसे पकड़ता !

बिलकुल सामने

६ अगस्त, १९७६ को पटना के निकट के एक गांव आलमपुर में एक किसान कार्यकर्त्ता के परिवार में श्री कैलाशपति मिश्र थे। सुबह का समय था। वे दाढी बना रहे थे। पुलिस इन्स्पेक्टर और मजिस्ट्रेट ठीक श्री मिश्र के सामने आकर खड़े हो गए।

"आपका नाम ?" मजिस्ट्रेट ने पूछा। उसके हाथ में श्री मिश्र की फोटो भी थी।

श्री मिश्र लुंगी-बंडी मे थे। फोटो में चश्मा लगा था। अभी चश्मा नही था।

श्री मिश्र ने किसान परिवार में बड़े भाई का नाम बता दिया।

"आप कभी जनसंघ में थे ?"

"जी हां, कोई ४७-४८ मे था।"

"करते क्या है ?"

"लकडी की टाल है। आरा मशीन है। कटाई-वटाई का काम करता हूं।"

"आपके घर में अण्डरग्राउड लोग आकर ठहरते है। यह सूचना पुलिस के पास है।"

"आप चाहें तो तलाशी ले सकते है। आइए, अन्दर चले। देख लीजिए।" यह खुद श्री मिश्र का जवाब था।

"देखिए, यह अच्छा नहीं है। अभी तो मैं जाता हूं, लेकिन मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि मेरा इलाका अण्डरग्राउंड लोगों का अड्डा बने। अगर कभी कोई आपके यहां पकड़ा गया तो मैं आपको भी नहीं छोड़ूंगा।" यह धमकी देकर मजिस्ट्रेट साहब चले गए।

उधर वे गए और इधर श्री मिश्र अपना बैग लेकर चलते बने।

भागने की जोड़-तोड़

उन दिनों पुलिस का रवैया यह था कि जैसे ही कोई ज़मानत पर छूटता

था, जेल के गेट पर ही उसे पकड़कर फिर कोई दूसरा मुकदमा बनाकर जेल में डाल देते थे। किसी तरह विद्यार्थी परिषद के कार्यकर्त्ता नरेश गौड़ की ज़मानत हुई। योजना बनाई गई कि पुलिस के हाथ मे पड़ने ही नही देना है। ठीक समय पर नरेश गौड़ जेल से निकला। स्टार्ट हालत में खड़ी मोटरसाइकल पर बैठा। पुलिस ने पीछा किया, लेकिन कोई ५० गज़ बाद ही एक वैसी ही मोटरसाइकल खडी थी। स्टार्ट करने की कोशिश हो रही थी। पिछला सवार ठीक नरेश की तरह का सिर पर कपड़ा लपेटे हुए था। यह इन्तज़ाम पहले से था। जब तक पुलिस नै देखा कि ये कोई दूसरे है, नरेश गौड़ काफी आगे निकलकर कार में बैठ गया था। कार का लडका मोटर साइकल पर बैठ गया। कोई दो घंटे बाद तीनों वाहनों के सवार पंजाबी बाग के एक मकान में मिले। इसके बाद नरेश गौड़ ग्यारह महीने बाहर रहा और पुलिस की पकड़ मे नहीं आया। ज़मानत पर था। कार्यक्रम आयोजित करता रहा। कई भूमिगत बैठकों को संबोधित करने के लिए इस लेखक को भी ले गया।

वह फर्राश

दिल्ली मजदूर संघ के मंत्री श्री हरिकिशन पाठक बीमार पड़ गए। भूमिगत कार्यकर्त्ता के लिए बीमारी बड़ी खतरनाक होती है। उन्हें एक प्राइवेट हस्पताल में दाखिल होना पड़ा। पुलिस को उस हस्पताल में उनके होने की भनक पड़ गई है, यह उन्हें हस्पताल में ही मालूम पड़ा। कुछ ही देर में उन्होंने देखा कि पुलिस खोजबीन कर रही है। उन्होंने एक फर्राश की वर्दी पहन ली और सफाई में व्यस्त हो गए। पुलिस ने उनसे भी पूछा, लेकिन "हमको कुछ मालूम नही बाबू" कहकर वे सफाई करने के नाटक में जुट गए। पुलिस खोजकर चली गई।

जेल से शादी में

सरकारी कर्मचारी राष्ट्रीय फोरम के अध्यक्ष श्री बी० एल० शर्मा जेल में थे। उनकी लड़की की शादी ३ अगस्त, '७५ को थी। जेल का यह दस्तूर था कि ज़मानत पर छूटनेवाले लगभग हर व्यक्ति को गेट पर फिर गिरफ्तार कर लिया जाता था। जमानत २४ घंटे पहले हुई। पर पुलिस ने कोर्ट में भी चुनौती दे दी थी कि गेट पर पकड़ लेगे। अब क्या हो! जेल-अधिकारियों को पटाकर रात बारह बजे निकले। तीन बजे फेरे थे। गेट पर पुलिस थी, लेकिन बहुत

एलर्ट नहीं थी। बन्द गेट के अन्दर से मुख्य द्वार की खिड़की खुलने के पहले खट-खट की आवाज़ से संकेत दिया। कार स्टार्ट कर दी गई। लेकिन ऐसा वे पहले दो घटे में कई बार कार स्टार्ट कराके चाय वगैरह पीने जा चुके थे। पुलिस ने इस बार कार स्टार्ट करने की हरकत पर सन्देह नही किया। इसके पहले खिड़की भी कई बार खुली। जेल के कर्मचारी पान-बीड़ी लेने बाहर जाकर आ चुके थे। इसलिए खिडकी खुलने पर भी सन्देह नही हुआ। फिर उन्हें यह गलत जानकारी दे रखी थी कि शादी ३ दिन बाद है। जब शाम को ७ बजे नही छूटे तो वे अगले दिन छूटने की सम्भावना मानने लगे थे। श्री शर्मा निकले, कार मे बैठे और कार सर्र से निकल गई। जीप पीछे लगी। लेकिन जीप कार की गति का मुकाबला नही कर पाई। श्री शर्मा ने ३ बजे अपनी लड़की के फेरे के समय की रस्म अदा की और तत्काल भूमिगत हो गए। पूरे आपातकाल के दौरान पुलिस उन्हे नही पकड़ सकी।

सिगरेट का सहारा

आपातस्थिति लागू ही हुई थी। बनारस में विद्यार्थी परिषद और सोशलिस्ट पार्टी के छात्र नेता पकड़ मे आ गए। इन्हें दशाश्वमेध थाने मे बैठाया गया। पुलिस उन्हें घेरकर बैठ गई। विद्यार्थी परिषद के केन्द्रीय नेता सुरेश अवस्थी और परिषद के ही एक अन्य कार्यकर्ता केदारनाथ सिंह ने थाने से भाग जाने का प्रस्ताव धीरे से फुसफुसाकर रखा। आम सहमति नही हुई। इसके बाद इन दोनों ने बड़ी दयनीयता से पुलिस अफसर से पेशाब करने की इजाजत मांगी। अफसर ने इजाजत दे दी। एक सिपाही साथ था। पेशाब करने के बाद उन्होंने पुलिस से सिगरेट लाने की गुज़ारिश की, और फिर खुद ही ले आने की तत्परता दिखाई। सिपाही ने सामने की दूकान से सिगरेट लेने जाने दिया। लेकिन सिगरेट की दूकान पर पहुंचते ही ये दोनों बन्दे सिर पर पैर रखकर भाग गए। पुलिस ने नाकाम पीछा किया। इस घटना के कारण स्थानीय थानेदार और कुछ अन्य सिपाहियों को मुअत्तिल कर दिया गया। इनकी गिरफ्तारी पर इनाम की घोषणा की गई। फिर भी सुरेश अवस्थी, पूरे आपातकाल के दौरान भूमिगत काम करते रहे। पकड़े नहीं जा सके। केदारनाथ सिंह कुछ महीनों बाद गिरफ्तार कर लिए गए।

कुली की करामात

बिहार पुलिस के लिए बिहार के भूमिगत आन्दोलन को ठप्प करने के लिए जिन दो लोगों की ज़रूरत थी—वे थे श्री कैलाशपति मिश्र और श्री गोविन्दाचार्य। गोविन्दाचार्य मोकामा से आ रहे थे। जैसे ही पटना जंकशन स्टेशन से पहले सिटी स्टेशन आया, एक पुलिस इन्स्पेक्टर डिब्बे मे चढा और सरकती ट्रेन से तुरन्त नीचे उतर गया। उसने गोविन्दाचार्य को और गोविन्दाचार्य ने उसको देख लिया। गाड़ी जब पटना पहुंची तो उस इन्स्पेक्टर की सूचना के कारण सारा स्टेशन पुलिस ने घेर रखा था। पुलिस बताए गए नम्बर के डिब्बे के बाहर एक-एक पैसेजर को देख रही थी, लेकिन गोविंदाचार्य उन्हे नही मिले। पुलिस हाथ मलती रह गई। हुआ यह कि गोविन्दाचार्य जो देखने में कमजोर और मरियल नज़र आते हैं, कुली-वेश में सिर पर किसी-का बक्सा रखकर ठीक पुलिस की घेरेबन्दी के बीच से निकल गए। इंजीनियरिग की डिग्री धारण करने वाला व्यक्ति, जो अंग्रेज़ी, हिन्दी, भोजपुरी, तमिल आदि फर्राटे से बोल सकता हो, वह इस कदर निकल जाएगा, पुलिस ने सपने में भी नहीं सोचा था।

मिलना लोकनायक से

यह घटना तब की है, जब लोकनायक जयप्रकाशजी जसलोक हस्पताल से पटना आ चुके थे। भूमिगत गतिविधियों की पूरी जानकारी देने और मार्ग-दर्शन प्राप्त करने के लिए गोविन्दाचार्य का जयप्रकाशजी से मिलना बहुत ज़रूरी समझा गया। लेकिन उन दिनों जयप्रकाशजी से कोई भी व्यक्ति मिल ही नहीं सकता था। एक-दो ने मिलने की कोशिश की तो गिरफ्तार कर लिए गए। यहां तक कि जब (डॉक्टरों की सलाह पर) जयप्रकाशजी घूमने जाते थे तो पीछे-पीछे पुलिस और गुप्तचर साथ होते थे।

एक दिन जब जयप्रकाशजी घूमने गए और साथ-साथ पुलिस आदि चल दी तो गोविन्दाचार्य पीछे से उनके कमरे मे जाकर छिप बैठे। जब जयप्रकाशजी आए तो गोविन्दाचार्य को इस तरकीब से मिलते देखकर गद्गद हो गए। तीन घंटे तक बाते होती रही।

अब सवाल यह था कि निकलें कैसे ? जयप्रकाशजी का केवल यही एक कमरा था, जहां पुलिस नहीं घुसती थी। गोविन्दाचार्य लोकनायक का

आशीर्वाद लेकर अपने बुद्धि-बल पर भरोसा करके निकल पड़े। बचते-बचते निकलने पर भी अन्तत. पुलिस की नज़र पड़ गई। अब गोविन्दाचार्य की टांगों और गली-मकान के रास्तों की जानकारी की परीक्षा थी। पुलिस भारी भाग-दौड़ और घेरेबन्दी के बावजूद उन्हें नहीं पकड़ सकी।

पेड़ से समाचार

प्राय: हर जेल में अन्दर से बाहरऔरबाहरसे अन्दरसन्देश औरसाहित्य लाने-ले जाने की व्यवस्था हो गई थी। जेल-अधीक्षक की बड़ी से बड़ी कड़ाई का इस व्यवस्था पर कोई असर नहीं पड़ता था। लेकिन राजस्थान मे टोंक जेल इसका अपवाद था। वहां और लोगों के अलावा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक प्रचारक श्री माणकचन्द गिरफ्तार थे। बाहर की दुनिया से पूरी तरह कटे थे। अत: एक दिन एक रास्ता निकाला गया। जेल में एक पेड़ है। यह पेड़ बाहर से नजर आता है। हफ्तों माणकजी पेड़ पर चढ़कर बाहर देखा करते थे, पर कभी कोई नज़र नहीं आया। पर एक दिन एक परिचित नज़र आया। उन्होंने तत्काल पत्थर में लपेटकर एक कागज़ बाहर फेंक दिया। उस कागज़ में दिन, समय वगैरह निर्धारित करके बता दिया कि अमुक समय बाहर से पत्थरके साथ सन्देश अन्दर फेका जाए। यह समय वह था, जब जेल का वह हिस्सा वार्डन वगैरह से निरापद रहता था। पेड़ पर कपड़ा लटकाकर वे समाचार फेंकने या न फेंकने का संकेत दे देते थे। इस तरह का सिलसिला अन्त तक चला।

छूना मां के पांव का

भवरलाल शर्मा, जयपुर नगरपालिका के अध्यक्ष रहे है। उम्र कोई ४५ साल की। पेशे से वकील। जयपुर डिवीज़न के भूमिगत आन्दोलन के एक सवल स्तंभ रहे है। पुलिस शुरू से ही उनके पीछे पड़ी रही। उन्होंने अपनी भूमिगत हलचल से पुलिस की नाक में दम कर दिया था। अफसरों का कहना था कि जयपुर का इतना जाना-पहचाना नेता दिन-रात घूमता रहता है और तुम निकम्मे उसे जयपुर में भी नहीं पकड़ सके हो। एक पुलिस सेल दिन-रात उनकी तलाश में लगा दिया गया, लेकिन फिर भी वे दिन-दहाड़े वेश बदलकर भूमिगत आन्दोलन का काम करते रहे। अक्सर वे मौलवी के वेश में रहते थे। राजस्थानी उर्दू बोलते थे। लेकिन एक दिन पुलिस ने उन्हें उनके

घर पर ही दबोच लिया। भवरलाल शर्मा निश्चित भाव से बोले, "चलिए, आखिर आपने मुझे पकड़ ही लिया, बधाई!" सामान तैयार कर लिया। पुलिसवालों ने बताया कि १५ दिन पहले आप बाल-बाल बच गए। हम कोई ५ मिनट देर से पहुंचे, आप जा चुके थे। सामान जीप मे रख दिया गया। जब चलने को तैयार हुए तो भवरलालजी ने कहा, "मैं मां के पांव छूकर आता हूं। आइए, आप भी आइए।" पुलिस ने कहा, "आप ही पांव छूकर जल्दी आ जाइए।" श्री शर्मा गए तो लौटे नहीं। ५ मिनट बाद पुलिस ऊपर गई। लेकिन शर्माजी ऊपर की मंजिल से नीचे कूदकर कहीं अन्तर्धान हो गए थे। पुलिस हाथ मलती रह गई। उन्हें अन्त तक गिरफ्तार नहीं किया जा सका।

डाक्टर का वेश

चौधरी चरणसिंह छूटकर आए थे। उत्तरप्रदेश के जनसंघ मंत्री भूमिगत नेता श्री हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव उनसे मिलना चाहते थे, पर उनकी हुसैनगंज स्थित कोठी पर कड़ा पहरा था। चौधरी साहब से मिलने के जुर्म में यादवराव देशमुख गिरफ्तार हो चुके थे। लेकिन इनका मिलना जरूरी था। श्रीवास्तवजी ने तरकीब निकाली। मेडिकल कॉलेज के एक छात्र से मदद लेकर डॉक्टर के वेश में गले मे स्टेथस्कोप और हाथ में डॉक्टरों वाला बक्सा लिए धड़धड़ाते हुए चले गए। मिलकर जब लौटने लगे तो परीक्षा हो गई। सन्तरी ने पीठ में दर्द होने की बात कही। जल्दी-जल्दी में स्टेथस्कोप से देखा। दवा भेजने का वादा किया और चलते बने। डॉक्टर बनने का यही तरीका उनके काम एक और गाढ़े मौके पर भी आया। इनके सहकर्मी रवीन्द्र किशोर साही मीसा में बन्द थे। आंखें उनकी खराब हो गई थीं। इलाज के लिए वे मेडिकल कॉलेज में लाए गए थे। डॉक्टरों के आने-जाने का समय मालूम कर एक दिन श्रीवास्तव डॉक्टरी वेश में सीधे उनके कमरे में घुस गए। पुलिस का आदमी पहरे पर खड़ा था।

अब समस्या यह थी कि श्री साही की आंखों पर पट्टी बंधी थी। देखने का सवाल ही नहीं था। बोलने से श्री साही चौंक सकते थे, और उनका चौंकना महंगा पड़ सकता था। कुछ-कुछ यह चन्दवरदाई और पृथ्वीराज के मिलन सरीखा था। स्पर्श वगैरह किया तो श्री साही ने पूछा—"डाक्टर साहब?"

"हां।" इनका सिर्फ इतना जवाब था।

श्रीवास्तवजी को एक तरकीब सूझी। उन्होंने पुलिस को ही पानी के लिए भेज दिया। उसके जाते ही छिपकर मिलने आने की अपनी बात बताई। १४ महीने बाद दो साथी इस हालत मे मिल रहे थे। एक कैद में था और लम्बी तन्हाई काट चुका था। दूसरा भूमिगत। यह इनके लिए बड़ा अपूर्व मिलन था। गले मिले। प्रेमाश्रु बहाए। पुलिस आने के पहले सामान्य हो गए।

वेश बदलने का मास्टर

साढे ग्यारह बजे रात का समय था। दिल्ली के श्री मदन लाल खुराना और श्री सुभाष आर्य स्कूटर से लौट रहे थे। झण्डेवालान लिंक रोड पर दुर्घटना हो गई। माइनर फ्रेक्चर भी हुआ। दोनों सीधे गंगाराम हस्पताल आए। प्राथमिक उपचार लेकर रवाना हो गए। पहचाने जाने से बचने के लिए सिर को कपडे से ढके रहे। श्री सुभाष आर्य दिल्ली के भूमिगत कार्यकर्ताओं मे सर्वाधिक सक्रिय लोगों में थे। एक बार राजा गार्डेन चौक पर उनकी कार का टायर पंचर हो गया। रात का समय था। पुलिस बड़ी संख्या में थी। गाड़ी मे लोक-संघर्ष समिति के केन्द्रीय नेता गण थे। इनमें श्री कर्पूरी ठाकुर और श्री बापूराव मोघे थे। वह पंचर कार को ही घसीटते-घसीटते कोई एक मील ले गए। वहां से दूसरे वाहन से आगे गए। एक बार लोक-संघर्ष समिति एक फैसले के बारे में अटलजी से मशविरा करना चाहती थी। सुभाष आर्य ड्राइवर बनकर फलों का टोकरा कंधे पर रखकर मेडिकल इंस्टीच्यूट ले गए और बिना पहचान में आए सन्देश दे आए और दूसरे दिन ले भी आए। साथ में श्रीमती खुराना भी थीं। विलय के बारे मे जनसंघ के नेता एक मुद्दे पर श्री विजय कुमार मलहोत्रा से मशविरा चाहते थे। श्री आर्य ने हिसार जेल अधिकारियों को चकमा देकर उनसे मुलाकात की। श्री आर्य अक्सर सरदार-वेश मे रहते थे। दाढी तो बढा ही ली थी। शुरू के चार महीने के बाद वे जब अपनी मा से मिले, तो मा भी नही पहचान सकीं। पहली बार यह लेखक भी नहीं पहचान सका था। श्री आर्य कम से कम छ· ढंग के वेश बड़ी आसानी से बदल सकते थे।

छात्र-संघर्ष समिति के अध्यक्ष महेन्द्रनाथ सिंह और उनके साथियों ने 'लोक-नायक ज़िन्दाबाद' और 'तानाशाही मुर्दाबाद' के नारे बुलंद किए। चेतना बिजली की तरह फैली और नारों का गगनभेदी उत्तर मिला। स्वतंत्रता-दिवस कार्यक्रम नहीं हो सका। पुलिस ने छात्रों को घेर लिया। पुलिस के पूछने पर छः ने अपने को गिरफ्तारी के लिए पेश किया। उपकुलपति श्रीमाली के इशारे पर महेन्द्रनाथ सिंह सहित इन छात्रों को बुरी तरह पीटते हुए ले जाया गया। इन्हें तन्हाई में रखा गया। काफी अर्से बाद जेल में इन्हें राजनैतिक कैदियों का बर्ताव मिला।

पत्नी का स्टैण्ड

मुंगेर मे छात्रों की एक बैठक के लिए श्री कैलाशपति मिश्र गए और उस प्रोफेसर के घर पहुंच गए, जो खुद 'एब्सकाण्ड' कर रहा था। इन प्रो० जानकीनन्दन पाण्डे का निवास कालेज के अहाते में है। एक बजे रात को पुलिस मुख्यद्वार पर आई। पुलिस ने अहाते में तीन तरफ से घेर लिया। दरबान दौड़ा-दौड़ा आया। उसने बताया कि पुलिस आपके घर की तलाशी लेना चाहती है। प्रोफेसर साहव की पत्नी ने यह 'स्टैंड' लिया कि मैं रात में अकेली हूं, देखना हो तो पुलिस सुबह आए। उन्होंने दरबान को बताया कि वह सारी स्थिति प्रिंसिपल साहब को बता दे। प्रिंसिपल साहब मुख्यद्वार पर गए और कहा कि रात मे पुलिस को कालेज एरिया मे नही घुसने दिया जाएगा।

बहरहाल संकट टला था, पर पुलिस सुबह तक घेरा डाले पड़ी रहेगी और सुबह तलाशी लेगी, और कुछ भी हो सकता है, यह सोचकर श्री पाडे ने पांच बजे निकल जाने का निर्णय लिया। रास्ता चुना बगीचे का। बिलकुल चोरों की तरह निकले। पूरब दरवाज़े से होकर निकलने में कामयाब हो गए और जमालपुर की गाड़ी पकड़के रवाना हो गए।

आखिर आज़ाद को भी तो लोग ठहराते थे

पूरे आपातकाल में भूमिगत रहने और उत्तरप्रदेश के भूमिगत कार्य का सक्रिय संचालन करने के बावजूद जनसंघ के प्रदेश मंत्री श्री हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव को पुलिस नही पकड़ सकी। प्रोक्लेम्ड एब्सकाण्डर साबित करने के बाद उनके घर का सारा सामान पुलिस ज़ब्त करके ले गई। यहां तक कि रसोई में एक छटांक आटा तक नहीं छोड़ा। इतना ही नहीं, उनके एक साल से

भी छोटे बच्चे को पुलिस ने पालने से उतारकर जमीन पर पटक दिया और पालना तक ले गई। प्रवास में जाने-माने कार्यकर्त्ताओ के घर पुलिस की नजर होने के कारण ठहरना मुश्किल था। एक रात कानपुर मे रात काटने का खासा सकट हो गया। पुलिस की नज़र होने के कारण दो पक्के ठिकानो से अस्वीकृति आ चुकी थी।

अचानक उन्हें हरिजन कार्यकर्त्ता मुंशीलाल का ध्यान आया। वे गए। मुशीलाल बजाय घबराने के गद्गद हो गया। जब खतरे की बात खुद उन्होंने उठाई तो मुशीलाल का जवाब था, आखिर चन्द्रशेखर आजाद को भी तो लोग ठहराते ही थे। तभी तो मरने के पहले पुलिस उन्हे नही पकड़ सकी।

आखिर पूरा भोजन न हो सका

सारा दिन निकल गया, प्रो० सुब्रमण्यन स्वामी और डा० जे०के० जैन किसी जरूरी काम से कोई ५-६ लोगो से दिन-भर मे मिल चुके थे। दोनों को खाने की तलब हो रही थी, मगर दोनों मे से किसीने एक-दूसरे को खाने के बारे मे कुछ नही कहा। ज़रूरी कामों के बीच खाने का विषय उठाना अस्वाभाविक लग रहा था। नानाजी द्वारा बताई गई लिस्ट पूरी नही हुई थी। होते-होते रात के ग्यारह भी बज गए। दोनों माडल टाउन के आस-पास थे। भोजन का विषय अन्त मे डा० जैन ने निकाला। अब सवाल था कि खाना खाया कहां जाए। रात मे खाने की तलाश मे होटल खोजते-खोजते कनाट प्लेट तक पहुंच गए। 'काके दी हट्टी' नाम का होटल खुला था। दोनों ने वही खुली सड़क के किनारे बैठकर खाने का फैसला किया। खाना लगा। अभी एक-दो निवाले अन्दर गए होंगे कि रात की गश्त वाली पुलिस की गाड़ी करीब आकर खड़ी हो गई। और संयोग देखिए कि दो ग्राहकों में, जिन्होंने शराब पी रखी थी, झगड़ा हो गया। पुलिस ठीक वहीं आ गई। अब एक तो पहचान की आशंका होने लगी और दूसरे, थोड़ा शक यह भी था कि इस गश्ती पुलिस के पास उनकी कार का नम्बर होगा। असल में इस गाड़ी पर अर्से से नज़र रखी जा रही थी। दुर्भाग्य से आज वही कार साथ में थी। दोनों ने जैसे-तैसे दो-दो रोटी खाई और बिल चुकाकर चलते बने।

लव-लेटर्स

एक दिन डा० जैन के चाणक्यपुरी स्थित निवास पर पुलिस ने 'सर्च' के लिए

छापा मारा। अच्छा यह था कि डा० जैन ने सावधानी बरती थी 'आपत्ति-जनक सामग्री' को किसी अन्य स्थान पर स्थानान्तरित कर दिया था। यह घटना नानाजी की गिरफ्तारी के कोई ६ महीने बाद की है। फिर भी पुलिस को कुछ चीज़ें मिल गई। पहली चीज थी नानाजी के पास रहने वाली पतों की सूची, जिसमे देश-भर के गुप्त पते दर्ज थे। पर डा० जैन ने इसे संभाल लिया, यह कहकर कि 'यह बहन की शादी के समय जो कार्ड भेजे थे, उन पतों की सूची है। चूकि मेरी पत्नी (डा० रागिनी) नानाजी की धर्मपुत्री है, इसलिए हमने उन लोगों को भी आमंत्रित किया था, जिनका सम्बन्ध नानाजी से था।' पुलिस मान गई।

दूसरी चीज थी श्री आडवाणी हैवियस कार्पस के केस का साइक्लोस्टाइल्ड ब्यौरा। डा०जैन ने इसकी भी सफाई दी। 'नानाजी के वकील को श्री ऑडवाणी के केस का ब्यौरा चाहिए था। इसलिए हमने आडवाणी के वकील से लेकर नानाजी के वकील को ये कागजात दिए थे। अब उसकी ज़रूरत नही रही। इसलिए उन्होने लौटा दिए।'

लेकिन सबसे खतरनाक चीज पत्रों के वे पैकेट थे, जो भूमिगत आंदोलनों के सम्बन्ध मे नानाजी के नाम गुप्त पतों पर आए थे।

अब डा० रागिनी ने कमान संभाली। कहा, "इन्हें मै आपको नहीं देखने दूंगी।"

"क्यों ?"

"अगर आपमें थोड़ी भी नैतिकता है तो आपको खुद ही इन्हे नहीं देखना चाहिए।"

"इसमें नैतिकता की क्या बात है ?"

"क्या आप अपनी बेटी के लव-लेटर्स पढ़ते है ?"

"क्या ये लव-लेटर्स है ?"

"जी हां, हमने शादी के पहले एक-दूसरे को जो लव-लेटर्स लिखे थे, उन्हीं चिट्ठियों को हमने इकट्ठा कर रखा है। मैं आपको यह हरगिज नहीं देखने दूंगी।" और डा० रागिनी बड़ी सेण्टीमेण्टल हो गईं। अन्ततः पुलिस अफसर ने उसे बिना देखे ही छोड़ दिया।

आपबीती

शायद वह जुलाई, ७५ का महीना था। मैं छत पर सोया हुआ था। कोई चार बजे होंगे। जब दरवाजा भड़भड़ाने की आवाज़ आई तो मेरी नीद खुली। यह वह घर था, जहां पहले मैं रहा करता था। उन दिनों एक प्रेस लगा था। कुछ दिनों से मुझे आशंका हो गई थी कि पुलिस को आपातकाल लागू होते ही लिए गए मेरे नये मकान का पता मालूम हो गया है। उससे बचकर रहने के लिए मैं इधर सोने लगा था।

कर्मचारी ने ऊपर से झांककर देखा, पुलिस थी। मकान के आगे-पीछे दो-दो सिपाही खडे थे। जाने उसे क्या सूझी, सवाल-जवाब के दौरान उसने ऊपर से ही कह दिया कि उसके अलावा यहां कोई नही है। इसपर पुलिस के कड़कते आदेश से वह दरवाज़ा खोलने चला।

इधर मैं अपनी घबराहट को खुद नही समझ पा रहा था। ज़्यादा से ज्यादा गिरफ्तार ही तो होना है। ठीक है, पुलिस की पकड़ से हर कीमत पर बचने को कहा गया है। फिर भी रोज़ गिरफ्तारियां चल रही है। मेरी गिरफ्तारी से कोई आसमान तो फटने वाला था नही। फिर भी घबराहट अजीब थी।

उसने शायद दरवाज़ा खोल दिया है। अचानक एक कोशिश करने की गुंजायश नज़र आई। मैं बराबर वाली छत पर चला गया। टंकी और मुंडेर के कोने में दुबककर लेट गया। दो बिस्तर नज़र न आएं और शक न हो, इस-लिए एक बिस्तर लपेटकर पड़ोस की सीढ़ी पर रख आया था। दम साधे चोरों की तरह बैठा रहा। एक सिपाही ऊपर आया. एक नजर देखकर चला गया। थोड़ी देर बाद यह पक्का कर. लेने के बाद कि वे किसीको पीछे नहीं छोड़ गए हैं, मैं पार्क के रास्ते से अपने एक मित्र के यहां निकल आया। यह पहला हादसा था।

परिवार को विदाई

जुलाई के पहले हफ्ते से ही दिल्ली में घर-पकड़ का सिलसिला चल रहा था। जब पुलिस के लोग कार्यकर्ता को पकड़ने के लिए घरवालों को डराने-धमकाने, गाली-गलौज करने और सामान बिखेरने की कार्रवाइयां करने लगे तो मैंने एक दिन अचानक पूरे परिवार को बिहार के गया जिले में एक रिश्तेदार के यहां भेजने का प्रस्ताव रखा। स्कूल खुले थे। बच्चों को पढ़ाई छुड़ाकर भेजना था। निष्ठा, गरिमा और श्रेष्ठा पढ़ाई छोड़कर जाने को तैयार नहीं थीं, लेकिन जब बलवीर के यहां पुलिस के रोज़-रोज़ आने और आतंकित करने की जानकारी मेरी पत्नी और बच्चों को मिली तो वे मान गए। उन्हें भेजकर मैं निश्चिंत हुआ।

शहर में भारी आतंक था। अनगिनत गिरफ्तारियों के अलावा बुलडोजर हरकत में आ गए थे। बहुत-से सरकारी कर्मचारियों का निलम्बन हो चुका था। कुछ को जबरन रिटायर कर दिया गया था। दुकानों पर इन्स्पेक्टरों ने कीमत-सूची वगैरह के बहाने लूट मचा रखी थी। बीस-सूत्री का पाठ प्रतिदिन प्रार्थना के समय स्कूलों मे चालू हो गया था। सर्वत्र श्रीमती इन्दिरा गांधी की प्रशंसा हो रही थी। स्थानीय कांग्रेसी चुन-चुनकर बदला ले रहे थे। विरोध के सबल स्वर का स्थान विश्वास के क्षेत्रों में फुसफुसाहट ने ले लिया था।

ऐसे में बागियों को पनाह देना जुर्म हो जाए तो ताज्जुब क्या ? ऐसी हालत में भूमिगत जीवन चालू हुआ था। परचे निकालना और छोटी-छोटी कमरा-बैठकों के अलावा कुछ और हो भी नहीं सकता था।

रात गुज़ारने के लिए एक ठिकाना चुना। पहला ठिकाना राजौरी में था। यहा मैं चाहे जब तक रह सकता था, लेकिन तीन रात के बाद मामला गड़बड़ा गया। मकान-मालिक ने पूछताछ की, आजकल हर रात कौन आता है ? उस ठिकाने को बदलना पड़ा। फिर कुछ रातें राणा प्रताप बाग में। फिर पंजाबी बाग में। फिर शाहदरा में। लेकिन अब तक मैं इस अस्त-व्यस्तता का अभ्यस्त हो गया था।

इन्हीं दिनों एक दिन लोक-संघर्ष समिति के महासचिव श्री नानाजी देशमुख का बुलावा आया। उन्होंने भूमिगत आंदोलन के लिए एक २१-सूत्री परिपत्र तैयार किया था। उसकी ३०,००० प्रतियां हिन्दी और अंग्रेज़ी में

छपानी थी। मैंने स्व० सहोदर मूलेन्द्र को तैयार किया। कई रातों की मेहनत के बाद स्व० मूलेन्द्र और रामशंकर की जोखिम-भरी मेहनत के बाद वह छपा। अब उसे प्रेस से स्थानान्तरित करने का सवाल आया। अब तक इसकी जानकारी एक-दो कम विश्वसनीय लोगों को भी हो गई थी। किसी भी समय कुछ भी हो सकता था। दिल्ली मे कुछ प्रेस सील हो चुके थे। सो, सारा माल जल्दी हटा लेना था। किसी आम वाहन मे ले जाना उचित नही था। अन्त मे मैने अपने मित्र श्री सुरेश को पकड़ा। उनकी कार में सारा माल श्री मनोहर पुरी के घर रखा। स्थान का चुनाव गलत था, क्योंकि यह जगह पुलिस चौकी के करीब थी। उसके पड़ोस के लोगों ने कुछ पूछताछ की तो अपनी गलती का एहसास हुआ। अन्त मे दिल्ली में उस समय के भूमिगत प्रकाशन तथा कुछ अन्य व्यवस्थाओं के प्रमुख श्री महेश दत्त से उसे जल्दी हटाने की जरूरत बताई। दूसरे दिन सूरज उगने से पहले सारा माल हटा लिया गया, तब कहीं कुछ चैन पडी।

नानाजी जब राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश के दौरे से लौटे तो मैं और आनन्द आदीश मिलने गए। मकसद यह था कि साहित्यकारों की एक विस्तृत सूची बनाकर उन्हें भूमिगत साहित्य भेजने की योजना बनाई जाए।

दो भाइयों की गिरफ्तारी

लेकिन अगले सात दिनों के भीतर मेरे दो भाई स्व० श्री मूलेन्द्र और श्री महेन्द्र गिरफ्तार कर लिए गए। और प्रेस को पुलिस ने बन्द कर दिया। प्रेस के तमाम कर्मचारियों को थाने पर बुलाकर बैठा लिया गया, लेकिन तमाम प्रेस-कर्मचारियों ने कुछ भी बताकर नहीं दिया। एक दिन बाद उन्हे छोड़ दिया गया। जान मे जान आई।

मैं भूमिगत, दो अन्य भाई गिरफ्तार, इस हालत में परिवारजनों से मिल-कर हौसला-अफज़ाई करना भी उस माहौल में कठिन था। महेन्द्र के घर पर कड़ी नजर रखी जा रही थी। तीन दिन बाद मैंने उन्हे एक परिचित के घर बुलाया और रात के अंधेरे मे यह धीरज बंधाया कि वे डी० आई० आर० में है। देर-सबेर ज़मानत हो जाएगी। अगली बार मिलने का स्थान सार्व-जनिक बिद्रा पार्क रखा। बाकी ज़िम्मेदारी मंझले भाई जोगेन्द्र पर छोड़ दी।

विदेशी पत्रकार के साथ

इसी दौरान एक दिन विदेशी पत्रों और पत्रकारों से संबंधित व्यक्ति मेरे घनिष्ठ परिचित श्री अखिलानन्द एक प्रस्ताव लेकर आए। 'न्यूज़वीक' के एक संवाददाता श्री रौने हांगकाग से आए थे। वे भूमिगत आदोलन की कुछ जानकारी चाहते थे। मिलना था। मिला कहां जाए ? सफेद चमड़ी के पत्रकार के पीछे गुप्तचर बुरी तरह लगे रहते थे। उनकी नज़र से बचना आसान नहीं था। जब श्री अखिलानन्द ने पुलिस की नज़र से बचने की सारी व्यवस्था समझा दी तो पुराने किले के पास एक खाली बंगले के लॉन मे मिले। जितनी बन पड़ी, जानकारी हमने 'न्यूजवीक' के उस पत्रकार को दी; लेकिन यह सख्त हिदायत दी कि हमारे नाम का उल्लेख नही किया जाए, क्योंकि मुझे भूमिगत रूप से काम करना है और मैं अपने ऊपर पुलिस का दबाव बढाना नहीं चाहता। बाद मे 'न्यूजवीक' की कतरन उसने भेजी। उसने अपना वचन निभाया था। मुझसे मिलने के बाद उसने भूमिगत नेताओं से मिलने की इच्छा व्यक्त की।

दिल्ली में उस दिन जनसंघ के अखिल भारतीय मंत्री श्री जगदीशप्रसाद माथुर थे।

मैने टेलीफोन मिलाया और पूछा, "मै 'विकास' बोल रहा हूं। क्या आप 'गाजियाबाद' से बोल रहे है ?" यही उनके ठिकाने का कोड था।

"जी हां।"

"मैं जनाब 'रिजवी साहब' से कुछ बातचीत करना चाहता हूं।"

"फरमाइए जनाब !"

"हमारे एक हमपेशा मेहमान आए हुए है। अगर आपकी इजाज़त हो तो मुलाकात हो जाए।"

"पहले आप १२-३० बजे मुझे 'एम्बेसी' में मिल लें।" मैं समझ गया कि मुझे २-३० बजे किस पार्क में मिलना है। मैंने थोड़ा-सा खतरा लेते हुए अखिलानन्द को बता दिया कि वे मुझे ४-३० बजे कहां मिले। संकेतित पार्क में ढ़ाई बजे मिलकर ४-३० बजे मिलने की बात बता दी। मिलने का स्थान हेली रोड की एक बहुमजिली इमारत में रखा जिसमें कई यूरोपीय परिवार भी रहते है।

जब उन दोनों को लेकर मैं डा० घटाटे के यहां पहुंचा, जगदीश जी मौजूद थे। सारी बातचीत हुई। करीब सवा घंटे के इण्टरव्यू के बाद जब

'न्यूजवीक' का संवाददाता निकला तो काफी सन्तुष्ट था। देश-भर में चलने वाले भूमिगत आंदोलन की अपटूडेट जानकारी उसे एक नेता से मिल गई थी। भूमिगत आंदोलन की शक्ति के बारे मे उसे भरोसा हुआ था। दूसरे ही दिन वह हिन्दुस्तान से चला गया।

भागमभाग

एक दिन किसी सिलसिले में नानाजी देशमुख ने मुझे याद किया था। मैं डा० जैन से मिला। भाई ने मेरा परिचय आगन्तुकों से मरीज के रूप में कराया। यहां तक कि एक बेड पर लिटा भी दिया।

खैर, हम कोई आठ बजे निकले। पुलिस की उसपर कड़ी नज़र थी। उसने उसे और पक्का करने के लिए एक हास्पीटल में एक घंटा गुज़ारा। अलीपुर रोड और सब्जीमण्डी के बीच जंगली-सी सड़कों पर चक्कर काटते रहे। जब भरोसा हो गया कि पीछा नही हो रहा तो डा० जैन ने अपनी कार कमला नगर से होते हुए अशोक विहार की तरफ मोड़ दी। मेरी नजर बराबर पीछे थी। अचानक जैन को यह एहसास हुआ कि पीछा हो रहा है। उसने टेस्ट करना चाहा। कार फास्ट और स्लो करके देख लिया कि पीछा करने वाली गाडी बराबर एक खास दूरी बनाए रख रही थी। शंका पुख्ता हो गई। फिर अचानक गाड़ी साइड में खड़ी कर दी। पीछा करने वाली गाड़ी कोई सौ गज़ आगे आकर रुक गई। लेकिन उसे भी हमारी शका का अंदाज़ हो गया। और कोई पांच मिनट बाद वह चला गया। इधर हमने उस रात नानाजी से नही मिलने का फैसला कर लिया। गाड़ी दीप सिनेमा के पास खड़ी थी। मै पान खाने लगा। डाक्टर टेलीफोन करने के लिए पास के एक नर्सिंग होम में गए।

उसका कहना था कि पुलिस को 'लोकलिटी' का अंदाज़ हो गया है और नानाजी को रात मे ही वहां से निकालना है। एक टेलीफोनशुदा ठिकाना चाहिए। तभी हमे एहसास हो गया कि सामने दो जुदा जगहों पर खड़ी मोटर साइकिलों के सवार हमपर नज़र रख रहे है। मुझे लगा कि आज गिरफ्तार हो सकते है। डाक्टर का तर्क था कि ये हमे गिरफ्तार नही करेंगे, क्योंकि ये हमारा पीछा करके नानाजी को पकड़ना चाहते है।

खैर, बमुश्किल तमाम पीछा करने वाले गुप्तचरों को चकमा देकर रात साढ़े ग्यारह बजे हम नानाजी के स्थानान्तरण के ठिकाने के लिए एक परिचित सज्जन के घर पहुंचे। प्रस्ताव सुनकर वे काफी घबराए। उनके यहां मैंने कई

हफ्ते काटे थे। लेकिन नानाजी का रखना उनके साहस के बाहर की बात नज़र आई। हम राजौरी गार्डन के एक मित्र के यहां आए। उनके घर ताला लगा था

करौल बाग लौटे तो रात के साढ़े बारह बजे थे। वहां से डाक्टर ने नानाजी को टेलीफोन किया तो पता चला कि एक घंटा पहले वे स्थान बदलकर किसी दूसरी कालोनी में सकुशल पहुंच गए है। दूसरे दिन डा० जैन को यमुना पुल के पास पुलिस जीप ने रोक लिया !

"आप कहां जा रहे हैं ?"

"गुप्ता नर्सिंग होम में एक आपरेशन करना है।"

पुलिस उन्हे रोककर गुप्ता नर्सिंग होम गई। पूछताछ करके उन्होंने देख लिया कि वाकई डा० जैन आपरेशन के लिए आने वाले हैं। पुलिस का अगला सवाल था, "आपकी गतिविधियां बड़ी सन्देहास्पद है। कल अशोक विहार में आप कहां गए थे ? आपने कभी तेज़ और कभी धीमे ड्राइव किया ?"

डाक्टर ने बताया, "जब सड़क साफ होती थी तो तेज और ट्रैफिक ज़्यादा होता था तो धीमे किया।"

"आप रुके क्यों ?"

"हम किसी दूसरे नर्सिंग होम मे जाना चाहते थे। और गाड़ी रोककर सोच रहे थे।"

"लेकिन आप 'दीप' सिनेमा के पास नर्सिंग होम में गए थे।"

"हां फिर गए थे।"

इसपर पुलिस ने उनके सामने ही उक्त नर्सिंग होम से टेलीफोन पर बात की। संयोग कि वही नर्स फोन पर थी जिससे डा० जैन ने बात की थी। उसके उत्तर पुलिस को सन्तोषजनक लगे।

"आपके साथ कौन था ?"

"एक रोगी।"

"क्या नाम ?"

डा० जैन ने मेरे नाम के बदले दूसरा कोई नाम बता दिया।

फिर नानाजी से मेरी मुलाकात डिफेंस कालोनी के एक नर्सिंग होम में दो दिन के बाद हुई। इस बार मुझे आधा घंटा पहले पता और मिलने का तरीका बताया गया। कोड बताए गए। नर्सिंग होम के डाक्टर ने कोड बता देने के बाद भी तरह-तरह से पक्का किया, तब कहीं मुलाकात हुई। नानाजी से प्रचार-साहित्य की योजना के बारे में कुछ बातें हुईं।

यह बात शायद सितम्बर, १९७५ की है। रात के ११-३० बजे होंगे। मेरे पास प्रचार-साहित्य का एक पैकेट था। मैं रिक्शे से पंजाबी बाग से राजौरी गार्डन आ रहा था। राजा गार्डन के चौराहे पर १०-१५ सिपाही खड़े थे और हर सवारी को रोक रहे थे। उन दिनों ग्यारह बजे के वाद पुलिस की ऐसी ही सरगर्मी रहती थी। मुझे और कुछ न सूझा तो वह पैकेट धीरे से सड़क पर गिरा दिया। रिक्शा रोका गया। कुछ पूछताछ हुई। खैरियत हुई, मेरे रिक्शे के पास जो आया था, वह मुझे उसी इलाके का होने के बावजूद पहचान न सका।

एक दिन श्री जगदीशप्रसाद माथुर ने हमे टेलीफोन करके बिड़ला मन्दिर के पिछवाड़े लान पर बुलाया। वहा उन्होंने जानकारी दी कि 'मदरलैंड' के संपादक श्री मल्कानी को जेल में परेशान किया गया है। यह समाचार विदेशी पत्रों में छपाना है। जब हमने सपर्क किया तो अमरीका के एक बड़े पत्र के प्रतिनिधि का सन्देश आया कि अगर श्रीमती मल्कानी इसपर कुछ बयान देना चाहे तो हम उसका इस्तेमाल कर सकते है। श्रीमती मल्कानी मुलाकात के लिए तैयार थी। एक विदेशी पत्रकार, अखिलानन्द और मैं—तीनों श्रीमती मल्कानी से मिलने उनके घर गए। जाने कहां से पुलिस को भनक मिल गई। पुलिस हमारे पहुंचने के दस मिनट बाद ही राजेन्द्र नगर स्थित उनके मकान के सामने बाहर आकर खड़ी हो गई। मै घबराया। सोचा, इस विदेशी पत्रकार को तो ज़्यादा से ज़्यादा निकाल दिया जाएगा, लेकिन मैं जेल में पहुंच जाऊगा।

सो मैं पिछवाड़े से निकल भागा। पिछवाड़े की पार्क वाली सड़क पर पुलिस खड़ी थी। खैरियत यह थी कि वे इधर नही देख रहे थे। मैं पार्क में जाकर लेट गया। वहां से डबल स्टोरी क्वार्टर में एक पत्रकार मित्र के यहां गया। टेलीफोन करके पता किया। श्रीमती मल्कानी की बातचीत हुई थी। बातचीत करके वे निकले। पुलिस ने उन्हें जाने दिया।

कोई दस दिन बाद मुझे श्री अखिलानन्द ने बताया कि उस पत्रकार को भारत सरकार ने हिन्दुस्तान से बाहर निकाल दिया। इसके पहले हमारे अमरीकी दूतावास ने श्री मल्कानी के घर के सामने उस पत्रकार के लिए गए चित्र को दिखाकर पत्र के प्रबन्ध सम्पादक से उसे वापस बुलाने का आग्रह किया था। लेकिन पत्र के प्रबंध संपादक ने इसे नहीं माना। फलतः उसे हिन्दुस्तान से निकाल दिया गया।

इसके तीन दिन बाद 'इंडियन एक्सप्रेस' के सामने मुझे वही गाड़ी नज़र आई, जो उस पत्रकार को श्री मल्कानी के घर ले जाते समय वही पर नजर आई

थी। मैं स्वाभाविक मुद्रा में अन्दर चला गया। अब मैं अन्दर था। मैंने एक परिचित महिला डाक्टर रागिनी को वहां से निकालने के लिए फोन से तरकीब सुझाई। लेकिन मुझे लगा कि आगे से निकलना खतरनाक हो सकता है। अतः मैंने अपने पत्रकार मित्र श्रवणकुमार को स्थिति समझाई। उन्होंने पीछे का दरवाजा खुलवाकर कब्रिस्तान के रास्ते से होकर राजघाट कालोनी तक पहुंचा दिया। वहां कवि श्री भवानीप्रसाद मिश्र के मकान पर दो घंटे रहा और निकल गया।

गिरफ्तारी

आर्थिक स्थिति वैसे मेरी कभी भी अच्छी नही रही, लेकिन इन दिनों कुछ खास खराब थी। स्कूटर बेचने से जो पैसा मिला था, उसमें से कुछ बचा था। बिहार मे अण्डरग्राउड गतिविधियों के प्रमुख श्री कैलाशपति मिश्र (जनसघ के प्रदेश मंत्री, जिन्हे पुलिस अन्त तक गिरफ्तार नही कर सकी और जो पूरे प्रदेश में खामोश बगावत की अनवरत अलख जगाते रहे।) को हमने ४०० रुपये दिए कि बिहार मे जहानाबाद के निकट के गाव में किसी कार्यकर्ता के जरिये पहुचा दिए जाए। हमारी पत्नी की तकदीर देखिए कि उन्हीं दिनों पटना मे इतनी भीषण बाढ आई थी कि हफ्तों तक आवागमन बन्द रहा। ऐसे में भूमिगत कार्यकर्ताओं की मुसीबत और बढ गई। उनमें से जो बाढ़ग्रस्त लोगों की सेवा में लगने से अपने को न रोक सके, पुलिस ने उन्हें निकलते ही गिरफ्तार कर लिया।

इधर मेरी बीवी शकुन्तला को पैसे नहीं पहुचे। गया वाले रूट से उसकी चिट्ठियां ताबड़-तोड आने लगीं। बाढ घटी तो स्वयं श्री कैलाशपतिजी ने जाकर पैसा पहुचाया।

चार महीने बिहार मे रह लेने के बाद श्रीमतीजी मय बच्चों के अचानक दिल्ली आ धमकी। साथ में उनके जीजाजी थे। मुझे खबर मिली। बीवी-बच्चों से मिलने की इच्छा मैं रोक न सका। रात कोई साढे दस बजे घर पहुचा। सोकर उठा तो घर से निकला नही। वर्षो से बीमार नहीं पड़ा था। मगर उस दिन अचानक बुखार आ गया। तापक्रम १०२°। शाम को मेरे मित्र बलवीर आए। बुखार कम था। उसके साथ सिनेमा चला गया। रास्ते में एक सरदारजी मिले।

"नमस्कार इनक्लाबीजी।" यह उस सरदार ने कहा था।

"क्या बात है ?"

जवाब बलवीर ने दिया।

"ये भाई साहब हमारे जनकपुरी के इनक्लावीजी की तरह लगते हैं, सो नमस्ते कर लिया।"

वलवीर को शक हुआ। शक मुझे भी हुआ। सिनेमा में जेब कट गई। बुखार बढ आया था। बलवीर के मना करने के बावजूद मैं घर पर ही सोया।

सुबह के कोई चार बजे होंगे। पुलिस ने मकान घेर लिया था। यह ५ अक्तूबर की बात थी। बुखार बना हुआ था। पुलिस को देखकर पत्नी इतनी घबरा गई कि हकला रही थी। उसे बिहार से इस तरह चले आने का अफसोस हो रहा था। आने के दूसरे दिन ही पुलिस के आ धमकने के कारण न जाने वह क्या सोच और बक रही थी।

मैंने दरवाजा खोल दिया। पुलिस इन्स्पेक्टर शर्मा अन्दर दाखिल हो गए। मुझे शक था कि शायद ये मुझे पहचानते नहीं।

"आप किसे चाहते हैं?" मैंने सवाल किया।

"मिस्टर दीनानाथ मिश्र को।"

"वो तो यहां नहीं है।" मैंने झूठ बोलने की कोशिश की। उसने टेबिल पर रखी कुछ किताबे उल्टी-पल्टी। उसमें मेरा हस्ताक्षर मिल गया। साथ में उसी रात लिखी ताजी चिट्ठी मिली। उसने हस्ताक्षर मिलाया।

"अगर आप दीनानाथ मिश्र नहीं है तो हम आपकी पहचान कराके छोड़ देंगे।"

"....मगर मुझे बुखार है। आप वेवजह मुझे परेशान कर रहे है।" लेकिन तब तक मेरी पत्नी ने रोना चालू कर दिया था। बच्चों ने उनका अनुसरण किया। घर में ज़ोर-शोर से रुदन-समारोह चालू हो गया। मेरे दीनानाथ न होने के दावे और बुखार से दया उपजाकर छूट जाने की कोशिश पर रुदन-समारोह ने पानी फेर दिया। मुझे थाने पर लाया गया। एक हजरत आए। कौन थे, कह नहीं सकता। करीब दो घंटे 'इंटरोगेशन' होता रहा। पुलिस इन्स्पेक्टर एक पिछले केस के कारण मुझे और मेरी पत्रकारिता को जानते थे। वे मुझसे काफी भद्रता से पेश आए।

मैं मीसा से घबरा रहा था। पीछे परिवार का क्या होगा, यह समस्या थी। मैंने ठाकुर विद्यासागर से कहा, "मुझपर मीसा न लगाएं।" उन्होंने कहा, "अगर मैं अभी न भी लगाऊं तो भी आपकी रिपोर्ट आने के बाद जेल में ही मीसा लगा दिया जाएगा।" मैंने कहा— "अभी तो आप १०८-१५१ लगाएं,

आगे मीसा लगेगा तो देखा जाएगा।" ठाकुर साहब मान गए।

कोर्ट मे पेश किया। मजिस्ट्रेट को पुलिस ने बताया कि मैं तख्ता पलटने वाला भाषण दे रहा था। मैने मजिस्ट्रेट को बताया कि मुझे ये 'सज्जन' सोते से बीमार हालत मे पकड़कर लाए है।

शाम को तिहाड़ कृष्ण मन्दिर मे दाखिल हुआ। जेल की जिन्दगी आराम से गुज़रने लगी। मस्ती की ज़िदगी थी। खाने को छोड़कर कुछ बुरा नही था। साथी-संगी थे। हफ्ते-हफ्ते पत्नी, बच्चे, भाई वगैरह मिल जाते थे। महीना-पन्द्रह दिन पर कोर्ट मे पेशी पर आते तो जयन्त मेहता आदि पत्रकार साथी मिल जाते थे। कष्ट था तो परिवारजनों को था। उसकी मानसिक वेदना होती थी, पर थोड़ी देर रहती और जेल के अन्दर 'लोकनायक जिंदाबाद', 'दम है तेरे दमन में कितना देख लिया और देखेंगे' के नारों मे कब विलीन हो जाती, पता ही न चलता।

भाई की मृत्यु

एक दिन सुबह सत्याग्रह करके आए कालेज के छात्रों की एक बैठक ले रहा था। एक सन्देशवाहक आया और अपनी भाषा मे कहने लगा, "वास्ते रिहाई ड्योढ़ी पर बुलाई।" मैंने नरेश गौड़ और महावीर सिंह को कहा कि ज़रूर यह मज़ाक है। मैने ज़मानत की कोई अर्ज़ी नही दी, न मेरी ओर से किसी रिश्तेदार ने दी है। रिहाई का सवाल ही नही खड़ा होता। ज़मानत की भी कोई गुंजाइश नही। रिहाई यहा किसीकी हुई नहीं। मेरी ही क्यों ? मैं कोई राजनैतिक हस्ती भी नही कि मेरे साथ कोई खास बात हो। मैंने उस सूचना पर विश्वास करने से इनकार कर दिया, लेकिन वह था कि सामान इकट्ठा करने की ताकीद कर रहा था।

खैर साहब, हम किताबों का अपना थैला लटकाए ड्योढ़ी पर आए। जेल के दरवाज़े पर पूरे वार्ड ने क्रान्तिकारी नारों और जयकारों से मुझे विदाई दी, जैसे हम कोई गढ़ जीतने जा रहे हों या फांसी के तख्ते पर लटकने जा रहे हों।

हम ड्योढ़ी पर आए। सचमुच मेरी रिहाई हो गई थी। हस्ताक्षर करके, धन्यवाद देकर थैला लटकाए बाहर निकला। सामने बलवीर और सतेन्द्र बक्शी खड़े थे।

"खैरियत तो है ?" मैंने पूछा।

"मूलेन्द्र की तबीयत खराब है।" बलवीर ने कहा।

"मगर सिर्फ तबीयत खराब होने से मेरी रिहाई कैसे हो सकती है ?" मैने पूछा ।

"काफी सीरियस है ।" बलवीर फिर बोला, पर चेहरे पर साफ था कि वह झूठ बोल रहा है । मेरा मानस अब यह कह रहा था कि उसका स्वर्गवास हो गया है ।

"देखो, मुझे पूरी बात बता दो । विश्वास रखो, सदमे से मेरा कुछ नहीं होगा ।"

उसने कहा, "उसकी मृत्यु हो गई ।" मै चुप हो गया । अजीब औपन्यासिक किस्म का हादसा था । अन्दर एक भीषण हाहाकार मच गया । संज्ञाहीन-सा होकर बैठा रहा । तीन बच्चे और विधवा आंखों मे घूम रहे थे । तीस वर्ष के सगे जवान भाई की मौत । अजीब मौत, बड़ा कर्त्ताधर्ता भाई जेल मे, आर्थिक तंगी, पुलिस की अनवरत पूछताछ । हे भगवान, यह कैसी परीक्षा है ? स्कूटर पर पहुंचा तो सैकड़ों लोग खड़े थे । पूरा परिवार रो रहा था । आस-पड़ोस के लोग भी रो रहे थे । मेरे आते ही जैसे रोने-धोने ने और ज़ोर पकड लिया हो । मैं बड़ा था । इसलिए ढाढ़स बंधाने का काम मेरे ज़िम्मे था । वैसे भी जाने क्यों मेरे आंसू कहीं सूख गए थे ।

उसकी विधवा और छोटे-छोटे तीन बच्चे मुझसे लिपट-लिपटकर रो रहे थे । विधवा और मेरी मां बारी-बारी से और कभी इकट्ठे बेहोश होकर गिर रहे थे । मेरा दूसरा भाई इन्दिरा गांधी का नाम लेकर रो रहा था । जेल से आने पर सीधे इस स्थिति से मुकाबला हुआ था । मुझे अब तक यह नहीं मालूम था कि यह मौत कैसे हुई थी, लेकिन इन्दिरा गांधी के नाम लेकर रोने से मुझे कुछ शक होने लगा था । मैंने उसे मना किया कि गमी के इस मौके पर इन्दिरा गांधी के नाम हाय निकालने का कोई मतलब नही है ।

खैर, अर्थी पंजाबी बाग श्मशान घाट की तरफ जा रही थी । रास्ते में मैंने भाई से पूछा कि कैसे हुआ, यह सब ।

घर पर खुफिया विभाग के लोग आकर भाभी से पूछते थे कि तुम्हें पैसे कौन दे जाता है ? खर्चा कैसे चलता है ? यहां कौन-कौन आते है ? जो दोनों भाई गिरफ्तार किए गए थे, वे कहां रहते है आजकल ? क्या वे सत्याग्रह करने वाले है ? हर दूसरे-तीसरे दिन कोई न कोई ऐसे ही सवाल भाभी से पूछ जाता ।

इस तरह के सवालों के कारण भैया प्रेस में ही रहने लगे । सराय रोहिल्ला

रहते थे। पुलिस के डर से घर नहीं आते थे। उस मकान में टट्टी नहीं थी। वैसे भी वह दिल्ली के लिए नये थे। लुके-छिपे रहते और प्रेस का काम संभालते थे। पर उनकी पूरी दिनचर्या अस्तव्यस्त हो गई थी। न खाने का होश, न और किसी बात का। ऐसी हालत मे पेट में टट्टी जम गई। दो-तीन दिन तक उन्होने परवाह नही की। जब पेट मे दर्द वढा तो महेन्द्र व बलवीर उसे हास्पीटल ले गए। कोई मददगार नही था। जो हो सकते थे, वे भूमिगत थे, गिरफ्तारी से वचने के भय से। वहां बहुत कहने पर भी दाखिल नहीं किया और दवा देकर लौटा दिया गया। दूसरे दिन हालत खराब हो गई तो फिर हास्पीटल ले गए। दूसरे डाक्टर ने गम्भीरता समझी और आपरेशन किया। सहोदर महेन्द्र और जोगेन्द्र ने खून दिया। इलाज करने व अतिरिक्त खून खरीदने के लिए पैसे किससे-किससे लिए, यह भी बताया उसने। श्मशान के रास्ते मे इस समय पहली बार आसू आए। और इस कदर विह्वल हुआ, जैसे कोई वांध टूटता हो। कुछ ही मिनटों मे सभाला अपने को।

शवदाह-क्रिया में भाग लेने के लिए एक मजिस्ट्रेट की मेहरबानी से रविवार होने के बावजूद मुझे बिना जमानत के छोड़ा गया था। दूसरे दिन २०-२० हजार के दो मुचलकों पर मेरी ज़मानत हुई।

मेरा खयाल है कि जनवरी का दिन था वह। श्री जगदीशप्रसाद माथुर पर पुलिस का दवाव बढ़ गया था। नानाजी वगैरह के पकड़े जाने पर इनकी गिरफ्तारी पर इनाम की राशि दुगुनी कर दी गई थी। वे किसी तरह दिल्ली से कुछ दिन के लिए निकल जाने को बेताब थे। सामान समेट लिया था। मैं भी 'गाजियाबाद' में उनके साथ बैठा था।

दबाव बढ़ने की पक्की जानकारी अपने गुप्तचर विभाग से उनको मिल चुकी थी। मैंने कहा, "ज़ाहिर है, पुलिस दिल्ली से बाहर जाने के हर रास्ते पर आपकी निगरानी कर रही होगी।" ऐसी हालत में आपका स्टेशन से गाड़ी पकड़ना उनके जाल में स्वय फंसना होगा।

"लेकिन यहां से निकलना ज़रूरी है। यहां पर कुछ सन्दिग्ध व्यक्ति देखे गए है।" पिछवाड़े से निकले। वाहन से श्री सुरेश गुप्ता के यहां गए। दूसरे दिन पुलिस और गुप्तचर २६ जनवरी के आयोजन में व्यस्त रहनेवाले थे। सुबह का मौका देखकर हमने दिल्ली कैंट के स्टेशन से उन्हें ट्रेन पर बैठाकर चैन की सांस ली। वे सकुशल निकल गए।

कुछ दिनों बाद फिर से गिरफ्तारी की चिन्ता बनी रही। भूमिगत साहित्य

के सिलसिले में धनराज जी ओझा का मेरे यहां आना और मेरे केन्द्रीय नेताओं से अक्सर मिलते रहना अनवरत चल रहा था। छूटने के महीने-दो महीने के अन्दर बहुतों की पुनः गिरफ्तारी हुई थी। एक दिन का वाकया है। मैं स्टैंड पर खड़ा था। एकाएक पुलिस की वाहन रुकी और उसमें से वह ए० एस० आई० सरदारजी निकले। यही मुझे जेल तक छोड़ने गए थे। मैंने अपने साथी से कहा कि लगता है, मुझे यही से सीधे ले जाएंगे। धर-पकड़ का तीसरा दौर चल रहा था, इसलिए यह आशंका बेबुनियाद नही थी। लेकिन नज़दीक पहुंचकर सरदारजी ने मेरे भाई की दुःखद मृत्यु पर शोक प्रकट किया।

'जनवाणी' का सम्पादन

इधर मेरे ऊपर 'जनवाणी' को संपादित करने की ज़िम्मेदारी पूरी तौर से आ गई थी। मैंने दिल्ली के भूमिगत आन्दोलन के नेता धनराज ओझा को बताया कि मैं 'जनवाणी' की छपाई और प्रूफरीडिंग से सन्तुष्ट नहीं हूं। मैं लिखने के अलावा खुद सेटिंग से लकर प्रूफरीडिंग तक की सारी जिम्मेदारी लेने को तैयार हूं। इसके लिए कहीं भी जा सकता हूं। रात या दिन के समय का कोई बन्धन नहीं है। लेकिन उनकी मजबूरी वाजिब थी। पुलिस दिल्ली-भर के प्रेसों पर जाकर तलाशी ले रही थी। दर्जनों प्रेस जब्त या बन्द हो चुके थे। कोई भी छपाई को मुश्किल से तैयार होता था। जो छाप रहा था, उसकी शर्त यह थी कि वह मैटर लेने और कॉपियां देने के सिलसिले मे सिर्फ एक आदमी से डील करेगा। कोई किसी भी कारण प्रेस में कभी भी नही आएगा। न कभी कोई टेलीफोन होगा और न किसी दूसरे आदमी को मुद्रक की कोई जानकारी होगी।

उसकी सावधानी वाजिब थी। जब कार्यकर्त्ता गिरफ्तार होते थे, तो भांति-भांति से डरा-धमका और मार-पीटकर लिखने वाले से लेकर मुद्रक तक का पता पूछा जाता था। मुझे याद है, जब श्री तिलकराज नाम के एक कार्य-कर्त्ता निमाड़ी में गिरफ्तार हुए तो इन तथ्यों को उगलवाने के लिए पुलिस ने उन्हें काफी यातनाएं दी थीं।

इस स्थिति मे मैंने छपाई और प्रूफरीडिंग वाली बात पर आग्रह करना बन्द कर दिया।

'जनवाणी' के प्रकाशन के सिलसिले में दिल्ली के सर्वप्रमुख भूमिगत नेता

श्री धनराज आज्ञा जिस हिम्मत से रात ही नहीं, दिन में भी घर आ जाते थे, उसे देखकर उनके दुस्साहस पर मुझे आश्चर्य होता था। एक बार उनके जाने के बाद एक सी० आई० डी० मेरे पास-पडोस से पूछताछ करके गया। लेकिन यह जानकारी मैंने उन्हे जान बूझकर नही दी।

वह मुलाकात

यह घटना प्रारम्भ के दिनों की है। जब भारत से बहुत-से विदेशी पत्रकारों को निकाल दिया गया और भूमिगत आन्दोलन की खबरें उन्हें कम मिलने लगी तो पश्चिम की कुछ समाचार समितियों और पत्रों ने एक न्यूजपूल का गठन किया था। इस मिलसिले मे एक विदेशी पत्रकार लैजली नानाजी देशमुख से मिलना चाहता था। मैंने नानाजी से स्वीकृति ली। बाकी व्यवस्था डाक्टर जैन पर छोड दी गई। कोड भाषा में लैजली को श्री अखिलानन्द के ज़रिये सूचित कर दिया कि कहां, कैसे, कब मिलना है।

उस पत्रकार को नजर बचाकर अपना वाहन छोड़कर लगभग आधा मील दूर मिलने को कहा। लैजली, अखिलानन्द और मैं तीनों गोल मार्केट के निर्धारित रेस्टोरेण्ट मे मिले। मैंने टैक्सी लेकर रास्ते मे पैदल चलते हुए उन दोनों पत्रकारों को लिया; लेकिन तब, जब पक्का भरोसा हो गया कि उनका पीछा नहीं हो रहा है। अब आगे कहां जाना है, मुझे मालूम न था सिवा इसके कि मुझे करौलबाग के एक हास्पीटल पर ८ बजे कोई मिलेगा।

वहां ठीक समय पर गाड़ी मिली और हम चौकस ढंग से वसंत विहार की ओर मिलने चल दिए। नानाजी लैज़ली से मिले। लम्बी बात हुई। लैज़ली ने हिन्दुस्तान से लौटकर उसकी कतरन नानाजी को भेजी, जिसे न्यूज़पूल के ज़रिये विश्व के कोई २०० बड़े पत्रों ने छापा था।

पोज़ीशन पेपर

'७६ के मार्च के बीतते-बीतते मैं इस नतीजे पर पहुंचने लगा था कि तत्कालीन रणनीति बांझ है। इससे कोई नतीजे नहीं निकलेगे। मैंने एक-एक करके अनेक शीर्षस्थ भूमिगत नेताओं से बातचीत की, जिनमें मुख्यतः राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और जनसंघ के नेता थे। इसके बाद कुछ सुझाव देते हुए मैंने एक लम्बा 'पोज़ीशन पेपर' लिखा। उसे २० शीर्षस्थ भूमिगत नेताओं को दिया। जेलों में भी भेजा। उनमें सर्वश्री माधवराव मुले, बापूराव मोघे,

प्रो० राजेन्द्रसिंह और जगदीशप्रसाद माथुर आदि भी थे। वह पेपर विभिन्न राज्यों के भूमिगत नेताओ को भी दिया। उत्तरप्रदेश सहित कई राज्यों में उसका लगभग आधा भाग विश्वविद्यालय प्राध्यापकों और बुद्धिजीवियों में वितरित भी किया गया। इस पुस्तक के अन्त मे उस पेपर के कुछ अंश दिए जा रहे हैं।

गिरफ्तारी दूसरी बार

मेरी खुली गतिविधियों को देखकर और भूमिगत नेताओं से ताल्लुक होने की शका हो जाने पर मुझे १६७६ के मध्य मे एक बार फिर गिरफ्तार किया गया। इस बार भी वही तरीका था। मकान को चारो ओर से घेर लेना और फिर गिरफ्तार कर लेना। लेकिन इस बार मेरी पत्नी शकुन्तला ने अपना रौद्र रूप प्रकट किया। वह पुलिस इस्पेक्टर शर्मा को खूब गालियां दे रही थी। उसने बच्चों सहित अपने को भी गिरफ्तार करने का सत्याग्रही हठ किया। बड़ी मुश्किलों से उसे वापस घर के अन्दर भेजा।

तीसरा वारण्ट

दूसरी बार जमानत पर आने के बाद थोड़ी ज्यादा सावधानी बरतनी प्रारंभ की। प्रकट रूप से घर में ज्यादा रहने लगा, ताकि विजिलेस के लोग यह समझ ले कि अब भूमिगत आंदोलन से मेरा ताल्लुक नही है। लेकिन एक दिन, आपातकाल उठने के कोई ढाई महीने पहले, पुलिम टीम आ धमकी। मै प्रेस में था। पुलिस टीम के पास मेरी गिरफ्तारी का वारण्ट था। पडोस के श्री हरिराम गुप्ता जी से हस्ताक्षर कराने की खानापूरी करने के बाद वे चले गए। मेरी पत्नी ५ वर्षीय पुत्र 'विकास' को लेकर प्रदीप नाम के पड़ोस के नौजवान के साथ मेरे केन्द्र पर आ गई। आज ५ वर्ष का विकास पुलिस के आने की पूरी जानकारी इतना रस लेकर बता रहा था, मानो किसी गोलगप्पे वाले का जिक्र कर रहा हो। उस वारण्ट का क्या हुआ, मुझे अब तक उसकी कोई जानकारी नहीं है।

'जनवाणी' के सिलसिले में भूमिगत नेता बराबर आते रहे। संघ के केन्द्रीय साहित्य के निर्माण की दृष्टि से भी केन्द्रीय नेताओं के साथ होने वाली बैठकों में जाना-आना होता रहा। लेकिन अब तक भूमिगत आंदोलन की पद्धति इतनी विकसित हो गई थी कि कोई बिरला ही कभी-कभी किसी तरह पुलिस के

चंगुल मे फंसता था।

आपातस्थिति के दिनों मे 'फ्री थिंकर्स ग्रुप' नाम से गोष्ठियां चलाता था। ये गोष्ठियां तीन क्षेत्रों में होती थी। एक दक्षिण दिल्ली में, जिसमे 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सहसंपादक श्री सी०पी० रामचन्द्रन और गोपाल कृष्णन प्रमुख रूप से भाग लेते थे। पश्चिम दिल्ली मे फाइनेंशियल एक्सप्रेस के श्री बलवीर पुंज तथा कुछ अन्य प्रवक्ता साथी थे। केन्द्रीय ग्रुप मे आनन्द आदीश प्रमुख थे। इसमे मुख्यतया आपातस्थिति पर भूमिगत आंदोलन की रणनीति आदि पर चर्चाएं हुआ करती थीं। इस ग्रुप की बैठकों को भी बिलकुल गुप्त रूप से आयोजित किया जाता था।

मैं अपनी तारीख के संदर्भ में अदालत मे गया हुआ था और अपने मजिस्ट्रेट के सामने बैठा था। साथ मे थे गाधी शाति प्रतिष्ठान के श्री सारवरवाड़े और उनकी पत्नी। श्री सारवरवाड़े मेरे साथ जेल मे भी थे।

मजिस्ट्रेट का कहना था, "आप यह बयान दे दें कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से आपका कोई ताल्लुक नहीं है। मैं न केवल आपके ये तमाम मुकदमे समाप्त करवा दूंगा, बल्कि रोज़-रोज़ की पुलिस की परेशानियों से भी आप बच जाएंगे।"

मैंने कहा, "मै ऐसा हरगिज नही करूंगा। संघ से स्वयसेवक का नाता अटूट होता है।" मजिस्ट्रेट का कहना था कि अब 'प्री-इमरजेंसी डेज़' लौटने वाले नही है। मैंने कहा, "समाज या राजनीति में कोई भी बड़ा परिवर्तन कठिनाइयों के सामने सिर नवाने वालों से नहीं आता। आम समाज १९४२ में यूनियन जैक लहराता था और अंग्रेज़ बहादुर की जय बोलता था। कांग्रेस के इक्के-दुक्के लोगों को आन्दोलन करते देखकर आम समाज हंसता था। उन्हें पागल कहता था। लेकिन इन्ही मुट्ठी-भर 'पागलों' ने कितना महान परिवर्तन किया। आज २० सूत्री कार्यक्रम की जयजयकार करने वालों की भरमार है। लेकिन जो लोग इस निराशाजनक स्थिति में हिम्मत से डटे है, संघर्ष कर रहे है, अन्याय-अत्याचार से लड़ रहे है, उनकी लड़ाई मामूली और महत्त्वहीन लडाई नहीं है। इस जद्दोजहद से ही परिवर्तन आएगा।" खैरियत यह गुजरी कि इस 'भाषण' के बावजूद मजिस्ट्रेट महोदय ने मुझे छोड दिया।

अपने से संबंधित कुछ और घटनाएं है, किन्तु उन्हें न बताने के लिए मैं मित्रों से वचनबद्ध हूं। मैं यह मानता हूं कि ये कोई असामान्य घटनाएं नहीं है। देश में हजारों भूमिगत कार्यकर्ताओं के अनुभव इससे कहीं ज़्यादा महत्त्व के

होंगे। मैं यह नहीं मानता कि जो कुछ मुझे भुगतना पड़ा, वह बहुत ही उच्च-कोटि की त्याग-तपस्या का रेकार्ड है। सच तो यह है कि इस आपातस्थिति में लाखों लोगों ने इससे कहीं अधिक कष्ट सहन किए हैं; भूमिगत आंदोलन में मुझसे कहीं अधिक और ज़्यादा महत्त्व का कार्य किया है। फिर भी चूंकि ये घटनाएं लेखक के अपने निजी जीवन मे घटित घटनाओं की अनुभूति है, अनुभूत प्रामाणिकता की दृष्टि से इनका अपना एक महत्त्व है।

सन्देश और आह्वान लोकनायक के

स्पष्टीकरण

आज ५ दिसम्बर, १९७५ है। गुर्दे के इलाज के लिए मैं जसलोक अस्पताल, बम्बई, में भर्ती हूं। साढ़े चार महीने के जिस एकाकी कारावास से मुझे अभी हाल में छोड़ा गया है, उसी अवधि में मेरे गुर्दे एकदम निकम्मे हो गए। इस खटके से कि कहीं मेरी मृत्यु न हो जाए, मैं भारत स्थित एवं विदेश स्थित मित्रों की सूचना के लिए यह कह देना चाहता हूं कि भारत की स्थिति आज भी वैसी ही है, जैसी वह २५ जून, १९७५ को थी अथवा जैसी वह जुलाई १९७५ को थी, जिस दिन मैंने प्रधानमंत्री को पत्र लिखा था। सच तो यह है कि तब से जो अप्रिय घटनाएं घटी हैं, उनसे मेरी आशंका दृढ़ ही हुई है कि इन्दिराजी तानाशाह है। मैं इस बात को इस दृष्टि से स्पष्ट कर रहा हूं कि मेरी मृत्यु हो जाने पर मेरी इस बात को कहीं तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत नहीं किया जाए। उस समय उसका सही स्वरूप कहने को तो मैं रहूंगा नहीं। मुझे आशा है कि भारत के लोग वर्तमान तानाशाही से अपने को शीघ्र ही अहिंसक ढंग से मुक्त कर सकने में समर्थ होंगे।

—जयप्रकाश नारायण
५-१२-१९७५
जसलोक अस्पताल

जसलोक अस्पताल, बम्बई (१३-१२-१९७५)

मैं शरमिन्दा हूं कि आप सब कैद में हैं और मैं आज़ाद हूं। यह परिस्थिति मेरी बीमारी ने पैदा की है। बीमारी में कैद से भी ज़्यादा बेबसी है, इसलिए समझ में नहीं आता कि आपको कौन-सा संदेश भेजूं। इसलिए इतना ही लिखकर संतोष करूंगा कि मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि हज़ारों—

शायद उनकी संख्या लाखों में हो—कुर्बानियां बेकार नहीं जा सकतीं और भारत का लोकतंत्र मौजूदा चुनौतियों का सफल मुकाबला करता हुआ अपनी वर्तमान अग्नि-परीक्षा से निकलकर सोधे हुए सोने की तरह निखर उठेगा। आप सबको हार्दिक शुभ कामनाएं।

—जयप्रकाश नारायण

तरुणों के नाम

जीवन विफलताओं से भरा है,
सफलताएं जब कभी आई निकट,
दूर ठेला है उन्हे निज मार्ग से।
तो क्या वह मूर्खता थी ?
नहीं।
सफलता और विफलता की
परिभाषाएं भिन्न है मेरी।
इतिहास से पूछो कि वर्षो पूर्व
बन नही सकता था प्रधानमंत्री क्या ?
किन्तु मुझे क्रांति शोधक के लिए
कुछ अन्य ही पथ मान्य थे, उद्दिष्ट थे,
पद त्याग के, सम्पूर्ण क्रांति के
पथ, संघर्ष के, सेवा के, निर्माण के।
जग जिसे कहता विफलता
थी शोध की वे मंज़िले
मंज़िले वे अनगिनत है
गन्तव्य भी अति दूर है।
रुकना नहीं मुझको कहीं,
अवरुद्ध जितना मार्ग हो।
निज कामना कुछ ही नहीं,
सब है समर्पित देश को।
तो विफलताओं पर सन्तुष्ट हूं अपनी
जो यह विफलता जीवन,
शत शत धन्य होगा,
यदि समान धर्मी प्रिय तरुणों का,

कंटकाकीर्ण मार्ग
यह कुछ सुगम बना जावे।

—जयप्रकाश नारायण
(जसलोक अस्पताल)
प्रतिरोध (भूमिगत मुख्यालय)
५ जनवरी, १९७६ से प्रकाशित

आह्वान : सभी स्वतंत्रता-प्रेमी भारतीयों के नाम

जो कार्यक्रम मैं सुझा रहा हूं, उसपर अगर गंभीरता के साथ अमल किया गया, और वह फैला और शक्तिशाली हुआ, तो टक्कर अनिवार्य हो जाएगी; लेकिन उसकी जिम्मेदारी हमारे ऊपर नहीं होगी, जिम्मेदारी होगी समाज की उन प्रतिक्रियावादी शक्तियों पर जो सरकार के नेतृत्व मे जनता की क्रांति को कुचलने की कोशिश कर रही है।

सुप्रीम कोर्ट ने 'हैवियस कारपस' के प्रश्न पर फैसला दे दिया। व्यक्ति की स्वतंत्रता की अन्तिम टिमटिमाती रोशनी भी बुझ गई। श्रीमती गाधी की तानाशाही अब लगभग पूर्ण हो गई—व्यक्ति के रूप में भी और सरकारी तंत्र मे भी। सभी स्वतत्रता-प्रेमी भारतीयों को साहस के साथ इस समस्या का सामना करना चाहिए कि किस तरह इतिहास का उलटा, प्रतिगामी प्रवाह फिर सही दिशा मे मुड़ेगा, और हम अपनी खोई हुई स्वतंत्रता वापस पाएंगे, और अपनी लोकतांत्रिक संस्थाएं फिर स्थापित कर सकेंगे। जाहिर है कि यह तभी हो सकेगा—अगर सविधान के रास्ते से करना हो तो—जब लोकसभा के मुक्त, शुद्ध और पक्षपातरहित चुनाव हों, जिनमे काग्रेस की हार हो और 'विरोधी' विजयी होकर अपनी सरकार बनाए। सही है, यह कहना आसान है, करना कठिन है, लेकिन यह भी उतना ही सही है, अगर ज़्यादा नही, तो इतना सब तो करना ही है। कैसे, यही प्रश्न है। मेरा सुझाव है कि :

(१) पूरे देश मे सभाएं हों—आम जनता की तथा विभिन्न संस्थाओ और संगठनों की—और उनमे मांग की जाए कि इमरजेंसी उठाई जाए, राजनैतिक बन्दी छोडे जाएं, लोकसभा के चुनाव कराए जाएं तथा प्रेस और बोलने की, विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता वापस दी जाए।

(२) जो लोग व्यक्ति की स्वतत्रता तथा स्वतंत्र, लोकतांत्रिक संगठनों में विश्वास करते है, वे फौरन, चाहे जिस तरह संभव हो, तीन-तीन, चार-

चार की टोली बनाकर जनता में घुस जाएं और लोगो को बताना शुरू कर दें कि क्या हो रहा है, और कौन-से बुनियादी सवाल पैदा हो गए है। श्रीमती गांधी की तानाशाही का रथ बढता चला जा रहा है, क्योंकि लोग चुप है, कुछ कर नही रहे है। लोग चुप और निष्क्रिय इसलिए है कि समझ ही नही रहे हैं कि क्या हो रहा है। एकतरफा प्रचार के कारण बहुत-से लोगो ने मान लिया है कि जो हुआ है, उनकी भलाई के लिए हुआ है। इसलिए सबसे पहला और जरूरी काम यह है कि लोगों को एक बार फिर बताया जावे कि स्वतंत्र और लोकतांत्रिक समाज के आधार क्या है, बुनियादी तत्त्व क्या है। यह काम समझदारी के साथ करना है। उसके लिए जरूरी है कि सरल भाषा में, जानकारी के साथ, और यह बताते हुए कि क्या करना है, पर्चे, फोल्डर, पुस्तिकाएं आदि तैयार की जाएं। जाहिर है कि इनका प्रकाशन और प्रचार गैरकानूनी ढग से ही हो सकेगा। बहुत-से लोग इन लिखित चीजों को पढ और समझ भी नही सकेंगे, लेकिन ये 'टेक्स्ट-बुक' का काम करेंगी। इन्हें छोटी-छोटी गोष्ठियों मे पढ़ा जाए, जिनमे ज्यादातर छात्र तथा अन्य युवक और युवतिया शरीक हों।

कहने की जरूरत नही कि जो लोग इस तरह के निर्दोष, शैक्षणिक काम में शरीक होंगे, वे भी पकड़े जा सकेंगे, जेल भेजे और पीटे जाएंगे, और उन्हें यातनाएं दी जाएंगी। उन्हे इन सबके लिए तैयार रहना होगा। लेकिन मुझे विश्वास है कि इस देश मे ऐसे काफी युवक और युवतिया है, जो इन खतरों को जानते हुए भी पीछे नही हटेंगे।

(३) जनता के शिक्षण के साथ-साथ जनता के संगठन का काम भी होना चाहिए। बिहार-आंदोलन मे जन-संघर्ष समिति और छात्र-सघर्ष समिति के रूप में संगठन हुआ था। मेरा सुझाव है कि बिहार के बाहर पूरे देश मे जो सगठन बने, उन्हे केवल 'नवनिर्माण समिति' कहा जाए। पहचान के लिए नाम के पहले 'ग्राम', 'नगर', 'छात्र' आदि शब्द जोड़े जा सकते है।

यह 'त्रिविध कार्यक्रम' है। मेरा खयाल है कि इस वक्त उन सभी लोगों को, जो जनता की शांतिपूर्ण क्रांतिकारी कार्रवाई मे, तथा स्वतंत्र, समान और आत्म-शासित नागरिकों के नये भारत मे विश्वास करते है, उन्हें यह 'त्रिविध कार्यक्रम' तुरंत उठा लेना चाहिए।

हो सकता है कि कुछ लोगों को यह कार्यक्रम फीका लगे, लेकिन मुझे आशा है कि अगर वे गहराई से सोचेंगे तो उनके विचार बदल जाएंगे। बिहार-

आंदोलन ने भी अपना लक्ष्य सरकार से टक्कर लेना नहीं माना था। टक्कर तो आंदोलन से यों ही निकल आई, और जब निकल आई तो टक्कर ली गई। जो कार्यक्रम मैं सुझा रहा हूं, उसपर अगर गम्भीरता के साथ अमल किया गया, और वह फैला और शक्तिशाली हुआ, तो टक्कर अनिवार्य हो जाएगी। लेकिन उसकी ज़िम्मेदारी हमारे ऊपर नहीं होगी, ज़िम्मेदारी होगी समाज की उन प्रतिक्रियावादी शक्तियों पर, जो सरकार के नेतृत्व में जनता की क्रांति को कुचलने की कोशिश कर रही है। ऐसा बिहार-आंदोलन मे हुआ, ऐसा ही अब भी होगा।

लेकिन, इतना ही नहीं करना है। जनता के आंदोलन का लक्ष्य था, और आज भी है, सम्पूर्ण क्रांति, अर्थात् व्यक्ति और समाज के हर क्षेत्र में क्रांति, ताकि जीवन आज से अधिक अच्छा हो, पूर्ण हो, और उसमें ज़्यादा सुख और समाधान हो। इसका यह अर्थ है कि काम के लिए विशाल क्षेत्र पड़ा हुआ है। भारत में जाति-प्रथा का मिटना कई दृष्टियों से वर्ग-प्रथा के मिटने से ज़्यादा ज़रूरी है। शिक्षा में क्रांति का दूसरा क्षेत्र है, जिसमें काम ही काम है। कितने ही उदाहरण दिए जा सकते हैं, किन्तु सबको गिनाना जरूरी नहीं है। समझ-बूझ रखने वाले, कल्पनाशील, सक्रिय साथी अपना कार्यक्षेत्र स्वयं चुन सकते है।

इस तरह का काम होगा तो सामाजिक (जाति के भी) और आर्थिक निहित स्वार्थों से संघर्ष की नौबत आ सकती है। और यह संभव है कि संघर्ष से कुछ क्षेत्रों में राज्य-सत्ता का सहयोग भी मिले।

जयप्रकाश नारायण
बंबई, २ मई, १९७६
(तरुण क्रांति, संघर्ष कार्यालय, पटना की ओर से प्रसारित)

लोक-शिक्षण दिवस

प्रिय साथी,

२६ जून, १९७५ स्वतंत्र भारत के इतिहास में सबसे काले दिन के रूप मे याद किया जाएगा। २५ जून, १९७५ तक भारत एक कार्यशील लोकतंत्र था, और रातों-रात वह एक वैयक्तिक तानाशाही में बदल दिया गया। तानाशाह श्रीमती इन्दिरा गाधी का अब यह दावा है कि भारत एक लोकतंत्र है और वे ही उसकी सर्वोत्तम रक्षक है। मेरा सुझाव है कि जनता, खासकर

युवा वर्ग, श्रीमती गांधी के इस दावे की कसौटी के तौर पर अगले २६ जून को सार्वजनिक सभाएं करे और जुलूस निकालकर अपनी स्वतंत्रता की घोषणा करे।

सभाओं के साथ-साथ मेरा सुझाव है कि सभी प्रकार की प्रकाशित सामग्री, पर्चों से लेकर पुस्तिकाओं तक, देश की विभिन्न भाषाओं में यथासंभव व्यापक पैमाने पर वितरित की जाएं। २६ जून को लोक-शिक्षण दिवस के रूप में मनाया जाए, और उस दिन जनता को नागरिक स्वतत्रता का अर्थ समझाते हुए यह बताया जाए कि यह स्वतंत्रता न केवल लोकतत्र की, बल्कि मानव-सभ्यता मात्र की बुनियाद है।

मेरी समझ से इस दिन को मनाने का यही सबसे अच्छा ढग होगा।

—जयप्रकाश नारायण

आपने क्या खोया है ?

इस वक्त हमारे देश में इमरजेंसी है, मीसा है, डी० आई० आर० है। क्या आप जानते हैं कि :

(१) पुलिस जब चाहे आपको गिरफ्तार कर सकती है? मीसा में गिरफ्तारी का कारण भी नही बताया जाएगा, और सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला दे दिया है कि आप किसी अदालत मे फरियाद भी नही कर सकते। आपका घर लूट लिया जाए, आपकी सम्पत्ति जब्त कर ली जाए, आप मार भी डाले जाएं, तो भी आप कानून की दुहाई नहीं दे सकते। पुलिस का राज है, वह जो चाहे कर सकती है।

(२) आप किसान हैं। आपकी लगान बढ गई है, बिजली, पानी, खाद का रेट बढ गया है। सरकार अपने रुपये की वसूली बड़ी बेरहमी से कर रही है। आप असहाय है। आप कुछ नही कर सकते।

(३) आप गरीब है, भूमिहीन है, मजदूर, हरिजन या आदिवासी है। आप यह भी नहीं कह सकते कि आप गरीब है। आप यह भी नही कह सकते कि बीस-सूत्री कार्यक्रम में जो लाभ मिलना चाहिए, आपको नहीं मिल रहा है। आपके लिए जो कानून बने हुए है, वे लागू नही किए जा रहे है। कहीं आपकी सुनवाई नही।

(४) आप पत्रकार है। आपकी कलम बन्द है। आप नहीं लिख सकते, जो लिखना चाहें; आपको वही लिखना पड़ेगा, जो सरकार चाहे।

(५) आप प्रोफेसर है, शिक्षक है। आप किसी गोष्ठी मे नही जा सकते, लेख या किताब नही लिख सकते।

(६) आप सामाजिक कार्यकर्त्ता है। आप सभा नही कर सकते। आप किसी बुराई या भ्रष्टाचार के खिलाफ नही बोल सकते; शांतिपूर्ण आंदोलन नहीं कर सकते।

(७) आप व्यापारी है। आपको अधिकारियों की पूजा करनी पड़ेगी, आप गलत काम करें या न करे। साथ ही युवक काग्रेस को चन्दा भी देना पड़ेगा।

(८) आप सामान्य नागरिक है। किसी काम के लिए सरकारी दफ्तर में जाइएगा तो पहले से अधिक घूस देनी पड़ेगी। इमरजेंसी है, रेट बढ गया है।

(९) नागरिक के जो अधिकार संविधान में माने गए थे, वे ठप कर दिए गए है। आपके बोलने, लिखने पर तो रोक है ही, आपके कही आने-जाने पर भी रोक लगाई जा सकती है।

(१०) सरकार की पंचवर्षीय योजनाएं फेल हो चुकी है। गरीबी और बेरोज़गारी तेजी से बढ़ रही है। विषमता घटती नहीं। निकम्मी शिक्षा बदली नहीं जाती। प्रशासन भ्रष्ट और बेकार है। न्यायालयों में न्याय नही मिलता। भूमि-व्यवस्था सामन्तवादी है। अपनी सारी निरंकुशता और विफलता को सरकार एकतरफा प्रचार से ढक रही है।

(११) आप मतदाता है। लोकतंत्र में आपको अपनी मर्ज़ी की सरकार बनाने का अधिकार है। लेकिन चुनाव नही कराया जा रहा है। फरवरी, ७६ में जो चुनाव होना चाहिए था, वह टाल दिया गया। आगे चुनाव कब होगा, कहना कठिन है और होगा तो मुक्त, शुद्ध और पक्षपातरहित होगा इसकी गारटी नहीं।

जयप्रकाश नारायण

(लोक-संघर्ष समिति, दिल्ली द्वारा प्रकाशित)

क्रांतिकारी अभिवादन

२६ जून, १९७६ को कुख्यात सत्ता कांग्रेस द्वारा लादी गई तानाशाही का एक साल पूरा हो गया। इस दौरान हज़ारों बहादुर साथियों को जेल में तरह-तरह के उत्पीड़नों का सामना करना पड़ा। आज भी उनमें से ज़्यादातर

लोग देश की विभिन्न जेलों मे बन्द है। उनका एक ही अपराध है कि उन्होंने तानाशाही के सामने झकना कबूल नहीं किया। दिनों-दिन भारतीय लोगों पर तानाशाही की गुलामी की जकड़न बढ़ती जा रही है। यह परीक्षा की घड़ी है।

मुझे पक्का भरोसा है कि सच्चे सत्याग्रही फौलादी संकल्प के साथ दृढता के साथ खड़े रहेंगे और अपनी आखिरी सांस तक पराजय स्वीकार नही करेंगे। हमारा संघर्ष चालू है, चालू रहेगा।

इस अवसर पर मैं अपने त्यागी हमराहियों को क्रांतिकारी अभिवादन समर्पित करता हूं।

जनता ज़िन्दाबाद, क्रांति ज़िदाबाद, लोकशाही जिंदाबाद।

—जयप्रकाश नारायण

सत्तारूढ़ दल हारेगा

लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने श्री विनोबा भावे से मिलने वर्धा जाते समय १४ जुलाई को एक विस्तृत वक्तव्य जारी किया।

इस वक्तव्य में लोकनायक ने सरकार से अपील की—

जल्दी से जल्दी चुनाव कराए जाए और चुनाव के पहले की स्थिति पैदा की जाए कि स्वतत्र और निष्पक्ष चुनाव हो सकें। देश में न तो आंतरिक अव्यवस्था है, न हिंसात्मक वातावरण है और न ही कोई बाहरी खतरा है। श्रीमती गांधी चुनाव इसलिए टाल रही है कि उन्हें चुनाव से व्यक्तिगत सत्ता समाप्त होने की आशंका है। स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के लिए आपातस्थिति को समाप्त होना चाहिए। नागरिक स्वतंत्रताओं, जिनमें प्रेस-स्वतंत्रता और संगठन की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है, पुनः लागू होनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता तो प्रतिपक्ष को चुनाव के बहिष्कार करने की सलाह दूंगा।

अगर स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव होते है तो मुझे विश्वास है सत्तारूढ़ कांग्रेस हारेगी। सत्ता खोने की आशंका के कारण श्रीमती गांधी ने मौलिक अधिकार समाप्त कर दिए है और अवधि-समाप्ति के बावजूद जनता को अपने प्रतिनिधि चुनने का मौका नहीं दिया जा रहा।

—जयप्रकाश नारायण

('जनवाणी', बंबई, अंक ३; दिल्ली लोक-संघर्ष समिति द्वारा,
१ अगस्त, १९७६)

मैं चुप नहीं बैठूंगा

अभी तक मुझे आशा थी कि आपातकाल की घोषणा के एक वर्ष पश्चात् उसे वापस लेकर चुनाव किसे जाएगे। किन्तु जब मीसा की अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई तो मेरी इस आशा पर पानी फिर गया है, परन्तु मैं निराश नही हूं, अभी भी मुझे विश्वास है कि इस परिस्थिति में भी परिबर्तन होगा। किसी भी यंत्र के पेच अधिक काल तक कसे नही जा सकते हैं। वह टूट जाते है। अतः इन्दिराजी को भी इन पेचों को ढीला करना ही पड़ेगा। किन्तु हम लोगों को प्रयत्नशील रहना चाहिए। जनता को चुनाव की मांग करनी चाहिए। हर पांच वर्ष के बाद अमूल्य मत देकर प्रतिनिधि का चुनाव करना यह अपना राजनैतिक अधिकार है। हमारा यह अधिकार लोकसभा का काल अनधिकृत रीति से बढ़ाकर हमसे छीन लिया गया है। उसे वापस लेने के लिए हमें संघर्ष करना चाहिए। इसके लिए विरोधी दलों को प्रयास करना चाहिए। गांव-गांव एकत्रित होकर जनजागरण कीजिए। जनता को इस कार्यक्रम के लिए शिक्षित करिए। चुनाव का परिणाम कुछ भी हो, किन्तु चुनाव होना ही चाहिए, यह आग्रह कीजिए। इन प्रयत्नों से ही कुछ न कुछ मार्ग निकल आएगा। विपरीत परिस्थिति है, किन्तु हतोत्साहित होकर निष्क्रिय न बैठिए। आज के युवा विद्यार्थी वर्ग को साथ लीजिए। कुछ करने की सामर्थ्य इन्हीमें है। कांग्रेसियों ने भी यह बात समझ ली है। उनको अपनी ओर आकर्षित करने हेतु काग्रेस वालों ने बहुत-से नाटक खेले है, किन्तु अधिक विद्यार्थी उनकी ओर आकर्षित नहीं हुए है। यही युवावर्ग मेरा आस्थास्थान है। पटना जाने के पश्चात् मैं जन-सघर्ष, छात्र-संघर्ष समितियों का पुनर्गठन करने के पीछे लगूंगा। गत वर्ष में यह संगठन कुछ शिथिल हो गया होगा। बहुसंख्यक कार्यकर्ता कारावास में ही होंगे, किन्तु जो भी बाहर है, उनका उत्साह मेरे जाने से बढ़ जाएगा। इन समितियों के माध्यम से ही कार्यकर्ताओं को गांव-गांव में पहुंचना चाहिए। आज यही एक आवश्यकता है। समाज में सबसे नीचे स्तर के लोगों से मिलना चाहिए।

गत अनेक वर्षों के चिंतन के पश्चात् मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि यदि देश में लोकतत्र रहना है तो भिन्न-भिन्न दलों का रहना आवश्यक है। अधिक से अधिक दो या तीन दल ही देश की राजनीति मे रहेंगे, तभी लोकतंत्र की यह गाड़ी ठीक ढंग से चल सकेगी। इसी निष्कर्ष के कारण समविचारी विरोधी दलों

को एक ही झण्डे के नीचे एकत्रित करने का प्रयास मैं कर रहा हूं। इस प्रयत्न मे काफी यश मिला है। आजकल समाचारपत्रों मे 'एक विरोधी पक्ष नही होगा' इस प्रकार की वार्ताए अनेक बार आ रही है। उनपर विश्वास रखना उचित नहीं होगा। एक विरोधी पक्ष निर्माण करने की प्रक्रिया में कई बाधाएं हैं। श्री चरणसिंहजी को लगता है कि यह प्रक्रिया जल्दी होनी चाहिए, अविलम्ब सभी पक्ष विसर्जित होकर एकत्रित हो जाने चाहिए। शायद चरणसिंह यह आसानी से कर सकेंगे। अन्य लोगों के लिए यह कठिन है। जनसघ तथा समाजवादी पक्ष के वहुसख्य नेता तथा जिम्मेदार कार्यकर्ता आज कारागृह मे है। अत उनके लिए दल का विसर्जन करने का निर्णय तुरन्त लेना ठीक नही है। अन्य भी कई समस्याएं है। किन्तु जल्दी एक दल का अवश्य निर्माण होगा। इन्दिरा जी तथा उनके अनुयायी गत ३-४ वर्ष से मेरे पर एक आरोप लगा रहे है कि प्रतिगामी लोगों से मैं घिरा हुआ हूं। जातिवादी फासिस्ट लोगों से मिलकर मैं कार्य कर रहा हूं किन्तु यह आरोप सर्वथा असत्य है। जानबूझकर मेरे तथा मेरे साथियों मे मतभेद निर्माण करने हेतु निराधार आरोप किए जा रहे है। यह बात मैंने पहले कई बार बताई है, तथा आज भी वही बात दोहरा रहा हूं। आर० एस० एस० तथा जनसघियों के सन्दर्भ में भी इस प्रकार के आरोप किए जाते है। किन्तु मैं विश्वास दिला रहा हूं कि ये लोग ऐसे नहीं है। अत्यन्त देशभक्त तथा त्यागी संघ के कार्यकर्ताओं जैसे कार्यकर्ता कांग्रेस मे भी बहुत कम होगे। देशहित के किसी भी कार्य मे वे पीछे नही रहे है। आन्दोलन मे भी कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़े है। उनका सदैव पूर्ण सहयोग रहा है। मैं निःसंदेह बताता हूं कि उनपर तथा मेरेपर किए जाने वाले ये आरोप व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए प्रचार की चरमसीमा हैं।

अधिक क्या बताऊं ? फिर से बम्बई आऊंगा और आपसे मिलूंगा या नहीं, यह मुझे मालूम नही है। यहां से जाने के पश्चात् क्या होगा, यह भी मुझे ज्ञात नहीं है। शायद मुझे पटना जाने भी नहीं देगे। इतना निश्चित है कि मैं निष्क्रिय नही बैठूंगा और आपको भी यही कहना चाहता हूं कि आप भी निराश न हों और निष्क्रिय न बैठें।

(लोकनायक जयप्रकाश :
विदाई समारोह पैम्फलेट से १४-७-१९७६)

साहित्यकार

मुझे साहित्यकारों पर गर्व है कि उन्होंने सेंसरशिप का दृढ़ता से विरोध किया है। कोई भी स्वाभिमानी लेखक अपनी स्वतंत्रता की कटौती स्वीकार नही करेगा। उनमे, खेद है, कुछ काली भेडे भी है। नौकरशाही मे बहुत थोड़े ही ऐसे हैं, जो तानाशाही के विरोधी है, बहुतांश तो सत्ता के दुरुपयोग मे ही मस्त है। वैज्ञानिकों और अभियंताओ के विषय मे मुझे विशेष ज्ञात नहीं, परन्तु मेरा विचार है, इनमे अधिकांश तानाशाही के विरोधी होंगे।

महिलाएं और युवक

श्रीमती इन्दिरा की तानाशाही के विपक्ष में महिलाएं भी उतनी ही सक्रिय है, जितने कि पुरुष। देश के विभिन्न भागों मे महिलाओं ने जेल-यातनाएं भोगी। महाराष्ट्र मे सोशलिस्ट एम० एल० ए० श्रीमती मृणाल गोरे ने गिरफ्तारी के पूर्व भूमिगत रहकर बहुत कार्य किया। महाराष्ट्र सरकार ने उन्हें जेल मे यातनाएं भी दी है।

नौजवान

युवकों ने तो संघर्ष का दृढता से मुकाबला किया है। मैं उनका अभिनंदन-करता हूं। भारत के नौजवान लोकतंत्र के संघर्ष में अपनी शक्ति और प्रतिभा प्रकट करने में मोर्चे की अग्रिम पंक्ति में रहे है।

आम चुनाव

जहां तक चुनाव का प्रश्न है, मैं सरकार से आग्रह करूंगा कि स्वतंत्र निष्पक्ष चुनाव के लिए योग्य वातावरण तैयार करो। कहीं कोई आन्तरिक गड़बड़ी नहीं है, न कहीं हिंसाचार है, न कोई बाह्य संकट है। श्रीमती गांधी ने तो चुनाव केवल इसीलिए टाल दिए थे, क्योंकि उन्हें स्वयं व्यक्तिगत सत्ता खोने का भय था।

आम चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष हों। इमरजेंसी अवश्य हटानी होगी और नागरिक स्वतंत्रताएं—संगठन की स्वतंत्रता—तथा प्रेस की स्वतंत्रता वापस करनी होंगी। अगर यह नही किया जाता है तो मैं विपक्ष को सलाह दूंगा कि वह चुनाव का बायकाट कर दे।

जनता दबी नहीं है

जनता दबी नहीं है। अगर निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव होते है तो मुझे विश्वास है कि कांग्रेस दल चुनाव न जीत सकेगा। इसी पराजय के भय से श्रीमती गांधी ने इमरजेंसी लगाकर जनता के मौलिक अधिकार अपहरण कर लिए है।

—जयप्रकाश नारायण

(१४-७-१९७६ को पटना जाते समय दिए गए वक्तव्य से)

तैयार करती है, जो अपने स्वार्थ पर छोटी-सी चोट सहन नहीं कर सकता और परीक्षा की पहली आंच लगते ही भाग खड़ा होता है। ऐसे लोग इतिहास नहीं बना सकते। उलटे इतिहास को विकृत करने के प्रयत्नों मे सहभागी होकर कलंक बन जाते है।

आगामी २१ अक्तूबर को भारतीय जनसंघ अपने जीवन के २५ वर्ष पूर्ण कर लेगा। आश्रम-व्यवस्था के अनुसार २५ के वर्ष बाद व्यक्ति का परिवार-जीवन प्रारम्भ होता है। संगठन के नाते अब हमें भी राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और सामाजिक न्याय मे निष्ठा रखने वाले सभी भारतीयों को बिना किसी भेदभाव के एक परिवार मानकर चलना है और तदनुरूप अपने दायित्व का निर्वाह करना है। जनसंघ के संस्थापक-प्रधान हुतात्मा डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने संसद में राष्ट्रवादी लोकतांत्रिक गुट का गठन कर जिस ऐतिहासिक प्रक्रिया को प्रारम्भ किया था, अब उसे अन्तिम रूप देने का अवसर आ गया है।

२५ वर्ष के कालखण्ड में हमने अनेक उतार-चढाव देखे है। प्रारंभिक विफलता ने हमें निराश नहीं किया। प्रयत्नसाध्य सफलता हमें विवेक-भ्रष्ट नही कर सकी। राष्ट्रीय संकट के प्रत्येक अवसर पर हम प्रथम पंक्ति मे रहे। आज एक भयावह अंधेरा हमारी असीमता के आलोक को निगल जाने पर तुला है। हमें ध्येयसिद्धि के लिए जीने, जूझने और आवश्यकता पड़ने पर मिटने के अपने सकल्प को दोहराना होगा। 'न दैन्यं, न पलायनम्'—अर्जुन की यह दोहरी प्रतिज्ञा ही हमारी उद्घोष होनी चाहिए। मेरे स्वास्थ्य में सुधार है।

सस्नेह, सादर,

भवदीय

अटलबिहारी वाजपेयी

संकल्प

टूट सकते हैं मगर हम झुक नहीं सकते

सत्य का संघर्ष सत्ता से, न्याय लड़ता निरंकुशता से;
अंधेरे ने दी चुनौती है, किरण अन्तिम अस्त होती है;
दीप निष्ठा का लिए निष्कंप, वज्र टूटे या उठे भूकंप;
यह बराबर का नहीं है युद्ध, हम निहत्थे, विरोधी सन्नद्ध;
हर तरह के शस्त्र से है सज्ज, और पशुबल हो उठा निर्लज्ज,
किंतु फिर भी जूझने का प्रण, पुनः अंगद ने बढ़ाया चरण;
होमने सर्वस्व हैं तैयार, समर्पण की मांग अस्वीकार

दांव पर सब कुछ लगा है रुक नहीं सकते ।
टूट सकते है मगर हम झुक नही सकते ।।

—अटलबिहारी वाजपेयी

('जनवाणी' से, दिल्ली प्रदेश सघर्ष समिति : वर्ष २, अंक ६)

जेल से आडवाणीजी का कार्यकर्ताओं के नाम पत्र

दक्षिण भारत का एक कारागार,
दिनांक १५ अगस्त, १६७६

प्रिय बन्धु, बहिन,

आपातस्थिति की घोषणा को एक वर्ष से अधिक समय बीत चुका है। इस कालावधि मे अन्य विरोधी दलों की भांति भारतीय जनसंघ की भी सामान्य गतिविधिया अवरुद्ध पडी है। जनसंघ के हजारों कार्यकर्त्ता मीसा के अधीन बन्दी है। कई हजार और है, जिनपर डी० आई० आर० के अधीन मुकदमे चल रहे है।

कुछ थोड़े-से लोग, नाना प्रकार के कष्ट और खतरे झेलते हुए बाहर का कार्य संभाले हुए है। उन बन्धुओं ने सुझाया है कि देश-भर में फैले जनसंघ-कार्यकर्त्ताओं के नाम एक पत्र लिखू। तदनुसार ही ये कुछ पंक्तियां लिपिवद्ध कर रहा हूं।

वर्तमान संकट को हमें स्पष्ट पहचानना चाहिए। सरकार का कहना है कि श्री जयप्रकाश नारायण और उनके साथ कार्य कर रहे विरोधी दलों ने, विशेषतः भारतीय जनसंघ ने—भारत की आन्तरिक सुरक्षा के लिए गंभीर संकट उपस्थित किया हुआ है, और इसीके निवारण के लिए आपातस्थिति की घोषणा की गई है।

जनसंघ से जिनका वैचारिक मतभेद भी रहा है, उन्होंने भी जनसंघ कार्यकर्त्ताओं की देशभक्ति और राष्ट्रनिष्ठा की सदैव प्रशंसा ही की है। जे० पी० या जनसंघ, देश की सुरक्षा के लिए संकट हैं, इससे बेहूदा, बेबुनियाद शायद ही कोई आरोप हो सका है।

इस आरोप को नकारते हुए भी मैं एक 'गुनाह' (यदि यह गुनाह है तो) स्वीकार करना चाहता हूं। जून, १६७५ में जे० पी० और जनसंघ और अन्य विरोधी दल, कुल मिलाकर एक 'संकट' अवश्य बन गए थे। यह संकट देश की सुरक्षा के लिए नही, अपितु कांग्रेस दल की राजनैतिक सुरक्षा के लिए था।

जून, १९७५ के गुजरात-चुनावों ने शासक दल को एक 'संकट' का तीव्र आभास करवा दिया। उन्हें लगने लगा कि जो सत्ता-परिवर्तन आज अहमदाबाद में हुआ है, वह कल नई दिल्ली में भी होगा। इसी 'संकट' को टालने के लिए केन्द्रीय सरकार ने अधिनायकवादी अधिकार संभाल लिए।

हमारी सुविचारित मान्यता है कि शासन की कमियों और दुर्नीतियों पर प्रबल प्रहार करते रहना, और ठीक प्रकार से काम न करने वाले शासक दल को असुरक्षित अनुभव करवाना, एक स्वस्थ विरोधी दल का अधिकार ही नहीं, यह उसका लोकतंत्रीय कर्त्तव्य है।

गत वर्ष मे कार्यकर्त्ताओं ने जितना कष्ट सहा है, वह वास्तव में इसी लोकतंत्री मान्यता के लिए दी गई कीमत है। स्थान-स्थान पर उन्हें शारीरिक यातनाए सहनी पड़ी है। अनेकों बन्धुओं ने सीखचों के पीछे प्राण गंवाए है। सैकड़ों छात्र परीक्षाओं मे नही बैठ पाए है। बहुतों को स्कूल-कालेज में प्रवेश से वचित कर दिया गया है। सहस्रों परिवार आर्थिक दृष्टि से बरबाद हो गए है। लोकतंत्र की पुनर्स्थापना के लिए चल रहे वर्तमान यज्ञ में हमारे कार्य-कर्त्ताओं ने जो बलिदान किया है, उसपर हम गर्व कर सकते है। जनसंघ के संस्थापक डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी लोकतंत्र के अनन्य उपासक थे। उनके अनुयायी तानाशाही के साथ समझौता नहीं कर सकते।

आज ऐसे सहस्रों कार्यकर्त्ता है (जेलों के भीतर और बाहर), जो सर्वस्व की बाज़ी दाव पर लगाकर मैदान में उतरे हुए है। हो सकता है, आप भी उनमें से हों। यदि अब तक नही है, अब इन क्षणों में शामिल हो सकते है, तो आपका सहर्ष स्वागत है।

इस पत्र द्वारा मैं इस बात पर बल देना चाहता हूं कि अपनी मर्यादा में रहते हुए भी आप कई प्रकार से लोकतंत्र की सेवा कर सकते है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी सेवा है, चारों ओर फैले भय के वातावरण को विदीर्ण करना। भय और आतंक तानाशाही के प्रमुखतम स्तंभ है, इन्हें प्रयासपूर्वक तोड़ डाले। अपने मित्र-वर्ग में, अपने व्यावसायिक क्षेत्र में सदैव सत्य, साहस और स्वाभि-मान की भाषा बोलें, ऐसा वातावरण निर्माण करें, जिससे चापलूसी और चाटु-कारिता के लिए लोगों के मन में सहज ग्लानि पैदा हो।

इसके अतिरिक्त मर्यादा में रहकर कार्य करने वाले बन्धुओं से अपेक्षा है कि वे संघर्षरत कार्यकर्त्ताओं का तन-मन-धन से सहयोग करें। सहयोग का रूप आप स्वयं निश्चित कर सकते है। आपसे सम्पर्क करने वाले प्रमुख कार्यकर्त्ता

बन्धुओं को अपनी मर्यादा स्पष्ट बताएं और उस मर्यादा के अन्दर रहते हुए अधिकाधिक योगदान की भूमिका के बारे में परामर्श करें। मुझे विश्वास है कि यह मर्यादित सहयोग भी अमूल्य सिद्ध होगा।

आदर व स्नेह के साथ,

आपका एक परिचित कार्यकर्त्ता बन्धु
लालकृष्ण आडवाणी
('जनवाणी' द्वारा प्रसारित)

फासिस्ट कौन ?

(१) जो गोयवेल्स (जर्मन नात्सी) की तरह झूठ बोलने में माहिर हो। श्रीमती इन्दिराजी से बढकर झूठा या झूठी दुनिया में आज शायद ही कोई है।

(२) जो जनतान्त्रिक संविधान को प्रचंड बहुमत के बल पर हिटलर की तरह तानाशाही कायम करने के लिए इस्तेमाल करे। श्रीमती इन्दिराजी हिटलरी तरीके को इस्तेमाल कर रही हैं।

(३) जो हुकूमत हथियाने के लिए मुसोलिनी की तरह हिंसा का सहारा ले। श्रीमती इन्दिराजी भी हुकूमत हथियाने और बनाने के लिए झूठतन्त्र, पैसा-तंत्र, लाठीतंत्र, जाततंत्र, भ्रष्टतंत्र और हिंसातन्त्र का सहारा लेती रही है।

(४) जो यह मानता या मानती हो कि दुनिया की सभी अक्ल का खजाना, सारी देशभक्ति, जनकल्याण भावना, शांतिप्रेम और अनुशासन-प्रेम सिर्फ सत्ताधारियों की बपौती है, किसी और का धर्म या कर्त्तव्य नही।

(५) जो मानता या यह मानती हो कि बोलना है तो केवल मैं बोलूंगा या बोलूंगी, कोई और नही और मेरे विरुद्ध तो कदापि नहीं; लिखना है तो केवल वही लिखना होगा, जो मुझे पसंद या मंजूर होगा, कुछ और नहीं; सुनना है तो सिर्फ मुझको सुनना होगा, किसी और को नहीं; वोट देना है तो सिर्फ मुझको देना होगा, किसी दूसरे को नहीं; फैसला (जजमेंट) देना है तो मेरे पक्ष में देना होगा, मेरे विरुद्ध कदापि नहीं।

(६) जो यह मानता या मानती हो कि विरोधियों पर एकतरफा अभियोग लगाए जाएगे, उन्हे काला चित्रित किया जाएगा और जेलों में बंद रखा जाएगा मगर न तो उन्हें ज़मानत देने का हक होगा और न अदालत मे जाने का।

(७) जो यह मानता या मानती है कि असहमति अपराध है, विरोधियों की जगह जेलों में है, एसेम्बली और पार्लियामेंट रबर-स्टाम्प है और रेडियो

तथा समाचारपत्र सत्ताधारियों की सेवा, स्वार्थ और स्तुति के लिए है।

(८) जो यह मानता या मानती हो कि न्यायालयों के न्यायपंख काटने होंगे, सत्य और न्याय का गला घोंटना होगा तथा आजादी और जनतंत्र आदर्शों को दफना देना होगा।

(९) जो यह मानता या मानती हो कि सच कहना धर्म नही, बल्कि बगावत है और स्वतंत्रता का दावा करना जन्मसिद्ध अधिकार नही, बल्कि शरारत है !

—कर्पूरी ठाकुर
१७-११-७५

अशोक मेहता का संदेश

संगठन कांग्रेस और लोक-संघर्ष समिति के अध्यक्ष श्री अशोक मेहता ने अपनी रिहाई के बाद निम्न बयान जारी किया :

"आपातस्थिति की समाप्ति, नागरिक स्वतंत्रताओं और अधिकारों, लोकतंत्री परम्पराओं की रक्षा के लिए बहुत-सी कठिनाइयों को लेकर भी संघर्षरत रही लोकतंत्री शक्तियों का एका—ये हमारे मुख्य लक्ष्य है। हम अपनी पूरी ताकत से इनके लिए जुटे रहें।"

('जनवाणी'—लोक-संघर्ष समिति,
दिल्ली से प्रसारित)

कैदियों के परिवारों की मदद करो : विनोबा

आचार्य विनोबा भावे ने प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को राजनीतिक बन्दियों के परिवारों की सहायता करने के बारे में कहा है। यह पवनार आश्रम से आचार्य विनोबा के सचिव श्री बाल विजय के एक पत्र में कहा गया, जो उन्होंने साधना ट्रस्ट के यदुनाथ थट्टे के नाम लिखा था। पत्र पर १९ अप्रैल की तारीख है। पत्र में यह भी लिखा है कि 'बाबा' ने ट्रस्ट को यह जानकारी देने की इच्छा प्रकट की थी।

सर्वोदयी दार्शनिक आचार्य दादा धर्माधिकारी, अन्ना साहब सहस्रबुद्धे, केदारनाथ, एम० एम० जोशी, गोविन्द शिन्दे और यदुनाथ थट्टे ने बाबा की इच्छा को ध्यान में रखकर नागरिकों से यह अपील की है कि वे अपनी शक्ति-भर इन बन्दी नागरिकों के परिवारों की मदद करें, जो भारी तकलीफों का

मुकाबला कर रहे है। उन्होंने आचार्य विनोबा से इस अपील पर हस्ताक्षर करने को कहा है। उनका विचार यह है कि राजनैतिक बंदियों, जिनके बहुत-परिवारों में आज बच्चों की फीस भी जुटानी मुश्किल हो गई है, कुछ मकान का किराया तक न दे पा रहे, कुछ इलाज का इन्तज़ाम नही कर पा रहे, ऐसे परिवारों को नागरिकों की भरपूर मदद मिलनी चाहिए।

यह समाचार इंडियन एक्सप्रेस के बम्बई संस्करण में ५ मई को प्रकाशित हुआ, लेकिन इसके बाद उसका प्रकाशन सरकारी आदेश से तत्काल रोक दिया गया। ('जनवाणी'—लोक-सघर्ष समिति, दिल्ली से)

दूर देश की प्रतिध्वनियां

लोकनायक जयप्रकाश की गिरफ्तारी पर विश्व के जनतंत्र-प्रेमियों में तीव्र रोष

तानाशाह को अपनी परछाई से भी डर लगता है। इन्दिरा गांधी भी आजकल अपने साये से भयभीत है। देशी समाचारपत्रों पर अंकुश लग चुका है, और मैडम तानाशाह आजकल विदेशी पत्रों मे छपी खबरों पर रोना रो रही हैं। राजधानी स्थित समस्त विदेशी पत्रकारों के पास प्रेस सेंसर बोर्ड द्वारा तैयार परिपत्र भेजा गया था, जिसमें प्रधानमंत्री के चुनावयाचिका-सम्बन्धी आपातकालीन स्थिति और उमड़ते जन-विरोध-सम्बन्धी खबरें न भेजने का निर्देश दिया गया था। समस्त पत्रकारों ने उसपर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया, जिसके फलस्वरूप वाशिंगटन पोस्ट, न्यूज़वीक, टाइम्स, डेली टेलीग्राफ (लन्दन) आदि कई समाचारपत्रों के संवाददाताओं को भारत से निकाल दिया गया है और अब वे विदेशों में जाकर इन्दिरा-गिरोह की काली करतूतों का भंडाफोड़ कर रहे हैं। स्टेट्समैन के भूतपूर्व संपादक और स्व० लालबहादुर शास्त्री के प्रेस-सचिव श्री कुलदीप नैयर इस समय तिहाड़ जेल मे हैं। उनपर आरोप है कि उन्होंने प्रेस क्लब, दिल्ली में १०० पत्रकारों की सभा करके आपातस्थिति का विरोध किया और विदेशी पत्रों के लिए लेख लिखे। निर्भीक एवं निष्पक्ष बी०बी०सी० लन्दन के भारत स्थित प्रतिनिधि मार्क टैली को भारत से निकाल दिया गया है।

विदेश—नोबेल पुरस्कार विजेता मिस्टर फिलिप नौइल बैकर, जिन्होंने भारतीय स्वतंत्रता (१९४७) का बिल ब्रिटिश संसद में पेश किया था, ने एक तार भेजकर इन्दिरा गांधी से समस्त राजनैतिक बंदियों की रिहाई का अनुरोध किया है।

ले कामित, डाइरेक्टर फ्रांस सोशलिस्ट पार्टी ने ५ जुलाई को निम्न वक्तव्य दिया :

"भारत सरकार द्वारा उठाए गए लोकतंत्र-विरोधी कदमों की हम निंदा करते हैं। सरकार ने उन व्यक्तियों को बंदी बनाया है, जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का लोकतंत्र-प्रेमी माना जाता रहा है। भारत में पुनः नागरिक स्वाधीनता की स्थापना के लिए जरूरी है कि गिरफ्तार लोकतंत्र-प्रेमियों को तुरन्त रिहा किया जाए।"

● **शेम**—सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी के लोअर हाउस में भारत की आपात-कालीन स्थिति को लेकर बहस हुई है। उनके नेता श्री करिगरियों ने अपने विदेशमंत्री से मांग की कि वे तुरन्त भारतीय हाई कमिश्नर को बुलाकर अपना रोष प्रकट करें और समस्त राजनैतिक बदियों की रिहाई अथवा उनपर खुली अदालत में मुकदमा दायर कराने की आवाज़ उठाएं।

विदेशों में १५ से अधिक देशों में 'जयप्रकाश रिहा करो' कमेटी कार्य कर रही है।

● लन्दन में १४ अगस्त को कई हजार लोकतंत्र-प्रेमियों द्वारा विशाल प्रदर्शन आयोजित किया गया। नवयुवक प्लेकार्ड लिए हुए थे, जिनप्र लिखा था—'डाउन विद इन्दिरा, सेव जयप्रकाश, सेव डेमोक्रेसी'। जुलूस का नेतृत्व वहां के हाउस ऑफ कामन्स के दो सदस्यों ने किया। इससे पूर्व कंज़रवेटिव व लेबर पार्टी के एक दर्जन मेंबरों ने भारत को समस्त प्रकार की सहायता बंद करने की मांग की है।

अमेरिका के शिकागो शहर में भारत की आपातस्थिति के विरोध में प्रदर्शन हुआ, जिसमें शिकागो विश्वविद्यालय के उपकुलपति और भूतपूर्व मेयर ने भाषण किए।

● इटली में भारतीय दूतावास के सामने प्रदर्शन हुआ। वहां पर स्थित भारतीय राजदूत श्री अप्पा पंत ने इन्दिरा को पत्र लिखकर वहां की जनता की नाराज़गी का ज़िक्र किया है और निकट भविष्य मे इटली न आने का अनुरोध किया है।

कम्युनिस्ट चीन ने अपने प्रमुख समाचारपत्रों एवं रेडियो द्वारा राष्ट्रीय नेताओं की गिरफ्तारी का विरोध किया।

'प्रतिरोध', युवा विद्रोह का वाहक, भूमिगत मुख्यालय द्वारा
१० सितम्बर, १९७५)

भारत की सेना द्वारा आपातस्थिति का विरोध

वाशिंगटन पोस्ट के खबरनवीस श्री लुइस एन० साइमंस ने १० जुलाई को बैंकाक से लिखे अपने एक नोट में कहा कि भारत की प्रधानमंत्री आपातस्थिति की घोषणा करने के बाद, हजारों विरोधी नेताओं को गिरफ्तार करके प्रेस पर सेंसर लगा करके दो हफ्ते के बाद भी घबराई हुई है, क्योंकि उसे अपनी सेना पर पूरा यकीन नहीं है; क्योंकि उसने बार-बार अपने वक्तव्यों, इण्टरव्यू एवं भाषणों मे लोकनायक जयप्रकाश नारायण पर यह आरोप लगाया है कि वे सेना और पुलिस को भड़का रहे थे। सरकारी आकाशवाणी द्वारा भी यह प्रचार करवाया गया कि सेना अनुशासनप्रिय है। भारत की सेना के ९ लाख जवानों को सदैव अपनी शानदार परम्परा पर गर्व रहा है। सेना के अफसर बराबर यह दबाव डाल रहे हैं कि कठपुतली राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद प्रधानमंत्री से त्यागपत्र दिलवाएं, कांग्रेस अपना नया नेता चुन ले। सरकारी सूत्रों ने आज तक इस बात का खण्डन नहीं किया है कि फील्ड मार्शल मानेक शाह घर में नजरबन्द हैं।

नई दिल्ली रीजन के सेना के वरिष्ठ अधिकारी का कोर्ट मार्शल किया गया है, जिसका प्रतिवाद भी सरकारी सूत्रों ने नहीं किया है।

भारत की सेना के बहादुर अफसर श्री रैना को थलसेनाध्यक्ष बनाने के कारण भी क्षुब्ध है।

('प्रतिरोध-समाचार' से प्रकाशित, १०-९-१९७५)

मानव-अधिकार : एक प्रस्ताव

५ मार्च, १९७६ के न्यूयार्क टाइम्स में पाल ग्राइम्स की एक रपट प्रकाशित हुई है, जिसमें ८ अमरीकियों द्वारा पारित एक विरोध-प्रस्ताव का विस्तार से उल्लेख है। प्रस्ताव में २६ जून, १९७५ को भारत में आपातस्थिति की घोषणा और नागरिकों के मानवीय अधिकारों की समाप्ति पर गहरी चिंता व्यक्त की गई है। साथ-साथ यह मांग भी की गई है कि भारतीय नागरिकों के ये अधिकार शीघ्र वापस किए जाए और श्रीमती गांधी की वैयक्तिक तानाशाही का दौर खतम हो। प्रस्ताव के शब्द हैं :

> हम मानव अधिकारों को सुरक्षित बनाए रखने और उन्हें आगे बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध अमरीकी नागरिक हैं, और हमारी यह प्रति-

बद्धता सारी दुनिया की जनता के लिए है। इसलिए २६ जून, १६७५ को आपातस्थिति की घोषणा के बाद भारत मे नागरिकों के जो मूल अधिकार नष्ट किए गए है हमें उससे गहरा दु:ख पहुंचा है। सरकार के आलोचक हजारों की संख्या में गिरफ्तार किए गए है। उन्हें न तो उनका अपराध पता है और न वो किसी अदालती कार्रवाई का अधिकार ही रखते है। प्रेस पर गहरी सेंसरशिप लागू है और वह पूरी तरह सरकारी नियंत्रण मे आ गया है और अब आपातस्थिति की अवधि भी बढ़ा दी गई तथा राष्ट्रीय चुनाव भी स्थगित कर दिए गए है।

हम भारत में होने वाली इन घटनाओं की विशेष रूप से भर्त्सना करते है, क्योंकि वहां आज़ादी की एक लंबी लड़ाई के बाद लोकतंत्र की स्थापना हुई थी, और इस लड़ाई का नेतृत्व किया था उन लोगों ने, जो इस शताब्दी में मानव-अधिकारों के सबसे महान प्रवर्तकों मे रहे है। हम इसलिए भी इनकी भर्त्सना करते है कि लोकतांत्रिक भारत ने मानव-अधिकारों के प्रति जो सम्मान व्यक्त किया था, वह वर्षो से नये आजाद होने वाले और प्रगतिशील देशों के लिए प्रकाश स्तंभ की तरह था।

अनुभव यह बताता है कि जब किसी एक जगह मानव-अधिकारों का दमन होता है तो सभी जगहों पर ये अधिकार खतरे में पड़ जाते है। और यह भी कि जितने ज़्यादा दिनों तक इन्हें दबाकर रखा जाता है, उतने ही ज़्यादा दिन इन्हें वापस करने में लगते है। इसलिए हम यह मांग करते है कि भारतीय नागरिकों के ये मानव-अधिकार वापस लौटाए जाए।

प्रस्ताव तैयार और प्रसारित करने में मुख्य भूमिका रही श्रीमती डोरोथी नार्मन की, जिन्होंने जवाहरलाल नेहरू का जीवन-चरित्र लिखा है। इनके अलावा हिन्दुस्तान टाइम्स के भूतपूर्व संवाददाता सिडनी हर्जवर्ग और पोरट्रेट आफ इंडिया के लेखक तथा न्यूयोर्कर मैगज़ीन से संबद्ध वेद मेहता भी है। हस्ताक्षर करने वालों मे विज्ञान, कला, शिक्षा, पत्रकारिता, खेलकूद, साहित्य और संगीत के क्षेत्रों में प्रतिष्ठित लोग शरीक है। इसमें टेनिस चैम्पियन आर्थर ऐश, भाषा-विशेषज्ञ डा० नौम शोम्सकी, प्रख्यात कवि एलेन गिंसबर्ग, लोकगीत गायक जोन ब्रांज, हारवर्ड विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग के प्रो० डा० डेनियल ब्रेल, प्रसिद्ध कलाकार रिशा एकाउस, न्यूयार्क विश्व--

विद्यालय के अंग्रेजी विभाग के प्रो० इर्विंग हो, विश्वधर्म और शान्ति सम्मेलन के प्रधान सचिव डा० होमर जैक, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश डा० फिलिप जेसप, अमेरिका की एम्नेस्टी इंटरनेशनल के अध्यक्ष डा० इवान मोरिस, प्रसिद्ध लेखक जान अपडाइक के साथ-साथ चार नोबेल पुरस्कार विजेता भी शामिल है, जिनके नाम है—सालवेडार लूरिया (मेडिसिन : १९६९), डा० लाइनस पार्वलिंग (रयासनशास्त्र : १९५४), डा० पाल सैमुएलसन (अर्थशास्त्र : १९७०) और डा० जार्ज वाल्ड (शरीर-विज्ञान : १९६७)

ये हस्ताक्षर अमरीकी जीवन के उस प्रबुद्ध वर्ग की नुमाइंदगी करते हैं, जो मानव-अधिकारों में अटूट विश्वास रखता है और विश्व के किसी भी भाग मे इनकी सुरक्षा और प्राप्ति के लिए छेड़े गए संघर्ष का पूरा-पूरा समर्थन करता है।

('तरुण क्रान्ति', बिहार प्रदेश छात्र जन-संघर्ष समिति की बुलेटिन ५-६-१९७६)

प्रवासी भारतीयों का लंदन सम्मेलन

भारत में लोकतंत्र को पुन: वापस लाने के लिए २४-२५ अप्रैल, १९७६ को लंदन में हुए प्रवासी भारतीयों के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने कहा कि इन्दिरा गांधी जिस राह पर चल रही है, वह लोकतन्त्र की नही, हिटलर, मुसोलिनी और स्टालिन की राह है, जो तानाशाही की मंजिल पर पहुंचकर ही समाप्त होती है।

भारतीय जनसंघ के संसद सदस्य श्री सुब्रह्मण्यन स्वामी की अध्यक्षता में सम्पन्न इस सम्मेलन में गुजरात की जनता मोर्चा सरकार के भूतपूर्व मंत्री श्री मकरद देसाई विशेष रूप से उपस्थित थे।

इसके अतिरिक्त श्री डी० डी० शाह द्वारा लिखित 'इमरजेंसी एण्ड आर०एस०एस०' और श्रीमती गांधी के नाम एक खुला पत्र विशेष रूप में पठनीय है। इसमें पुलिस-अत्याचार से पीड़ित तथा घायलों के चित्र भी छापे गए है।

श्री स्वामी ने कहा कि प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा यह कहना कि केवल मुट्ठी-भर लोग ही गिरफ्तार किए गए है तथा उन्हे छोड़ भी दिया गया है, स्थिति सामान्य है, सरासर झूठा प्रचार है। १,७५,००० से भी अधिक

व्यक्ति बिना मुकदमा चलाए जेल मे बन्द कर दिए गए। अंग्रेज़ों के शासन-काल में भी यह संख्या ४५ हज़ार से अधिक कभी नही हुई।

श्री स्वामी ने कहा कि इमरजेसी के कारण देश के अन्दर अपने विचार व्यक्त करने के सभी रास्ते बन्द कर दिए गए है। फलस्वरूप जनता विद्रोह की और बढ़ने लगी है। समाचारपत्रों पर सेसरशिप लागू होने, प्रमुख व्यक्तियों एवं नेताओं सहित हजारों व्यक्तियों की नजरबन्दी और सत्ताशक्ति एक व्यक्ति के हाथों मे केन्द्रित हो जाने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे रूस द्वारा भारतीय शासन का तख्ता पलटकर उसपर अपना एकाधिकार जमाने की योजनाएं पूर्ण करना आसान माना जा रहा है।

प्रतिनिधियों के भाषण

डा० फारीक प्रेसवाला (न्यूयार्क सिटी)—धनियों की अपेक्षा गरीबों के लिए लोकतंत्र अधिक आवश्यक है। धनिक वर्ग अपनी समस्याएं किसी भी प्रकार की सरकार में स्वयं हल कर लेते है।

डा० डी०के० हरदास (सर्जन, बोस्टन)—इमरजेसी की प्रशंसा करने वाले लोग, तथ्यों से सर्वथा अनभिज्ञ है। अब तो मेरा धैर्य समाप्त हो रहा है। मैं इस परिस्थिति को समाप्त करने के लिए कुछ भी करना चाहता हूं।

जयन्ती भाई (केनिया)—हम समय की मांग के अनुरूप नेतृत्व उत्पन्न करने में अवश्य सक्षम होंगे। आपने कहा कि हमें इस सम्बन्ध में शीघ्र कार्य-वाही करनी चाहिए, क्योंकि भारत का मस्तक समस्त विश्व में कलंकित हो रहा है।

डा० गणेश्वरदयाल (म्यूनिख, प० जर्मनी)—एक झूठ को छिपाने के लिए अनेक झूठ बोलने पड़ते है। आज श्रीमती इन्दिरा गांधी यही कर रही हैं।

इकबाल दत्त (केनिया)—हमें संगठित होना पड़ेगा। हम १९४२ की तरह का एक आन्दोलन शुरू करेंगे।

श्री महेतानी (पश्चिमी जर्मनी)—आपने कहा कि भारतीय संस्कृति हिंसा का निषेध करती है, किन्तु यदि हमने दृढतापूर्वक आज की परिस्थिति का प्रतिरोध न किया तो शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से नपुंसक माने जाएंगे।

श्री अनिल मेहता—श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भारतीय आस्था की मर्या-दाओं का उल्लघन किया है, किन्तु इस एकाधिकारवादी शासन से अपनी मुक्ति

के लिए वीर भारतीय उसी प्रकार संघर्ष करेंगे, जिस प्रकार उन्होंने विदेशी सत्ता की गुलामी से आजाद होने के लिए किया था। इनके अलावा, राजन सोन (बिले विश्वविद्यालय), विनयचन्द्र (थामइलफोर्ड), राजन कुलकर्णी, जे० एन० ग्रेन (लिसेस्टर), देवराज चरण (मारिशस) आदि ने तानाशाही का विरोध किया।

'न्यूयार्क टाइम्स' की टिप्पणी

२५ अप्रैल, १९७६ के 'न्यूयार्क टाइम्स' ने लिखा है कि :

"विदेशस्थ भारतीयों ने आज इन्दिरा गांधी द्वारा लागू की गई इमरजेंसी का विरोध करते हुए यह घोषणा की कि भारत मे लोकतंत्र की पुनः वापसी के लिए विश्वव्यापी अभियान चलाएंगे।

"इस सम्मेलन मे लगभग ३०० प्रतिनिधि उपस्थित थे, जिनमे समाज के प्रबुद्ध वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले एडवोकेट, प्राध्यापक, व्यापारी तथा छात्रों की उपस्थिति उल्लेखनीय थी। इसमे इंगलैंड के अतिरिक्त अमरीका, केनिया, वेनेजुएला, पश्चिमी जर्मनी और अन्य अनेक यूरोपीय देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

"सम्मेलन का समर्थन करनेवाले जो सन्देश भारत से प्राप्त हुए, उनमे श्री एन० जी० गोरे, टी० एन० सिंह, चौधरी चरणसिंह और श्री नम्बूदिरीपाद के नाम उल्लेखनीय है।"

सम्मेलन द्वारा पारित प्रस्ताव

फ्रेण्ड्स ऑफ इण्डिया सोसायटी द्वारा आयोजित इस सम्मेलन में भारत की आन्तरिक स्थिति पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त करते हुए जो प्रस्ताव पारित किए गए, उनमें कहा गया है कि विदेश स्थित हम भारतीय वहां की जेलों में और बाहर भी पुलिस द्वारा किए जा रहे अत्याचार एवं यातना के समाचारों से बहुत ही आतंकित है। इस प्रकार की घटनाएं मानवाधिकारों की खुली अवमानना और उल्लंघन है। समाचारपत्रों पर सेंसर लागू होने और गुप्तता की कड़ी व्यवस्था के भी जो समाचार प्राप्त हुए है वे उस असीम अत्याचार के अंशमात्र है, जो भारत की जनता को नित्य प्रति झेलने पड़ रहे हैं। भारत की जनता पर इस प्रकार जुल्म ढाने वाली इन्दिरा गांधी की सरकार की हम कटु

निन्दा करते है। इस प्रकार के अमानुषिक कृत्य करने वालों को जब तक उनके किए का प्रतिफल नहीं मिल जाता, हम चैन की सास नहीं लेगे।

८० अमरीकियों द्वारा भारत सरकार से अपील

अमरीका के ८० महत्त्वपूर्ण लोगों ने, जिनमें से अधिकांश विश्वख्याति के है, भारत में चल रहे दमन-चक्र के प्रति गहरी चिन्ता व्यक्त की है और भारत सरकार से कहा है कि मौलिक मानव-अधिकारों को पुन: बहाल किया जाए।

यह वक्तव्य अपनी तरह का पहला वक्तव्य है, जिसमें प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी को लिखे अपने पत्र मे अमरीकियों की चिन्ता प्रकट की गई है। उन्होंने कहा है कि हम व्यक्ति के नाते न कि एक समूह के नाते यह लिख रहे है।

हस्ताक्षर करनेवालों मे विश्व टेनिस चैम्पियन आर्थर ऐसा, अमरीकी नागरिक स्वतंत्रता संगठन के रोज़र वाल्डवीन, प्रो० डेनियल ब्रेल, हारवर्ड विश्वविद्यालय, भूतपूर्व महाधिवक्ता रेमज़े क्लाक, कवि एलेन गिन्सबर्ग, नोबेल पुरुस्कार विजेता लिगम सो, पालिग, मजदूर नेता अलबर्ट शंकर, काले लोगों के लिए लड़ने वालों की राष्ट्रीय समिति के निर्देशक रेविलकिन आदि है।

मानव-अधिकारों के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय लीग के मुख्यालय ने श्रीमती गांधी के नाम मानव-अधिकारों के दमन-विरोध में एक कड़ा पत्र भेजा है।

६ हस्ताक्षरकर्त्ताओं मे स्वीडन के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री गुन्नार मिरडाल भी हैं। 'एशियन ड्रामा' के लेखक मिरडाल पं० नेहरू और श्रीमती गांधी के बड़े चहेते और मित्र अर्थशास्त्री रहे है। उनकी पत्नी भारत में स्वीडन की राजदूत थीं। श्री गुन्नार मिरडाल कई बार भारत आ चुके हैं।

उनकी आलोचना से परेशान होकर हाल ही में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन के दौरान केन्द्रीय मंत्री श्री टी० ए० पाई ने अप्रत्यक्ष रूप से उनकी ओर इंगित करते हुए कहा कि उन्हें भारतीय स्थिति की जानकारी नहीं है।

('जनवाणी' से, वर्ष-२, अंक-४०
दिल्ली लोक-संघर्ष समिति)

बड़े बेआबरू होकर

वाकया वाशिंगटन का है। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के उपमंत्री श्री धर्मवीर सिन्हा वहां श्रीमती गांधी की तस्वीर चमकाने गए थे। वहां उनसे आपातस्थिति पर बोलने को कहा गया। जनाब साफ कतरा गए। खैर, किसी तरह महात्मा गांधी और उनकी संगतता पर बोलने को राजी हुए। श्रोताओं में से किसीने महात्मा गांधी के नागरिक-अधिकारों, प्रेस-स्वातंत्र्य और लोकतंत्र-सम्बन्धी विचारों को लेकर उन्हें मौजूदा हालात से जोड़ते हुए सवाल पूछा। तब जनाब बुरी तरह उखड़ गए। जब कुछ जवाब न बन पड़ा तो बड़ी गर्मी झाड़ते हुए हॉल से बाहर निकल गए। तस्वीर चमकाने के अभियान पर कानून मंत्री गोखले अमरीका गए। वे अमरीकी जनता के भारतीय स्थिति के बारे में तेवर देखकर कुछ यूं बिदके कि टी० वी० पर सवाल-जवाब करने से मुकर गए। गृह राज्यमंत्री श्री ओम मेहता अमरीका में उठ रहे सवालों से इतने आतंकित हुए कि सार्वजनिक मंच पर आना स्वीकार नहीं किया। अन्त में 'तन्दूर' होटल में १२ लोगों के बीच बोले, जिसे 'समाचार' ने आम सभा के नाम से भारत में प्रचारित किया। ऐसा ही हुआ था हितेन्द्र देसाई के साथ। आप कुछ महीने पहले लन्दन गए थे। उद्देश्य यही था। २५ लोगों की उपस्थिति मे सार्वजनिक मंच पर आपने हिन्दू संस्कृति और नैतिक मूल्य पर बोलने में ही खैरियत समझी। पर बुरा हो प्रश्न पूछनेवालों का! एक ने पूछा—'मोरारजी भाई की गिरफ्तारी पर अपनी चुप्पी का आप इन नैतिक मूल्यों से कैसे मेल बिठाते है ?" हितू भाई की घिग्घी बंध गई।

—'जनवाणी' से

भूमिगत समाचारों की बानगी

यह कैसा १५ अगस्त !

१५ अगस्त को ज़्यादातर सरकारी समारोह ठीक से नहीं हो पाए। जनता और छात्रों ने अलग-अलग तरीकों से इन जगहों पर अपना विरोध प्रकट किया। धनबाद (बिहार) में मंत्री से पहले ही एक १७ वर्षीय किशोर ने झंडा फहरा दिया। उपस्थित जनसमुदाय में छात्र-सघर्ष समिति के स्वयं-सेवकों ने क्रातिकारी साहित्य बांटा। इन छात्रों को बाद में पुलिस ने अकथनीय शारीरिक यातना दी। दिल्ली में लालकिले पर १५ अगस्त के समारोह में उपस्थिति आश्चर्यजनक रूप से कम थी। हजारों पुलिस के जवान सादी वर्दी मे बैठाए गए थे। लोक-संघर्ष समिति के १४ सदस्य विरोधस्वरूप काले झंडे दिखाते हुए गिरफ्तार हुए। बनारस विश्वविद्यालय के समारोह में एक युवक को नारे लगाते हुए गिरफ्तार किया गया। दिल्ली की एक सभा से मुख्य कार्यकारी पार्षद राधारमण बगैर भाषण किए लौट गए। लखनऊ में विरोधी दलों की ओर से स्वतन्त्रता-दिवस मनाया गया, जिसके तहत मोतीलाल नेहरू स्मारक में आम सभा हुई। भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री चन्द्रभान गुप्त सभा के मुख्य वक्ता थे।

जयप्रकाश दस्ते

१ से १५ अगस्त के दौरान हुए सत्याग्रहों में गया, बेगूसराय, बेतिया, मोतिहारी, हाजीपुर, मुगेर, कुर्था, परैमा, मोहनपुर, गोंडा, रोहतास, औरंगाबाद आदि स्थानों पर लाठीचार्ज किया गया। सड़कों पर नारे लगाकर कचहरी पर व्यक्तिगत सत्याग्रह करने के समाचार मिले है। वयोवृद्ध सर्वोदयी नेता वैद्यनाथ बाबू ने रुपौली मे व्यक्तिगत सत्याग्रह कर अपनी गिरफ्तारी दी। बिहार के सभी विश्वविद्यालयों में जयप्रकाश दस्तों का गठन किया जा रहा है।

उत्तरप्रदेश में सत्याग्रह

चौरी-चौरा (गोरखपुर) में जगजीवनराम के आगमन पर उन्हें काले झंडे दिखाते हुए २४ छात्रों ने गिरफ्तारी दी। बहराइच मे तीन हरिजन भाई पीताम्बर, मंगलदास तथा दूबर सत्याग्रह करते हुए गिरफ्तार हुए। हैदरगढ़ प्रभाग, बलिया, देवरिया, सुल्तानपुर, इटावा, फरुर्खाबाद, लखनऊ, उन्नाव, मिर्जापुर, जौनपुर, गोरखपुर, सीतापुर, शाहजहापुर, लखीमपुर, वाराणसी, रामपुर तथा आगरा से छोटी-बड़ी सख्या मे सत्याग्रह किए जाने, जुलूस व सभाओं के आयोजन के समाचार प्राप्त हुए है। उत्तरप्रदेश में सबसे ज्यादा गिरफ्तारियां हुई है। वाराणसी मे 'गाडीव' दैनिक के संपादक भगवानदास अरोड़ा को गिरफ्तार किया गया।

गिरफ्तारियां

तमिलनाडु के प्रमुख सर्वोदयी नेता अरुणाचलम, केरल के प्रमुख साहित्यकार मनमथन, सर्वोदय कार्यकर्ता राधाकृष्णन, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा० रघुवंश, पटना में बाढ़-राहत कार्य देखते हुए रामदेव महतो, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सचिव राधाकृष्ण, बनारस विश्वविद्यालय के केदारनाथ सिह गिरफ्तार किए गए।

न्यायपालिका का हक

कुलदीप नैयर की अवैध गिरफ्तारी पर फैसला देते हुए अदालत ने सरकार के अभद्र व्यवहार को आड़े हाथों लिया। प्रसिद्ध पत्रकार श्री नैयर को सरकार ने फैसले से तीन दिन पहले ही छोड़ दिया था। न्यायाधीश श्री रंगराजन ने इसका विरोध करते हुए अपना ५० पेजी फैसला इसलिए सुनाना तय किया कि इसका असर इसी तरह अवैध रूप से गिरफ्तार लोगों की याचिकाओं पर पड सकेगा। फैसले से दो महत्त्वपूर्ण बातें सामने आई है: १. आपातकाल के दौरान भी कोर्ट का यह हक है कि गिरफ्तारी के मामलों की जांच कर सके, २. अधिकारियों के लिए यह ज़रूरी है कि वे गिरफ्तारी के मामले में कोर्ट को सन्तुष्ट करे।

कर्पूरी ठाकुर

देश-भर के संघर्षरत प्रमुख नेताओ से संपर्क वनाकर कर्पूरी ठाकुर पुन: नेपाल लौट गए है। सम्पूर्ण विहार के प्रमुख कार्यकर्ताओं से उनका सीधा सम्पर्क वन चुका है। लोक-संघर्ष समिति की केन्द्रीय समिति भी उनके सीधे सम्पर्क मे है। आपसी बातचीत के बाद जल्द ही वे सघर्ष का एक नया कार्यक्रम घोपित करेगे।

संघर्ष कार्यालय को मिली एक रपट से

हम लोग 'जेल भरो' अभियान के लिए काफी उत्सुक हैं और इतने व्यक्तियों को सिर्फ सुपौल सवडिवीज़न के कुछ ही भाग से तैयार कर लिया है कि सहरसा जिले के तीनों जेलो मे भी समा नही सकेंगे। संख्या १००० से ऊपर है। बाकी जगहों मे भी तैयारी पूरी कर ली गई है।

लोगो मे उत्साह जगाने तथा वी० वी० सी० का समाचार सुनने के लिए कहा जा रहा है। कई जगहों पर क्रान्तिकारी पर्चा भी बाटा गया है। दीवार पर भी लिखने का काम जारी है।

हम लोग बड़ी संख्या में 'जेल भरो' अभियान के लिए तैयार है। आप अपनी भी राय जल्द भेजें।···को भी गिरफ्तार कर लिया है। पुलिस घर के अधिकांश व्यक्तियों को पकड़ने की कोशिश मे रहती है। हमारा घर तो बर्बादी की ओर जा रहा है। कोई चैन की नींद नहीं सो पा रहा है। कुर्की हो गई है। अब ज़मीन ज़ब्त करने की भी धमकी दी जा रही है। इतना होने के बावजूद देश की रक्षा के लिए साहस बटोरे हुए है।

इस बीच १५ अगस्त को बंगला देश में हुई घटना—शेख मुजीब की हत्या और मन्त्रिमण्डल के गठन से लोगों और साथियों का भी हौसला बढा है।

हरेक प्रश्न की सूचना और बुलेटिन भेजते रहेगे। समय-समय पर ज़िले की घटनाओं से अवगत कराता रहूंगा। राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम की भी जानकारी जल्द देगे। बाबू जयप्रकाश नारायण के संबंध मे कुछ वताइए।

('युवा सघर्ष समाचार' से, ३ अक्तूबर, १९७५)

सरकार का हौसला पस्त हो रहा

सरकारी मशीनरी लगातार कमज़ोर होती जा रही है। फौज में फूट है।

इंदिरा गांधी के तानाशाही मंसूबों के फौजी अफसर खिलाफ है। यह खिलाफत रोज बढ़ती जा रही है। नौकरशाही मे भी जगह-जगह विरोध उभर रहा है। स्थानीय पुलिस पर इदिरा गांधी पहले भी भरोसा नहीं करती थी। देश-भर में तानाशाही के खिलाफ आग फैलती जा रही है। इन्दिरा गांधी भी यह समझ रही है कि अकेले पुलिस के भरोसे इसे दबाया नही जा सकेगा। फौज पर भरोसा नहीं किया जा सकता। एक समय पर उन्होने फौजी शासन लागू करने की कोशिश की भी, लेकिन सफल नही हो पाई।

प्रशासन लगातार बिखर रहा है। केंद्र में संजय गांधी प्रशासन पर मनमानी चला रहा है। कई और जगह से बड़े सरकारी अफसरों के इस्तीफे की खबरें है। असन्तोष तेजी से बढता जा रहा है।

जिन इलाकों मे तानाशाही के खिलाफ लड़ाई की तैयारी ज्यादा तेजी से नहीं चल रही, वहां बिना एक मिनट खोए यह तैयारी शुरू कर देनी चाहिए। सबसे पहली जरूरी चीज है लोगों में डर हटे और राजनीतिक समझ पैदा हो। इसके लिए सबसे आसान काम है गली-मोहल्लों, चाय-घरों, बसों, दफ्तरों, मेलों तथा मिलने के अन्य सार्वजनिक स्थानों पर बातचीत, बहस, बैठक, सभा आदि के ज़रिये तानाशाही के खिलाफ बोलना। हाथ से लिखे पर्चे दीवारों पर चिपकाते रहना। जयप्रकाश, लोहिया तथा अन्य क्रांतिकारी विचारकों, नेताओं की तस्वीरे और साहित्य रखना और फैलाना। इंदिरा गाधी तथा कांग्रेस से जुड़े बाकी भ्रष्ट लोगों की तस्वीरों को घरों से जाकर हटवाया जाए। जयप्रकाश जी तथा विपक्ष के अन्य सम्मानित नेताओं की रिहाई के लिए उपवास किए जाएं, काली पट्टियां बांधी जाएं ! पुलिस में आन्दोलन के प्रति दिलचस्पी और सहानुभूति पैदा की जाए। फौजी ठिकानों पर आन्दोलन-समर्थक पर्चे फेंके जाए। फौज को भी यह समझाने की कोशिश की जाए कि तानाशाही से कैसे मुल्क बरबाद हो जाएगा।

('युवजन', युवा संघर्ष वाहिनी की बुलेटिन)

२ अक्तूबर से सत्याग्रह का दौर शुरू

लिखने की आवश्यकता नही है कि गांधी के सभी अनुयायी और नेहरू के सभी साथी प्राय: जेलों में है। लेकिन तानाशाह इन्दिरा को इससे कुछ शर्म महसूस नही हो रही। २ अक्तूबर को गाधी जयन्ती पर्व पर तानाशाह गाधी-समाधि पहुंची। बेशुमार पुलिस वर्दी अथवा बेवर्दी। इन्दिरा पहुंची और

विरोध का क्रम प्रारंभ हुआ। महाराष्ट्र (वर्धा और पवनार आश्रम) से आए दो दर्जन से अधिक गांधीवादी कार्यकर्ताओं ने तानाशाह इन्दिरा को गांधी-समाधि जाने से रोका और गिरफ्तारी दी। इससे पूर्व वितरित किए गए अपने पत्र में उन्होंने इन्दिरा पर गांधी और नेहरू के आदर्शों की हत्या का आरोप लगाया।

२ अक्तूबर शाम को ५ बजे गांधी-समाधि पर प्रार्थना-सभा का आयोजन था। आचार्य कृपलानी वक्ता थे। २ हज़ार से अधिक व्यक्ति जमा थे। प्रार्थना-सभा के बाद ज्यों ही आचार्यजी ने बोलना शुरू किया तो तुरन्त पुलिस ने सभास्थल पर कब्ज़ा कर लिया। आचार्य कृपलानी ने कहा कि वर्तमान सरकार गाधी-विरोधी सरकार है। गिरफ्तार व्यक्तियों में आचार्य कृपलानी समेत महात्मा गांधी के पौत्र राजमोहन गांधी, डा० सुशीला नैयर, राजगोपालाचार्य के सुपुत्र, समाजवादी नेता हरि विष्णु कामथ और युवजन नेता रवि नैयर समेत दो दर्जन व्यक्ति गिरफ्तार किए गए। आचार्यजी को बाद मे छोड़ दिया गया।

('प्रतिरोध' से प्रकाशित, १५-१०-१९७५)

बेलारी जेल में सत्याग्रहियों पर आक्रमण

बेलारी (कर्नाटक) सेंट्रल जेल मे सत्याग्रह एव मीसा के बंदियों के पहुंचने पर जेल-अधिकारियों के गैरकानूनी आचरण से हलचल मच गई। बंदियों द्वारा स्वच्छ एवं ठीक भोजन देने की मांग से ही भ्रष्ट अधिकारी आग-बबूला हो उठे। वार्डेन, जेल-अधिकारी और अपराधी कैदी सभी राजनैतिक बंदियों पर डंडे और हथियार लेकर पिल पड़े। सौ से अधिक कैदी घायल हुए। श्री मोहन शैनाथ, बंगलोर ज़िला कार्यवाह; श्री रंगनाथ, शिमोगा जिला मंत्री और श्री डा० वी० एस० भट्ट, हसन ज़िला जनसंघ के विख्यात नेता भी गंभीर रूप से घायलों में है। पहले दो की हड्डियां टूट गई है। सभी ५०० राजनैतिक बदियों ने अनशन कर दिया। इन्स्पेक्टर जनरल जेल बंगलोर से भागकर वहां पहुंचे। उन्होंने जांच का वादा किया। कुछ अधिकारियों को निलंबित किया गया। इसपर सत्याग्रहियों ने अनशन स्थगित कर दिया है। सम्पूर्ण कर्नाटक प्रदेश की जेलों में इस बर्बर आक्रमण के विरोध में ५ फरवरी को सत्याग्रहियों ने भूख हड़ताल रखी।

कर्नाटक विधानसभा के विरोध पक्ष के सदस्यों ने पहले दिन अधिवेशन

का बायकाट किया। तीन फरवरी को सदन में बेलारी जेल-काण्ड की सदन के द्वारा जांच की मांग की। पूरे प्रदेश के जनसमाज में इन्दिरा के इन अत्याचारी करतूतों पर घोर असन्तोष एवं रोष व्याप्त है।

सत्याग्रहियों पर अत्याचार एक विशेष पद्धति से किया जाता है। उसका तरीका निम्न प्रकार से है :

सत्याग्रहियों को पकड़कर थाने ले जाया जाता था। उनके विरुद्ध कोई मुकद्दमा दर्ज किए बिना उन्हें गैरकानूनी ढग से कई दिन तक रोककर निम्न प्रकार से शारीरिक एवं मानसिक यातनाएं दी जाती है :

१. नंगे शरीर मे बूटों की ठोकर मारना, शरीर को रौंदना। २. पैर के तलुओं पर डण्डों से मारना। ३. पैरो की हड्डियो पर लाठी रखकर उस-पर सिपाही का बैठना। ४. घंटों कैदी को मुर्गा बनाकर रखना। ५. रीढ की हड्डी पर मारना। ६. पसलियों एवं पेट पर मुक्को का प्रहार। ७. कानों पर तब तक चांटे मारना, जब तक वेहोश न हो जाए। ८. बन्दूक के कुदो का प्रहार। ९. शरीर को बिजली के झटके देना। १० नंगे कर वरफ पर लेटाना। ठंडे पानी मे भिगोना। ११. खाना और पानी नही देना, सोने नही देना। १२. पेशाब पीने के लिए बाध्य करना। १३. मुह काला कर सडक पर घुमाना। १४. उल्टा लटकाना १५. हवाई जहाज बनाना।

('जनता समाचार', २९ फरवरी,' ७६)

नारायणदत्त तिवारी को महात्मा गांधी के नाम से चिढ़

लखनऊ—उत्तर प्रदेश शासन ने १६६ रजिस्टर्ड संस्थाओं को नोटिस दिया है कि वे अपने नाम से गांधी शब्द हटा दे, नहीं तो सरकार उनके विरुद्ध दण्डात्मक कार्यवाही करेगी। लखनऊ मे ही लगभग १० संस्थाओं को यह नोटिस दिया गया है। उन संस्थाओं के नाम सरकार की दृष्टि मे आपत्ति-जनक है, जैसे—गाधी आश्रम, गांधी विचार संघ, गांधी सेवाश्रम, महात्मा-गांधी मेमोरियल कमेटी, गांधी पुस्तकालय, गांधी बाल विद्यामदिर, गांधी विचार परिषद्, महात्मा गांधी माडर्न जूनियर हाई स्कूल, गांधी युवक सेवा समाज, महात्मा गांधी गर्ल्स स्कूल।

यह स्मरण रहे, अब रेडियो पर महात्मा गांधी की वाणियों का प्रसारण बन्द कर दिया गया है। शासन की उन्मत्तता रंग ला रही है।

डण्डे का भय

एक बार लायड जार्ज एवं केंटरबरी के बिशप के बीच बहस हो गई। लायड जार्ज ने कहा कि मैं अपना काम डण्डे के बल पर करवाता हूं और मैंने देखा है कि लोगों को मुंह लगाने से काम नही होता।

बिशप ने कहा सो तो ठीक है, मगर आपको क्या यह भी मालूम है कि डण्डे से काम लेने वाला यह नही जानता कि डण्डा वह बाहर से नहीं लाता, स्वयं ही डण्डा बनता हैं और कैसा भी मज़बूत डण्डा हो वह हमेशा अपने से मज़बूत डंडे से टूटे जाने की प्रतीक्षा किया करता है। यह भय का मनोविज्ञान है। इसलिए याद रखिए कि आपका डंडा हमेशा चलने वाला नहीं, वह किसी भी दिन टूट जाएगा यानी आप स्वयं अपने को तोड़ने के लिए कोई कसर बाकी नही छोड़ रहे है।

लायड जार्ज को बिशप के इस विश्लेषण से बड़ा आश्चर्य हुआ। भयग्रस्त हो गए। बिशप ने कहा, डडे को बड़े डंडे का भय है, मिठास को हर मिठास का बल।

('जनता समाचार' से, ८ अगस्त, १९७६)

सरकारी अन्याय के विरुद्ध दिल्ली के वकीलों की हड़ताल

गत २८ मार्च की रात मे दिल्ली ज़िला न्यायालय (तीस हज़ारी) मे वकीलों के चैंबर नगर निगम द्वारा बिना किसी पूर्व सूचना के ध्वस्त कर दिए जाने के विरोध में ज़िला बार एसोसिएशन के ३००० से भी अधिक वकीलों ने पूर्ण रूप से हड़ताल कर दी।

बाद मे लगभग २०० वकीलों के एक प्रतिनिधिमंडल ने दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से भेंट करके उनको इस सम्पूर्ण घटना से अवगत कराया। जिस समय वकीलों का उक्त समूह मुख्य न्यायाधीश से मुलाकात करके एक बस में वापस आ रहा था, रास्ते में पुलिस ने बस में बैठे ६० वकीलों को गिरफ्तार करके जेल भेज दिया। इस घटना ने आग में घी का काम किया। फलस्वरूप समस्त वकीलों ने पूर्ण हड़ताल कर दी और इन्दिरा गांधी मुर्दाबाद के नारे पूरी कचहरी में गूंजने लगे।

३० मार्च को प्रातःकाल तथाकथित युवा नेता संजय गांधी ने घटना-स्थल पर जाकर अपनी नेतागिरी चमकाने का धंधा शुरू करना चाहा तो वहां

एकत्र वकीलों ने 'सजय गांधी वापस जाओ', 'तू भी, तेरी मम्मी भी, मुर्दाबाद-मुर्दाबाद', 'संजय गांधी मुर्दाबाद, संजय की मम्मी मुर्दाबाद' के रोषपूर्ण नारे लगाकर उन्हें भगा दिया। वकीलों का कहना है कि जब तक सरकार बंदी बनाए गए वकीलों को रिहा करके उनकी मांगे नही मान लेती—हड़ताल और आंदोलन जारी रखेगे। ('लोक-संघर्ष' से, १-४-१९७६)

दर्दनाक उत्पीड़न

देवास (मध्यप्रदेश) मे सत्याग्रहियों के साथ कुत्सित शर्मनाक सलूक किया गया। उन्हें एक-दूसरे के जननेन्द्रियों को मुह मे लेकर लेटने को विवश किया गया। मलद्वार को डडे आदि से बंद कर दिया गया। 'जे० पी० मुर्दाबाद' के नारे लगाने से इनकार करने पर उन्हें पेशाव पीने पर मजबूर किया गया तथा उनके सामने लोकनायक जे० पी० को भद्दी-भद्दी गालिया दी गई। ऐसे जुल्म के शिकार होने वाले जमशेदपुर के एक क्रातिकारी इंजीनियर युवक हेमन्त और धनबाद के तिलेश्वर भी है। संपादक उनसे विशेष केंद्रीय कारावास, भागलपुर, मे भेंट कर आया है। उनका मनोबल और भी मजबूत हुआ है। उन्होंने संपादक से कहा—'आज बगावत हो गई है, हमें 'बगावत' के लिए कमर कस आगे आ जाना चाहिए।' ('क्रांति-नाद' से, मई, १९७६)

मोहन धारिया गिरफ्तार

बंबई-अहमदाबाद के नगर निगम के चुनावों मे इन्दिरा-तानाशाही का पर्दाफाश करने जा रहे प्रसिद्ध समाजवादी नेता एव भारत सरकार के भूतपूर्व मंत्री श्री मोहन धारिया एम० पी० को बम्बई में गिरफ्तार कर लिया गया। श्री धारिया ने संसद के भीतर और बाहर तानाशाह इन्दिरा का असली मुखौटा उजागर करने के लिए अनवरत सघर्ष किया है। ('प्रतिरोध' से)

'शरीर छोड़ सकता हूं, पर लिखकर नहीं दूंगा'

उत्तर प्रदेश के संत राजनेता जनसंघ दल के नेता श्री माधवप्रसाद त्रिपाठी इन दिनों नैनी जेल में है। उनके पेट से कोई तीन-चार सौ ग्राम 'पश' निकला है। आशंका यह है कि यह किसी सरकारी 'मेहरबानी' का परिणाम है।

पिछले हफ्ते जब उत्तरप्रदेश के एक केंद्रीय मंत्री को इसके बारे में पता

चला तो मित्रतावश उन्होंने पूछताछ की। फलस्वरूप एक वरिष्ठ अधिकारी जेल में माधव बाबू से एक प्रस्ताव लेकर मिले और कहा, "आप पैरोल पर जाना चाहें या किसी दूसरी जेल में स्थानान्तरण कराना चाहें तो ऐसा किया जा सकता है। केवल आप तीन-चार लाइन का आवेदनपत्र लिख दें।" माधव बाबू ने अपने शरीर की ओर इशारा करके कहा—"मैं अपना शरीर छोड़कर तो यहां से जा सकता हूं, लेकिन एक भी पंक्ति लिखकर नही दूंगा। मैं सरकार को अपने दल के खिलाफ असत्य प्रचार का कोई भी हथियार हरगिज़ नहीं दूंगा।" ('जनवाणी' से)

आम चुनाव आवश्यक

आचार्य सम्मेलन ने इस बात पर बल दिया कि धीरे-धीरे कुछ ऐसे उपाय करने चाहिए, जिससे देश को एक स्वस्थ जीवन प्राप्त हो सके, जैसे आम चुनावों के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करना, चुनाव-पद्धति मे संबंधित सुझावों पर परस्पर विचार-विमर्श करके संशोधन करना जिससे आगामी चुनाव निष्पक्ष व भ्रष्ट तरीकों से मुक्त हों तथा खर्चीले न हों।

सामाजिक व आर्थिक स्थिति

सम्मेलन के अनुसार सविधान की विशेषता उसीमें है, जिसमें आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त तथा संभव हो सके। जहां तक मौलिक अधिकारों का प्रश्न है, इसमे सुधार व संशोधन करना नितांत आवश्यक है। स्वतंत्रता के २८ वर्षों के पश्चात् भी करोड़ों लोग गरीबी में धंसे पड़े है। उनका जीवन-स्तर सामान्य जीवन से भी नीचे है। सम्मेलन ने सरकार का ध्यानाकर्षण करते हुए बताया कि उसे लोगों की गरीबी दूर करने, उनका जीवन ऊंचा उठाने, गरीबी और अमीरी का अंतर कम करने के सफल प्रयास करने चाहिए। ('जनवाणी' से)

ये पदयात्री हैं!

मुख्यमंत्री जगन्नाथ मिश्र ने पूरे प्रदेश की पदयात्रा (?) हवाई जहाज़ से की, कोई भी जिला नही छूटा, शायद, गया में उन्होंने वही स्थान चुना, जो जनता सरकार के सघन क्षेत्र है और जहां के १६४ हरिजन सत्याग्राही आज भी गया जेल मे बंद है। यह पदयात्रा ५३ मोटरों, जीपों के साथ शुरू हुई। स्वयं

मुख्यमंत्री ६ घोड़ों की एक शाही बग्घी पर सवार थे। कासला पड़ाव पर ये शाही पदयात्री पहुंचे ही थे कि वहां उपस्थित जनसमूह ने 'महात्मा गांधी जिदाबाद, लोकनायक जयप्रकाश जिदाबाद' के नारे लगाए। मुख्यमंत्री ने आश्चर्य-चकित होकर पदयात्रा-आयोजकों की ओर देखा, लेकिन उनके पास कोई उत्तर नही था! कुछ लोग गिरफ्तार हुए।

(बिहार प्रदेश छात्र-संघर्ष समिति की बुलेटिन 'तरुण क्रांति', ३ मई, १९७६ से)

पुलिस कस्टडी में लोकदल के नेता जाटव की हत्या

दिल्ली प्रदेश भारतीय लोकदल के वरिष्ठ उपाध्यक्ष और प्रदेश के प्रतिष्ठित हरिजन नेता श्री मोहनलाल जाटव मीसा में बन्दी थे और ५ मई, '७६ को तिहाड़ जेल से १५ दिन के पैरोल पर आए थे। पुलिस और सी०आई० डी० लगातार उनके घर चक्कर काटती रही। १७ मई को सी० आई० डी० उन्हें जबरन अपने दफ्तर दिल्ली प्रशासन की २० मंजिली इमारत की आठवी मंजिल में ले गई। २ घंटे मे ही सी० आई० डी० ने न जाने क्या किया कि उनकी मृत्यु हो गई। वे उनकी लाश इर्विन हस्पताल मे ले गए। लेकिन डाक्टरों ने यह लिखकर देने से इनकार कर दिया कि उनकी मृत्यु हस्पताल में हुई। अब पुलिस उनके पुत्र पर दबाव डाल रही है कि पिता की स्वाभाविक रूप मे मृत्यु हुई, यह (झूठा) बयान लिखित रूप मे पुलिस को दे दे।

तुर्कमान गेट काण्ड : लाशों की गवाही

तुर्कमान गेट के नृशंस गोलीकाण्ड के बारे मे सरकारी प्रचार का यह दावा है कि उसमे कुल मिलाकर ५ की मृत्यु हुई। यह प्रचार काण्ड को मामूली बताने और हद दर्जे का झूठ प्रचारित करने की शर्मनाक मिसाल है। इलाके में अभी भी कर्फ्यू लगा है। इसलिए मृतकों की पूरी सूची बनाना बिलकुल असम्भव है। लेकिन मृतकों की निम्न सूची भी सरकारी प्रचार का पर्दाफाश करती है :

(१) मोहम्मद आरिफ वल्द मोहम्मद बशीर, कूचा मीर हसन, (२) मोहम्मद सेफ वल्द मो० मुनीर, कूचा मीर हसन, (३) जहीर मुद्दीन वल्द नसीर उद्दीन, खीरवाला फाटक, (४) जीनत बेगम, बहन इब्राहम, तेलिया फाटक, (५) सलाउद्दीन वल्द मोहम्मद यमीन, कूचा चेलान, (६) सुलेमान वल्द बशीर, चितली कब्र, (७) हाफिजाबरकत का पोता, गली ननवातेली,

(८) इकबाल वाकी, नामालूम, (९) अबुल हक का बेटा, मोहल्ला मटिया महल, (१०) अब्दुल मलिक, हास्पिटल मे पोस्टमार्टम हुआ, (११) समीर अहमद वल्द मजीद अहमद, गली खानखाना, (१२) मोहम्मद साबिर वल्द मो० यासीन, सुईवालान, (१३) जिआउद्दीन, उसकी बीवी और दो बच्चे (जिआउद्दीन मोटर मैकेनिक था), (१४) हामिद, पेट की दुकान, (१५) एक रिक्शावाला, अजमेरी गेट।

नीचे लिखे तीन व्यक्ति घटनास्थल पर गोली लगने से मरणासन्न हालत में अस्पताल मे दाखिल हुए थे। इनकी मौत होने का पूरा अंदेशा है, क्योंकि कोई जानकारी अस्पताल से नही मिल रही।

(१) भोला, फाटक तेलियान, (२) सहाबुद्दीन उर्फ बबुआ, फाटक तेलियान, (३) बोडम वल्द मटिनों, गली अंसारी।

घटनास्थल पर घायल होकर गिरे लोग जो अब तक लापता है, इनके बारे में विश्वास किया जाता है कि पुलिस की गोली से मारे गए और पुलिस ने उनकी लाशे गायब कर दी। पुलिस लाशों को ट्रकों मे भरकर ले गई थी, ऐसा अनेक प्रत्यक्षदर्शियों का कहना है। (१) वाहिद वल्द सलीमुद्दीन, पहाड़ी भोजला, (२) छोटी बेगम, पत्नी बाबूखां, गली सैयदान, (३) मोहम्मद रियास वल्द मो० काशिम, गली तख्ता वाली, (४) आफराज बेगम अजीमुद्दीन, रकाबगज, (५) मोहम्मद सुलेमान, सुईवालान, (६) रजिया बेगम, पत्नी मो० अकील, (७) बबुद्दीन वल्द इस्लामुद्दीन, रकाबगज।

हम अब तक उस औरत का नाम मालूम न कर सके, जिसे बुलडोजर से कुचल डाला गया था। बुलडोजर के सामने लेटने वाली २१ साला रज़िया को बी० एस० एफ० के लोग उठाकर ले गए और ३ रात तक बलात्कार करते रहे। क्षत-विक्षत बदन लेकर वह ३ दिन बाद लौटी। हम चार व्यक्तियो का नाम भी मालूम नही कर पाए है, जो एक ही परिवार के थे और जिन्हें बुलडोजर फेरकर मय मकान के खत्म कर दिया गया। हालात मालूम होने पर यह सूची तफसील से बन सकती है।

जेल या पुलिस चौकी तोड़कर

१ मई, १९७६ को भागलपुर सेंट्रल जेल को तोड़कर बहुत-से बंदी भागे। पुलिस ने पीछे से उनपर गोली-वर्षा की। इनमें १४ मारे गए और शेष भागने मे सफल रहे। पिछले माह बंगाल की जेलों में से कई सौ नक्सली फरार

हो गए थे। सरकार ने जेल-अधीक्षक और ७ अन्य अधिकारियों को बर्खास्त कर दिया।

हाल ही में महाराष्ट्र में भी पुलिस चौकियों पर हमले हुए है। भारी मात्रा मे हथियार और कारतूस लूटे गए। कई जगह मुठभेड़ हुई, हताहतों मे पुलिस के लोग भी है। ('जनवाणी' से, लोक-सघर्ष समिति, दिल्ली)

विपक्षी दलों का एकीकरण—नये दल का सूत्रपात

२५ मई, १९७६ को लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने बबई मे एक नये राष्ट्रीय दल के गठन की घोषणा की। यह संगठन काग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल और सोशलिस्ट पार्टी के विलय से गठित हो रहा है। लोकनायक ने कहा कि यह दल मोर्चा या संघीय दल का नही होगा। सभी दल अपना विलय करके एक दल के रूप मे गठित होंगे। इसमे अनेक निर्दलीय लोग भी होंगे। लोकनायक ने नौजवानों को इस दल में आने का न्योता दिया है।

दल के नाम, झण्डे, संविधान तथा कार्यकारिणी आदि पर विचार चल रहा है। जून के अन्त में होने वाले बम्बई सम्मेलन में औपचारिक रूप से दल के गठन की घोषणा होगी।

जयप्रकाश नारायण ने प्रधानमंत्री से अपील की है कि वे इनके एकीकरण के मार्ग मे बाधक न बनें।

इस घोषणा के पूर्व बम्बई में उक्त दलों के प्रतिनिधियों ने २ दिनों तक विचार-विमर्श किया। विचार-विमर्श के बाद नये दल के गठन के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पर दलों के निम्न प्रतिनिधियों ने हस्ताक्षर करके जयप्रकाश नारायण को राष्ट्रीय विकल्प के निर्माण का अधिकार दिया। हस्ताक्षरकर्ता निम्नलिखित है :

चौ० चरणसिंह, भानुप्रताप, एच० एम० पटेल (सभी भालोद), एस० के० पाटिल, शातिभूषण और दिग्विजय नारायण सिंह (सभी संगठन कांग्रेस), एन० जी० गोरे और एस० एम० जोशी (सोशलिस्ट पार्टी), ओम प्रकाश त्यागी, उत्तम राव पाटिल और बसन्त कुमार पंडित (सभी जनसंघ) और मुहम्मद करीम छागला।

जयप्रकाश नारायण ने प्रेस-सम्मेलन में यह कहा कि नई पार्टी केवल चुनावी दल न होकर सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक क्रांति का वाहक होगी। दल के मौलिक उद्देश्यों में कुछ निम्नानुसार है : नागरिक स्वतंत्रताएं, प्रेस की

आजादी, न्यायपालिका की गरिमा और निष्पक्षता की वापसी तथा समतामय समाज की स्थापना करना। बेकारी-उन्मूलन, अधिकतम औद्योगिक व कृषि-उत्पादन, छोटे किसानों, खेतिहर मजदूरों, औद्योगिक मज़दूरों तथा समाज के तमाम कमजोर वर्गों के न्यायपूर्ण दावों को पूर्ण करना।

सरकारी अधिकारियों के नाम पत्र

प्रिय बन्धु,

१२ महीनों में आप जान गए होंगे कि इस मीसा, डी० आई० आर० और २०-सूत्री कार्यक्रम की वास्तविकता क्या है ? और इसके पीछे राजनीति क्या है ? यह सारा प्रचार धरपकड़ और मारपीट के लिए है। इसका एक ही उद्देश्य है कि एक विशेष कुल की गद्दी बची रहे, भारत की सत्ता एक ही परिवार में हमेशा केन्द्रित रहे।

वे दिन गए, जब कांग्रेस ने अपनी सेवा से गद्दी प्राप्त की थी। महात्मा गांधी की कांग्रेस के पास सेवा थी, त्याग था, लेकिन इन्दिरा गांधी की कांग्रेस आपके कंधों पर बैठकर हुकूमत करना चाहती है। वह चाहती है कि वह हुक्म दे, और आप अगर पुलिस मे हों तो विरोधियों को पकड़ें, मारें, पीटें, जेल भरे। आप चुनाव में तरह-तरह के भ्रष्टाचार करके उन्हें जिताएं, आप समारोहों में उनके भाषण कराएं और उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाएं। आप जज हों तो गलत तरीके से उनके पक्ष में फैसले दें। आप इंजीनियर हों तो उनके आदमियों को ठेके दें, और उनके भाई-भतीजों को हज़ार नाजायज तरीकों से फायदा पहुंचाए। एक नहीं, हजार बातें हैं, कहां तक गिनाई जाएं ?

सोचिए, आप गवर्नमेंट सर्वेण्ट है, पब्लिक सर्वेण्ट हैं, या कांग्रेस सर्वेण्ट या इन्दिरा-सर्वेण्ट ? सरकारी नियमों में आपकी असली हैसियत क्या है ? लेकिन जब इन्दिराजी स्वयं भारत की गद्दी पर अपना और अपने बेटे का खान-दानी हक मानती हैं तो क्या आश्चर्य है कि कांग्रेसी छुटभैये भी सोचे कि सरकारी नौकर वेतन पाएं सरकार से और नौकरी करे उनकी। कांग्रेसियों ने मान लिया है कि देश की सरकार का उनके साथ 'इस्तमरारी बन्दोबस्त' हो गया है, जिसमें कांग्रेसी मालिक है, और आप ? सोचिए, क्या आपने इसलिए सरकारी नौकरी की थी ? क्या आप चाहते है कि सरकार इसी तरह चलती रहे ?

आप जानते हैं कि २०-सूत्री कार्यक्रम एक तमाशा है। उसकी विफलता निश्चित है। जब जनता यह पहचान लेगी, तब २०-सूत्री कार्यक्रम की असफलता

का दोष भी आपके ऊपर ही लगाया जाएगा। आपको ही बलि का बकरा बनाया जाएगा। इन्दिराजी की इन नीतियो के दुष्परिणामों की ज़िम्मेदारी भी आपके ही मत्थे थोपी जाएगी, जिसके कारण आप ही जनता के दुश्मन बन जाएगे।

बन्धुओ, कांग्रेस को बचाने के लिए अपने-आपको जनता का दुश्मन मत बनाइए। यह बहुत महगा सौदा होगा। सत्याग्रहियों को, अपने ही बन्धुओं को, डंडों से पीट-पीटकर आप किस जिम्मेदारी को निभाते है, और आपको क्या सन्तोष मिलता है ? इतिहास मे कोई मिसाल नहीं है, जिसमे अधिकारी किसी भ्रष्ट और जनविरोधी शासन को बचा सके है। कांग्रेसी शासन के दिन लद चुके है। पाप का घड़ा भर चुका है। उसे अब कोई नही बचा सकता। लेकिन हम यह चाहते हैं कि आप देश के लिए बचे रहे। सरकारी ड्यूटी का पालन करते हुए भी आप-अपनेको गलत कामो से बचा सकते है।

आप सरकार के अधिकारी है, लेकिन इस देश के सामान्य नागरिक भी है। शायद सामान्य नागरिक पहले है, अधिकारी बाद में। आपके बाल-बच्चे इसी धरती पर पलेगे और इसी देश के किसी गांव या शहर में रहेगे। क्या आप नही चाहते कि एक सुन्दर भारत बने, जिसमें आपका भी सम्मानपूर्ण स्थान हो ?

('लोक-संघर्ष के साथी')

एक तुनकमिज़ाज तानाशाही

श्रीमती गांधी ने अपने श्रोताओं को सलाह दी है कि वे विदेशी आलोचनाओं को नज़रअंदाज करें, यद्यपि वे स्वयं अपनी निषेधाज्ञा के अनुसार व्यवहार नही करतीं, क्योंकि वे किसी अन्य विषय पर आलाप कर नही पातीं। श्रीमती गांधी की तुनकमिजाजी ने २०वीं शताब्दी के तानाशाहों के पथ में एक नवीन मौलिक विचलन प्रस्तुत किया है। उन तानाशाहों ने अभेद्य सेंसर-व्यवस्था द्वारा विदेशी आलोचनाओं को रोकने से अधिक महत्त्व दिया अपनी रियाया को मस्तिष्क-प्रक्षालन द्वारा विनम्र बनाकर रखने को।

विवेकहीन नात्सी पंथ के जन्मदाता और प्रवर्तक अडोलफ हिटलर को यदि प्रजातंत्रवादी कहा जाता तो वह अपनी बेइज़्जती समझता। उसे गर्व था कि उसने निरंकुश शासन की संस्थापना की थी। आज भी माओ त्से-तुग सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष विदेशी आलोचनाओं की अपेक्षा करता है; वह अच्छी तरह जानता है कि विदेशों का दोषारोपण उसे उसके उच्चतम स्थान से गिरा नहीं सकता और वह अपने को बिलकुल सुरक्षित मानता है। तानाशाहों में

सबसे दूरदर्शी जोसेफ स्टालिन कभी भी विदेशी आलोचनाओं का उत्तर नहीं देता था, चाहे वे अस्पष्ट हों या खुल्लमखुल्ला, विदेशी या स्वदेशी, स्टालिन अपने पुलिस-राज्य के विरुद्ध शब्दास्त्र को प्रभावहीन मानता था। स्टालिन का अपमान तो उसके निधन के पश्चात् की घटना है; यह सोवियत यूनियन कम्युनिस्ट पार्टी के २०वे अधिवेशन तक प्रतीक्षा करती रही; इसी अधिवेशन में निकिता ख्रुश्चेव जैसे बीहड़ साम्यवादी ने स्टालिन-शासन, जिसमें वह खुद सेवारत रह चुका था, के पाशविक दमन-कार्यो का भडाफोड़ किया और स्वीकार किया कि भय के चलते स्टालिन के जीवनकाल में उसने कभी विरोध के शब्द नही निकाले।

मुसोलिनी एक मौलिक तानाशाह था; आधुनिक तानाशाहों में एक उसी-ने आलोचनाओं के प्रति कुछ सवेदनशीलता का प्रमाण दिया। आडम्बरपूर्ण भाषा के प्रयोग से उसके आत्मविश्वास रूपी कवच में दरार प्रतिबिम्बित होती थी। 'कही समालोचनाएं ही सही न हों? मेरी महानता मात्र एक काल्पनिक लल्लो-चप्पो एवं विज्ञापनबाजी का संयोगात्मक संघटन तो नही है? क्या मेरे साहसिक शब्द दृढ चुनौती का मुकाबला कर सकेंगे?' ऐसे प्रश्न बार-बार उसके दिमाग मे उठते थे और बाद की घटनाओं ने उसके शक को सही करार दिया, जबकि उसका शासन उसके ही द्वारा आयोजित युद्ध की कठिन परीक्षा में असफल सिद्ध हुआ। तथापि मुसोलिनी एक विदेशी तानाशाह था, जो एक अरसा हुआ, पराजय की विस्मृति और अकीर्तिपूर्ण निधन को समर्पित किया जा चुका है। (मुसोलिनी और उसकी प्रेयसी क्लारा पैटासी की उनके साथियों ने मार-मार कर हत्या कर दी थी, जब वे रोम पर हमले के समय जर्मन फौज में मिलकर भागने की कोशिश कर रहे थे)। पर हमारी प्रधान-मंत्री विदेशी आलोचनाओं से क्यों तिलमिलाने लगती है, जबकि वे जानती है कि कड़ाई से लगाई गई समाचार सेंसर-व्यवस्था को पार कर वे उनके समीप नहीं पहुच सकती? इसका कारण कदाचित् उनकी यह उद्विग्न अभिज्ञता तो नहीं कि उनके जनतांत्रिक वादे बृहत् मस्तिष्क-धुलाई के बावजूद भी जन-मानस को खोखले नज़र आते है? यदि यह सत्य है तो देशवासियों के आकृति-हीन और अवरुद्ध विचारों को व्यक्त करने के ही लिए विदेशी समालोचकों को दोषी ठहराया जा रहा है।

भारतीय और विदेशी पत्रों के संबंधों में प्रधानमंत्री ने जो रूखा और विरोधात्मक रवैया अपनाया है, उससे उनके प्रजातन्त्र-विरोधी स्वभाव का

स्पष्टीकरण हो जाता है। प्रेस सेंसर-व्यवस्था के संबंध में उन्होंने भारतीय पत्रकारों से स्पष्ट कहा है कि भारत में बहुत कम लोग समाचारपत्रों को पढ़ते है, अत: प्रेस नियंत्रित रहे, वाग्बद्ध रहे, अथवा व्यभिचारपूर्ण रहे यह बात महत्त्वहीन है, पर विदेशी पत्रकारों से बातचीत करने में उनका स्वर युक्तिसंगत, विनयावनत, अनुनय एवं उदारतापूर्ण रहता है। विदेशी प्रेस इनके सेंसर के दायरे में नही आते, इसका ज्ञान उन्हे है। इसीलिए उनके शासन के बारे मे विदेशी लेख अथवा विचारों को वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानती है।

इस परिस्थिति मे श्रीमती गांधी अपनी इच्छानुसार संतोष की हकदार है। पर किसीको आश्चर्य नही होना चाहिए, यदि विदेशी समालोचक उनके शोरगुल और अतिरंजित रूप से प्रस्तुत उनकी जनतांत्रिक मुद्रा को गंभीरता से ग्रहण न करें। और जब विदेशी नेहरू-गांधी वंशावली के अनुक्रम में किसो उत्तराधिकारी को आनुषंगिक रूप से राज्य-पद ग्रहण करने के लिए सुसज्जित एवं बना-ठना देखते है तो उन्हें इस निष्कर्ष पर पहुंचने में दोषी नही ठहराया जा सकता कि श्रीमती गांधी द्वारा निर्धारित असली जनतंत्र मात्र कल्पना है, उनका जनतंत्र का नगाड़ा तथ्यरहित है और यह जनतंत्र अजनतांत्रिक वंशानुक्रम के सिद्धांत पर अबलंबित है। (एक साइक्लोस्टाइल कागज से)

दिल्ली का विकास या कि विनाश

अब तक झुग्गी-झोंपड़ी के कई लाख लोगों को अपनी जगह से उजाड़ दिया गया। उनके बारे मे कहा जा रहा है कि उनके जीवन मे नया मोड़ आया है। उन्हें २५-२५ गज़ के प्लाट दिए गए है। गौर से देखने पर वह बिलकुल भी सच नज़र नहीं आता।

रोग बढ़ाने वाला इलाज

फावड़ा-गैंती लिए मज़दूरों के ट्रक आए और एक सिरे से दूसरे सिरे तक उनकी दरिद्र गृहस्थी को उजाड़ गए। ट्रकों में लादकर शहर से दूर खुले मैदान में ले जाकर उन्हें छोड़ दिया गया। २५-२५ गज़ के कटे उबड़-खाबड़ प्लाट उन्हे दे दिए गए। न पानी का इन्तज़ाम, न टट्टी का। अन्य नागरिक सुविधाएं भी मुहैया नहीं कराई गईं। चीखते-चिल्लाते बच्चे और औरतें, बरसात हो गई तो भीगते बच्चे, बूढ़े और औरतें, बाज़ार के अभाव में जलावन अनाज आदि के लिए तरसते लोग जैसे किसी मध्ययुगीन युद्धग्रस्त क्षेत्र से

उजड़कर आए हुए बेबस काफिले हों। बिना वैकल्पिक व्यवस्था किए भेड़-बकरियों की तरह उन्हें उजाड़ देना, इस मानवीय समस्या के प्रति हद दर्जे के अंधेपन का नमूना है।

बेरोज़गारी और तबाही बढ़ी

झुग्गी-झोंपडी वाले लाखों लोगों के लिए तयशुदा नीति यह थी कि इन्हें अपनी रिहाइश के करीब ही बहुमंजिली इमारत बनाकर एक-एक कमरे का फ्लैट दिया जाएगा ताकि वे अपने लगे-लगाए धंधे से न उजड़ें, बाकी समाज के साथ इनका संबंध बना रहे। क्रमशः समतामय समाज बने।

लेकिन आज जो कुछ किया गया है, उसमे तीन-चौथाई से ज्यादा लोग अपने धधे से छूट गए हैं। जहां उन्हे रखा गया है, वहां काम नहीं, जहा काम है वहां काम करने वाले नही। सरकारी प्रचार मे यह कहा जाता है कि उन्हें औद्योगिक बस्तियों के करीब बसाया गया है। यह हद दर्जे का झूठ है। अव्वल तो ऐसी सिर्फ एक नगरी है। फिर उन जमी-जमाई उद्योग बस्तियों में उन लाखों के लिए उद्योगपति रोजगार खाली रखकर इन्तजार करते नहीं बैठे है। इसीका नतीजा है कि ये लोग इन बस्तियों को छोड़कर प्लाट की कच्ची बेचान करके हजारों की तादाद में फिर इधर-उधर बिखर रहे हैं। मज़दूरी करने वाले ये लोग बसों की लम्बी यात्राओं मे पैसा और समय बर्बाद करने की क्षमता नही रखते। बरतन-बासन मांजकर गुज़ारा करने वाली औरत १०-२० मील की यात्रा करके नही आ सकती। स्पष्ट है कि इलाज रोग से ज़्यादा दुर्भाग्यपूर्ण हो गया है। यह एक भीषण मानवीय समस्या के प्रति सरकार के दृष्टिकोण को प्रकट करता है।

हुकूमत का खौफ पैदा करने के लिए

पटेल नगर, मोतीनगर, कीर्तिनगर, राजौरी गार्डन, तिलकनगर जैसी कालोनियों में बाजार के बाजार उजाड़ दिए गए। एक-एक दुकान में ५०-५० हज़ार का नुकसान हुआ। एक-एक बाज़ार में सैकड़ों दुकानें टूटीं और ऐसे सैकड़ों हादसे राजधानी को अपनी छाती पर पिछले ११ महीनों में भुगतने पड़े। नुकसान का अंदाजा करोड़ों में नहीं, अरबों में करना होगा। जब कभी तानाशाही के खिलाफ दबी-दबी ज़बान मे चर्चा चली, आतंक बनाए रखने के लिए एक नया तोड़फोड़-अभियान चालू कर दिया गया। दिल्ली को दहला

देने, एक आतंक पैदा करने और हुकूमत का खौफ पैदा करने की तानाशाही आकाक्षा ही इनका उद्देश्य रहा है। तुर्कमान गेट की तोड़-फोड़ का एक कारण नसबदी के सवाल पर खड़े हुए मुसलमानों मे आतंक पैदा करना भी था।

(दिल्ली आवास विकास परिषद द्वारा प्रसारित)

मामला ९०,००० का

देश-विदेश में जब यह सत्य प्रचारित होने लगा कि जे० पी० के स्वास्थ्य मे गड़बड़ी के पीछे कुछ रहस्य है, जब भारत-भर से जे० पी० की स्वास्थ्य-सहायता निधि के लिए लगभग सवा तीन लाख रुपये जमा हो गए तथा जब उनके लिए डायलिसिस की मशीन विदेश से आ गई तो करुणा की मूर्ति श्रीमती गाधी को खयाल आया कि उन्हें भी कुछ करना चाहिए और उन्होंने अपने प्रधानमंत्री कोष से नब्बे हजार रुपये दान दिए। अब देश-भर के लोगों में यह उत्सुकता जगी कि जे० पी० क्या कहते है। यह तय किया गया कि या तो उस रकम मे से एक रुपया लेकर बाकी रकम लौटा दी जाए या यह राजनीतिक बंदियों के परिवारों मे बांट दी जाए। फैसला स्वास्थ्य-सहायक निधि समिति के सदस्यों पर छोड़ दिया गया है।

'जो पढ़े, दस कापियां तैयार करे'

बिहार सरकार ने संघर्ष बुलेटिनों के प्रकाशन पर रोक लगाने के लिए इधर एक तेज़ अभियान चला रखा है। कई स्थानों पर प्रेस पर छापे डाले गए और प्रेस के कार्यकर्त्ताओं को तंग किया जा रहा है। मुज़फ्फरपुर मे ऐसी ही एक कार्रवाई के बाद संघर्ष के साथियों ने हस्तलिखित बुलेटिन निकाली और 'जो पढ़े, वह दस कापियां तैयार करके बांटे' कार्यक्रम चलाया। कार्यक्रम काफी सफल रहा है। मोतिहारी और बेतिया से भी इसी तरह के प्रयासों की खबर मिली है।

जगन्नाथ मिश्र को लौटना पड़ा

बिहार विश्वविद्यालय के पास में एक सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। मुख्य अतिथि थे श्री जगन्नाथ मिश्र। ज्यों ही वे भाषण देने को उठे, पूरा हाल तानाशाही-विरोधी नारों से गूंज उठा। मुख्यमंत्री अपना

भाषण न दे पाए। उन्हे लौट जाना पड़ा। बाद में सांस्कृतिक कार्यक्रम चला।
('तरुण क्रांति', ५ जून, १९७६)

आतंक का अन्त

"किसी भी देश की जनता अन्याय और आतंक को अनिश्चित काल तक बर्दाश्त नही कर सकती। तानाशाह के अनियंत्रित ज़ुल्म और हिंसा मनुष्यमात्र का अपमान और अवमूल्यन करते हैं। केवल भौतिक हानि ही नही, बल्कि नैतिक अध:पतन भी। इसका प्रभाव आत्मा पर पडता है। स्वतंत्रता मानवता-प्रगति की आधारभूत आवश्यकता है। मानवता की विकास-यात्रा के तमाम अगुआ सेनानियो ने, विचार-स्वतंत्रता, विश्वास-स्वतंत्रता और नव अधिकारो के लिए जद्दोजहद किया है।" —आचार्य कृपलानी

श्रीमती गांधी सींखचों में

२६ जून, १९७६ को देश-भर मे काला दिवस मनाया गया। दिवस के संबंध मे देश-भर मे गिरफ्तारियों का अनुमान ५,००० से भी ज़्यादा है। केवल दिल्ली मे कोई ५०० कार्यकर्ता गिरफ्तार किए गए। कुछ लोग तो सरकार द्वारा २-३ दिन पहले चालू की गई पकड़-धकड़ में गिरफ्तार किए गए और कुछ लोग पोस्टर लगाते हुए और पर्चे बांटते हुए गिरफ्तार किए गए।

इस अवसर पर दिल्ली की दीवारों पर तीन तरह के पोस्टर चिपकाए गए। एक पोस्टर मे श्रीमती गांधी सींखचों के भीतर दिखाई गई थीं, नीचे लिखा था—"तानाशाह की आखिरी जगह"। इस पोस्टर की दिल्ली-भर में काफी चर्चा रही। दूसरे पोस्टर मे २६ जून का संकल्प था। तीसरा काला पोस्टर था, जो काले दिवस का प्रतीक था।

दिल्ली-भर मे कई हज़ार पुलिस और सी०आई०डी० चौबीस घटे गस्त पर रही। पोस्टर फाड़ने और गिरफ्तारियों के मुहिम के बाद भी कहीं-कहीं आज भी पोस्टर लगे है। बहादुर कार्यकर्ताओं को ये सरकारी बन्दोबस्त रोकने में नाकाम रहा।

एम्नेस्टी इण्टरनेशनल की अपील

२४ जून, १९७६ को एम्नेस्टी इण्टरनेशनल ने भारत सरकार से अपील की कि आपातस्थिति की पहली वर्षगांठ पर तमाम राजनैतिक बन्दियों की

आम रिहाई कर दी जाए। इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ने संवैधानिक नागरिक अधिकारो की वापसी और अन्तर्राष्ट्रीय मानव-अधिकारो के घोषण-पत्र को लागू करने की अपील भी की।

सस्था ने कहा है कि अगर सरकारी आकड़े को ही सही मान लिया जाए तो आज अस्सी हजार लोग जेलों मे बन्द है और आज भी बड़ी सख्या मे गिरफ्तारियां जारी हैं।

श्रीमती गाधी के नाम अपने पत्र मे सस्था ने कहा है कि भारत मे मूलभूत मानव-अधिकारों के हनन से विश्व-भर के स्वतन्त्रता-प्रेमी चिन्तित है। सस्था ने श्रीमती गाधी से एम्नेस्टी इण्टरनेशनल के एक प्रतिनिधि मण्डल को भारत आने देने और स्थिति देखने देने की अनुमति मांगी है। ('जनवाणी' से)

जार्ज फर्नाण्डीज़ के साथ बर्बरता

१२ जून को समाजवादी दल के नेता जार्ज फर्नाण्डीज को दिल्ली लाया गया था। हवाई अड्डे से उन्हें सीधे तिहाड़ जेल ले जाया गया। लेकिन दो ही घटे बाद लालकिले के कैदखाने मे ले जाया गया और लगातार १० दिनों तक पूछताछ की गई।

जार्ज की ६५ वर्षीय माताजी श्रीमती एलिस फर्नाण्डीज़ ने २४ मई को राष्ट्रपति के नाम एक पत्र लिखा था, उसका एक अंश यहां प्रकाशित किया जा रहा है :

"१ मई को मेरे दूसरे लड़के लारेंस फर्नाण्डीज़ को पुलिस घर से पकड़कर ले गई। उससे पुलिस जार्ज का अता-पता पूछती रही। उसके साथ अमानवीय और बर्बरतापूर्ण बर्ताव किया। उसे इतना पीटा गया कि उसके शरीर की पांच हड्डियां टूट गई। उसे धमकाया गया कि अगर उसने जार्ज का पता नही बताया तो उसे चलती रेल के सामने पटरियों पर फेंक दिया जाएगा। २० मई तक उसे कई पुलिस हिरासतों में बहुत बुरी तरह से रखा गया। तीन दिन तक उसे कोई खाना नहीं दिया गया। बीस दिनों के बीच वह केवल तीन दिन स्नान कर पाया। कई बार वह मारपीट के कारण बेहोश हुआ। उसे पुलिस अलग-अलग हस्पतालों में दाखिल कराती रही, ताकि वह ज़िन्दा रहे।"

विनोबा पर कोप-कृपा

श्रीमती इन्दिरा गांधी की पुलिस ने विनोबा को भी नहीं बख्शा। पुलिस

ने पवनार आश्रम पर छापा मारकर उनकी मासिक पत्रिका 'मैत्री' की प्रतियों को जब्त कर लिया। इसमे विनोबा के आमरण अनशन की घोषणा छपी थी। श्रीमती गांधी को बाबा के फैसले की जानकारी गृहमंत्री ने दी थी। श्रीमती गांधी ने आवश्यक कार्यवाही करने का आदेश दिया। लेकिन कार्यवाही तब हो जब वे मास्को में हों, यह भी उनकी हिदायत थी।

जब पुलिस पवनार आश्रम में घुसी तो विनोवा खड़े हो गए और उन्होंने अपने दोनों हाथों को जोडकर 'जय जगत' कहा। उन्होंने कहा कि युगवासी और भूमिपुत्र को छोडकर प्रेस बिलकुल नकारा हो गई है। अखवार वाले जी-हुजूरिये हो गए है। वे यह समाचार नही छापेंगे। वे हंसे और कहने लगे, "हरे राम, यह कैसी विचित्र दुनिया है !" ('जनवाणी' से)

राजनैतिक कैदियों के साथ दुर्व्यवहार

सर्वश्री एच० एम० पटेल, बनारसीदास और ओमप्रकाश त्यागी (सब संसद सदस्य) ने गृहराज्य मंत्री श्री ओम मेहता को पत्र लिखकर तिहाड़ जेल में राजनैतिक बन्दियों के साथ हो रहे घोर दुर्व्यवहार और उपेक्षा की ओर ध्यान आकृष्ट किया। राजनैतिक कैदियों को जिस तरह का भोजन और जैसी सुविधाएं मुहैया की जानी चाहिए, उनसे उन्हें वंचित रखा जा रहा था। इसपर राजनैतिक बंदियों ने एक समिति बनाई। इस समिति की ओर से मीसाबंदी ठाकुर ओंकारसिंह जेल-अधीक्षक से मिलने गए। अधीक्षक ने उन्हें धक्के देकर बाहर निकाल दिया। बार-बार दिए गए प्रतिवेदनों पर अब तक सुनवाई नहीं हुई। जब जेल मे इस उपेक्षा व दुर्व्यवहार के खिलाफ भूख-हड़ताल चालू हुई तो जेल-अधीक्षक ने बदला लेने वाली कार्रवाइयां चालू कर दी। मसलन राज-नैतिक बंदियों को एक से दूसरे वार्डो में स्थानान्तरण, यहां तक कि उन्हें कैदियों के वार्ड में भेज देना या रोज दोपहर को ताले बन्द कर देना आदि कार्रवाइयां हुई।

संसद सदस्यों ने यह भी लिखा है कि राजनैतिक बदियों को शारीरिक व मानसिक यंत्रणाएं दी जा रही है। उन्होंने अपील की कि इनके साथ अपराधियों या असामाजिक तत्त्वों की तरह बर्ताव नहीं किया जाए, वे राजनैतिक बन्दी है। अंग्रेजों की जेलों में भी इस तरह की अभद्रता राजनैतिक कैदियों के साथ नहीं की जाती थीं।

जबरिया नसबंदी के खिलाफ आन्दोलन

मथुरा की ही घटना है कि जिलाधीश ने स्थानीय ११ कालेजों के अधिकारियों को नसबंदी के लिए आदेश दिया। उस आदेश को प्रिंसिपल, प्रवक्ता तथा छात्रों ने मानने से इनकार कर दिया। १८ अगस्त से २८ अगस्त तक छात्रों का प्रबल आन्दोलन हुआ। बाजार व कालेज बन्द हुए। जलूस निकले। इस दौरान १६५ प्रवक्ता, ११ प्रिंसिपल और कुछ छात्र गिरफ्तार हुए। जब सभीको बिना शर्त रिहा किया गया, तभी आन्दोलन बन्द हुआ।

वरिष्ठ पत्रकारों पर प्रहार

समाचारपत्रों में दशहत बढाने के लिए अब एक और सरकारी कदम बढ़ा है। सरकारी इशारे पर इंडियन एक्सप्रेस के नवनिर्मित तीन सदस्यीय 'बोर्ड ऑफ डायरेक्टर' ने अपनी कलकत्ता बैठक में तीन वरिष्ठ पत्रकारों से त्यागपत्र लेने का फैसला किया है। इनमें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के पत्रकार-श्री कुलदीप नैयर के अलावा इडियन एक्सप्रेस के प्रधान संपादक श्री अजित भट्टाचार्य है। श्री रामनाथ गोयनका (इंडियन एक्सप्रेस के मैनेजिंग डायरेक्टर) ने इसका विरोध किया। फिर भी प्रस्ताव एक के विरुद्ध दो मतों से पास हो गया। इसके दो दिन बाद ही इडियन एक्सप्रेस (दिल्ली) की बिजली काट दी गई।

आगरा में पुलिस बनाम सेना की भिड़ंत

७ सितम्बर की घटना है। आगरा कैंट क्षेत्र में एक संगीत सभा का आयोजन था। उसमें पुलिस के लोगों ने सेना के एक अफसर को बुरी तरह पीट डाला। यह जिला पुलिस-अधीक्षक श्री नाथूलाल की देख-रेख में रात्रि १०-३० बजे हुआ। ये केन्द्रीय मंत्री श्री बी०पी० मौर्य के रिश्तेदार है। १२ बजे के लगभग सेना से फालन करा लिया गया। हथियारों से लैस होकर सेना के लोगों ने पुलिस वालों को पकड़-पकड़कर सेना की गाड़ियों में भर डाला। इस सिलसिले में सेना ने आगरा के लगभग सभी थानों पर धावा बोल दिया। छावनी में ले जाकर उनकी जोरदार पिटाई की। लगभग तीन बजे जिलाधीश, जो कि कर्नाटक के राज्यपाल श्री उमाशंकर दीक्षित के सुपुत्र है, ने पी०ए०सी० को सुरक्षा प्रबन्ध संभालने को कहा। लेकिन उनको ज़बर्दस्त हैरानी हुई कि पी०ए०सी० छावनी को सशस्त्र सेना ने पहले ही घेर लिया था, और तीनों

दरवाजों पर से वे माइक के द्वारा बाहर न निकलने की चेतावनी दे रहे थे। एक सप्ताह तक आगरा मे पुलिस नाम की कोई चीज नही रही। सेना और प्रशासन (पुलिस) में तनातनी इतनी बढी कि केन्द्रीय सरकार ने अपरोक्ष रूप से सेना का समर्थन किया। सेना के अधिकारी इस बात पर ज़ोर देते रहे कि या तो तमाम पुलिस अधिकारियों का तबादला किया जाए या फिर तीन वरिष्ठ पुलिस अधिकारी क्षमा मांगें।

उस रात एक उल्लेखनीय घटना यह घटी कि जिलाधीश श्री दीक्षित ने जब ब्रिगेडियर को टेलीफोन किया तो उन्होंने उन्हे कर्नल से बात करने को कहा। कर्नल साहब ने पुलिस अधीक्षक नाथूलाल से बात करना स्वीकार कर लिया, लेकिन जब नाथूलाल कर्नल के घर पहुंचे तो दरवाज़े पर मिलिटरी पुलिस ने उनकी जमकर पिटाई की। ('जनवाणी' से)

नसबन्दी कराने पर बी०डी०ओ० को गोली

रोहतास जिले मे एक १७ वर्ष के बालक की जबरन नसबंदी करने से विक्षुब्ध होकर उसके पिता ने वहा के प्रभारी बी०डी०ओ० को गोली मार दी और स्वयं पुलिस मे उपस्थित होकर अपना अपराध स्वीकार कर लिया। उसे मीसा में बन्द कर दिया गया है।

घटना इस प्रकार बताई जाती है कि एक सुरक्षित बस मे लगभग ५० व्यक्तियों को मजिस्ट्रेट ने टिकट दिखाने को कहा, सुरक्षित बस मे टिकट लेने का कोई कारण ही नही था। इसपर पुलिस ने सबको उतारकर जबरन नसबंदी करा दी। बस मे ८० वर्ष के बूढ़े से लेकर १७ वर्ष का एक बालक भी था।

('जनता समाचार', १५ अगस्त, १९७६)

युवक कांग्रेस के काले कारनामे

सुलतानपुर-अमेठी संसदीय निर्वाचन क्षेत्र में ३ विधानसभा सीटें सुल्तानपुर जिले की है तथा २ सीटें रायबरेली जिले की है। इसीसे मिली सीट प्रधानमंत्री की है। इसी अमेठी सीट से संजय गांधी चुनाव लड़ने की योजना बना रहे हैं।

वन विभाग ने एक नया विश्रामगृह बनवाया है, जहां से संजय अमेठी और रायबरेली क्षेत्र के चुनाव-अभियान का नियंत्रण करेगे।

अमेठी में सजय गांधी का माहौल बनाने के लिए १५ मई से २ जुलाई

तक एक काग्रेस शिविर चलाया गया। इसमें उत्तरप्रदेश के अलावा पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, मध्यप्रदेश, राजस्थान तथा अन्य प्रदेशों के युवक-युवतियां श्रमदान करने के लिए 'मुफ्त' में आते रहे। शिविर का उद्घाटन और समापन स्वय संजय गांधी ने किया।

शिविर मे केन्द्रीय मंत्री श्री प्रकाशचन्द्र सेठी, श्री चन्द्रजीत यादव, युवक कांग्रेस की अध्यक्षा श्रीमती अम्बिका सोनी तथा बड़ी संख्या में मंत्री और विधायक आते-जाते रहे।

घोषित कार्यक्रम तो सड़क बनाना, पेड़ लगाना, परिवार नियोजन तथा स्वच्छता का ग्रामीणों मे प्रचार करना था, लेकिन जो कुछ हुआ, उसका ब्योरा निम्न प्रकार है.

श्रीमती अम्बिका सोनी के आगमन पर दो बार युवक काग्रेसियों मे चार-बाग स्टेशन पर मार-पीट हुई।

उत्तरप्रदेश के मुख्यमत्री श्री नारायणदत्त तिवारी जब ६ जुलाई को शिविर में पहुंचे तो ज़िन्दाबाद-मुर्दाबाद के नारों के बीच उन्हें धक्के दिए गए।

शिविर के युवकों की गुण्डागर्दी से भयभीत होकर अमेठी के निकट रहने वाली वेश्याओं को हटा दिया गया।

ग्रामीणों की बहू-बेटियों की इज्ज़त लूटने की शिकायते थानों पर होती रही, पर शिकायत करने वालों को पुलिस ने भगा दिया।

शिविर के बाद खाली शराब की एक ट्रक बोतले हटाई गई। आबकारी राज्यमंत्री वीर बहादुर सिंह को इन्तजाम करने की हिदायत थी।

अमेठी बाजार मे सामान लूटने की दर्जनों घटनाए हुई।

एक दिन अमेठी स्टेशन पर काशी विश्वनाथ एक्सप्रेस रोक ली गई। महिलाओं के साथ अभद्र व्यवहार किया गया।

जिस श्रमदान के लिए युवक आते थे, उसे पूरा करने के हेतु सार्वजनिक निर्माण विभाग ने अलग से कर्मचारी भर्ती किए। युवक तो नेताओं के आने पर फोटो खिचवाने के लिए खड़े होते थे।

शिविर में भाग लेने वालों को अयोध्या, प्रयाग आदि की 'तीर्थ-यात्रा' के लिए पुलिस औसतन रोज एक बस को कब्ज़े में लेकर इनके सुपुर्द करती थी।

इस शिविर पर लगभग एक करोड़ रुपया व्यय हुआ। इस व्यय में सुरक्षा-प्रबंध पर हुआ व्यय शामिल नही है।

जनता में असन्तोष व्याप्त है। ('जनता समाचार' से, १५ अगस्त, १९७६)

सरकारी कार्यालयों पर काला झण्डा

काले दिवस २६ जून की घटना है। मुंगेर ज़िले के जमुई नामक शहर में कई सौ लोगों की भीड़ एस० डी० ओ० कोर्ट पर पहुंच गई। भीड़ ने आग्रह किया कि आज काला दिवस है और आज इस तिरंगे की जगह आपको काला झण्डा फहराना होगा। भीड़ ने एस० डी० ओ० से आग्रह किया कि लोकतंत्र की हत्या करने वाले इस दिन पर खुद काला झण्डा फहराएं। एस० डी० ओ० को काला झण्डा फहराना पड़ा। इसी तरह बेतिया ज़िला कार्यालय पर भी काला झण्डा फहराया गया। बिहार-भर में अनेक जगहों पर दिन-भर काले झण्डे फहराए गए। इस सिलसिले मे कोई ५०० कार्यकर्त्ता गिरफ्तार किए गए।

सभा की निराली अनुमति

ग्वालियर में मुखर्जी बलिदान पखवाड़े के लिए सभा की अनुमति लेने के लिए जनसघ के श्री प्रकाश राठौड़ ज़िलाधीश के पास गए। जिलाधीश ने कहा कि अच्छा, आप अभी तक बाहर है ? उन्हें तत्काल मीसा में बन्द कर दिया गया।

मीसाबंदी लखनपाल की मृत्यु

२४ जुलाई, '७६ को चण्डीगढ की जेल में मीसा-बन्दी श्री सी० एल० लखनपाल की मृत्यु हो गई। आप संवैधानिक लड़ाई के लिए प्रसिद्ध रहे। हाल ही नें उन्होंने चौ० बंसीलाल के प्रत्याशी तत्कालीन एडवोकेट जनरल जे० एन० कौशिक हरियाणा बार कौंसिल को चुनावों में बुरी तरह हराया था, हालांकि वे उस समय भी जेल में थे। हारने के बाद श्री कौशिक को बिहार का राज्यपाल बना दिया गया।

मार्क्सवादी कार्यकर्त्ताओं को भ्रमित करने की कोशिश

दक्षिणपथी कम्युनिस्टों और मार्क्सवादी कम्युनिस्टों के मध्य हुई वार्ता को 'समाचार' द्वारा खूब प्रचारित किया गया। असल में यह मार्क्सवादी पार्टी के कार्यकर्त्ताओं को भ्रमित करने की सरकारी चाल थी। सच्चाई यह है कि मार्क्सवादी कार्यकर्त्ता जगह-जगह तानाशाही के खिलाफ संघर्ष के साथ सहयोग कर रहे है। पार्टी ने एकाधिक बार साफ-साफ कह दिया है कि जब तक दक्षिण-

पंथी कम्युनिस्ट पार्टी इन्दिरा सरकार का समर्थन बन्द नहीं करती, तब तक नज-दीक आने का कोई सवाल ही खड़ा नही होता। मार्क्सवादी पार्टी दक्षिणपंथी कम्युनिस्टों के साथ बोनस जैसे कुछ सवालों पर संयुक्त लड़ाई लड़ने की बात कर रही थी। लेकिन अब डांगे बोनस को बहुत 'छोटा सवाल' मानते है, क्योंकि 'मुल्क में बहुत बड़ी-बड़ी बाते हो रही है।'

'स्टेट्समैन' पर सरकारी कोप

'स्टेट्समैन' दैनिक के प्रेस की पुलिस ने तलाशी ली और लोकनायक जयप्रकाश नारायण की प्रकाशनाधीन जीवनी के छपे फार्मों को जब्त कर लिया, हालांकि इसमें सरकार की कोई आलोचना नही थी।

'स्टेट्समैन' को 'आब्जेक्शनेबल मैटर एक्ट' के तहत सेमीनार का अन्तिम अंक छापने के खिलाफ भी नोटिस दिया गया। इस अंक में देश के चोटी के बुद्धिजीवियों ने आपातस्थिति की पोल खोलकर रख दी थी।

२०० छात्र निलंबित

कर्नाटक के २०० छात्रों को विश्वविद्यालयों से निलम्बित कर दिया गया। कारण सिर्फ यह था कि उन्होंने मौजूदा तानाशाही के खिलाफ हुए सत्याग्रह में हिस्सा लिया था। उनमें से प्रत्येक छात्र ने उच्च न्यायालय मे अपील की। दिल्ली के जिन छात्रों को 'रेस्टीकेट' किया गया था, उनके बारे में उच्च न्यायालय ने अन्तरिम स्थगन आदेश जारी किया है और सरकार की भर्त्सना की है।

मोरारजी का जवाब

संगठन कांग्रेस के नेता और भूतपूर्व उपप्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई के पास श्रीमती गांधी का एक दूत यह सन्देशा लेकर गया कि अगर वे पैरोल पर मुक्त होना चाहें तो आवेदनपत्र दे सकते है। इसपर श्री मोरारजी भाई का उत्तर था—"गो एण्ड टेल योर प्राइम मिनिस्टर दैट आई विल आउट लिव हर" (जाओ और जाकर अपनी प्रधानमंत्री से कह दो कि मैं उनसे ज्यादा ज़िन्दा रहूंगा।) ('जनवाणी', वर्ष २, अंक ५ : २२ सितम्बर, १९७६ से)

विज्ञापन का बजट खलास

सरकारी विज्ञापन संस्था डी० ए० वी० पी० का बजट खलास हो गया है। अब पूरक बजट की मांग की गई है। बजट बिचारा क्यों खलास न हो। आखिर अकेले प्रधानमंत्री के २० सूत्री कार्यक्रम पर अनगिनत डाकूमेंट्री फिल्में इस छोटे-से काल-खण्ड मे बनाई गई। पूरे-पूरे पृष्ठों के हज़ारों विज्ञापन आपात-स्थिति को जायज़ बताने के लिए दिए गए।

'चुनाव होंगे कि नहीं ?'

'हमें चुनाव नही, रोटी चाहिए', 'चुनाव ही लोकतंत्र नही है', 'चुनाव आर्थिक विकास के बाद मे', आदि के प्रचार से लोकतंत्र की बुनियाद ही हिलाई जा रही है। लोकसभा की अवधि एक साल के लिए दो बार बढाई जा चुकी है। जिस लोकसभा का कार्यकाल समाप्त हो चुका है, और जिसका बहुमत श्रीमती गांधी के तानाशाही आतंक के कारण कुछ भी करने को मजबूरन सहमत है, उससे लोकतत्र की फासी के आदेश पर हस्ताक्षर कराया गया है।

अब तक के उठाए गए कदमों और दिए गए वक्तव्यों से यह पूरी तरह ज़ाहिर हो चुका है कि श्रीमती गांधी लोकतंत्र की पूरी तरह हत्या कर देने पर उतारू है। कभी-कभार चुनाव की सुरसुरी छोड़ देना भी लोकतंत्र से अभ्यस्त समझदार वर्ग को भ्रमित करने और झूठी दिलासा देने की ही चाल है, ताकि तानाशाही पूरी तरह नंगी न हो और लोकतंत्रवादी वर्ग निराशोन्मत होकर बगावत की राह न पकड़े।

आखिर चुनाव की औपचारिकता भी पूरी करने में श्रीमती गांधी कतरा क्यों रही है ? हाल ही में अपने एक निजी मित्र को लिखे छोटे-से पत्र में उन्होंने लिखा है : "मैं चुनाव मे उतरने को कभी भी तैयार हूं, लेकिन चुनाव और उसके परिणामस्वरूप होनेवाली ढील मे आज की स्थापित कानून और व्यवस्था, जो आपातस्थिति में उपलब्ध हुई है, अस्त-व्यस्त हो जाएगी। चुनाव-अभियान से अव्यवस्था होने का खतरा है। मुझे इस निर्णय पर पहुंचने के पूर्व इसकी एहतियाती कार्रवाई करनी है।" इधर कानून मंत्री ने फरमाया है कि लोकतंत्र-विरोधी शक्तिया अभी पस्त नही हुई है, इसलिए चुनाव एक साल के लिए और स्थगित करना ज़रूरी हो गया है।

लेकिन असली कारण कुछ और है। श्रीमती गांधी को 'रिसर्च एण्ड

'अनालिसिस विंग' ने सर्वेक्षण के आधार पर कहा है, "पूर्वी भारत मे चुनाव-परिणामों मे सत्तारूढ़ दल के लिए कुछ शंकाएं है। सर्वेक्षण के मुताबिक काग्रेस के वोट १० प्रतिशत तक गिरेंगे और संयुक्त विपक्ष के वोट ६ प्रनि बढ़ेंगे।"

इसके अलावा जबरिया नसबंदी के कारण निम्न वर्ग सत्तापक्ष के खिलाफ हो गया है। बीसियों जगह पुलिस की गोलियों से भूने गए सैकड़ों लोगों की खबरें भले ही समाचारपत्रों में न आने दी गई हों, पर स्थानीय और इलाकाई तौर पर सत्ता कांग्रेस पर इसका, अगर चुनाव निष्पक्ष हुए तो, काफी विपरीत असर पड़ेगा। असल में श्रीमती गाधी तानाशाही को संवैधानिक जामा पहनाने, आम जनता को तानाशाही का अभ्यस्त बनाने और विरोधियों को पूरी तरह पस्त कर देने के बाद चुनाव का नाटक करना चाहती है। इधर इस समय का सत्तारूढ़ वर्ग अनिश्चित भविष्य के बजाय राजनैतिक यथास्थिति में ही अपना भविष्य सुरक्षित देखता है और इसीलिए आज की निर्बाध सत्ता के दुरुपयोग का आनन्द उठा रहा है। चुनावी राजनीति के द्वार श्रीमती गाधी ने तकरीबन बन्द ही कर दिए है।

('जनवाणी', १-१२-७६)

परिवार-नियोजन का जनून

परिवार-नियोजन का जनून किस छोर पर जा पहुंचा है, इसकी एक मिसाल बिहार के मालकी कस्बे में मिली। मुख्य सड़क पर पुलिस पार्टी के साथ परिवार नियोजन विभाग का दस्ता खडा हो गया। बसों को रोककर सवारियों की जबरन नसबंदी करने का सिलसिला चलता रहा। न उनको छोडा गया, जो बूढ़े थे, न उनको, जो अविवाहित या नव विवाहित थे। आन्ध्र के हैदराबाद क्षेत्र मे इस आतंक के कारण गाव खाली हो गए है। एक व्यक्ति ने जबरिया नसबंदी कर देने पर आत्महत्या कर ली। हरियाणा के मेवात में एक मौलवी की नसबंदी कराने के लिए और साथ मे दहशत पैदा करने के लिए उसे ट्रक में खड़ा करके शहर में घुमाया गया। इस इलाके में परिवार-नियोजन के इस अभियान के कारण स्कूल तक बन्द पड़े है।

परिवार-नियोजन—दूसरा दौर

जसशाद वल्द अब्दुल गफ्फार, रहमत वल्द हजन शहीद, सुलेमान वल्द

इब्राहिम, सत्तार वल्द जब्बार, सलीम वल्द ज्वाला, जीतसिंह वल्द अमरनाथ, शबीर वल्द अजीज, नियाजुद्दीन वल्द हैदर, सद्दीक वल्द कमालुद्दीन, हबीब वल्द मौलान भसीन, मंगता वल्द बाबू, रफीक वल्द अशरफ, अशरफ वल्द अत्ता, शबीर वल्द जिआउद्दीन, कुसुम वल्द अत्ता, काल्लू वल्द रशीद—ये तो कुछ ही नाम है, जो अकेले मुजफ्फरनगर में पिछले महीने जबरिया परिवार-नियोजन की खिलाफत में उठे जनक्षोभ को पुलिस की गोलियों से दबाने के सिलसिले मे शहीद हो गए। ऐसी गोलीबारी अकेले उत्तरप्रदेश मे कम से कम आधे दर्जन स्थानों पर हुई। फरीदाबाद, नगीना सुलतानपुर, अमरोहा, खतौली, किराना आदि जगहों पर परिवार-नियोजन के सिलसिले मे उठ रहे व्यापक जनविरोध को गोलियों से 'शान्त' किया गया। और देश के किसी भी अखबार में इस बारे मे एक लाइन भी नही छपी।

विपक्षी सासद जब मुजफ्फरनगर गए तो जिलाधीश ने पहले उनकी कारे जब्त कर ली और फिर बलात् वापस भेज दिया। वे राष्ट्रपति से मिले। लेकिन राष्ट्रपति उन्हे इस मामले में बिलकुल बेबस दीख पड़े।

('जनवाणी', १ दिसम्बर, १९७६)

तानाशाह की अपराजेयता ?

आपातकाल के दौरान लेखक द्वारा लिखा गया 'पोज़ीशन पेपर' का एक अंश

(लेखक द्वारा आपातकाल के एक साल बीत जाने पर लिखे गए एक 'पोजीशन पेपर' के एक तिहाई भाग का हिन्दी अनुवाद। यह पेपर पहले सिर्फ २० नेताओं को दिया गया था। बाद मे इसका यही एक तिहाई भाग उ० प्र० तथा दिल्ली के कुछ और प्रांतों में वितरित किया गया था।)

(१) आपातकाल और श्रीमती गाधी की तानाशाही ने न केवल सरकार का मूल चरित्र बदल डाला है बल्कि एक बड़ी सीमा तक आम जनता और व्यक्ति-व्यक्ति का बाहरी व्यवहार बदल डाला है। कुछ हद तक उनका मानस भी बदला है। समूचा समाज धीरे-धीरे भयाक्रान्तता के भीषण मानसिक संकट में डूबता जा रहा है। सत्ता को टिकाए रखने के लिए और उसपर अपनी जकड़ मजबूत करते जाने के लिए सत्ता के ही उपकरणों का धूर्त दुरुपयोग सफल होता प्रतीत हो रहा है। श्रीमती गांधी पूरे तौर पर तानाशाह बनती जा रही है। दूसरी तरफ विपक्ष के बड़े-बड़े दिग्गज जेलों में पडे है। उनके और सघ के शक्तिलाशी होने की जन-मान्यता आज समाप्त-सी होती जा रही है।

यहां मैंने भयाक्रान्तता शब्द का प्रयोग मामूली मनोवैज्ञानिक अर्थों में नहीं किया है। बल्कि उस भय की ओर मेरा सकेत है जो दूरगामी असर डालता है, लम्बे समय तक सामाजिक मानस को घेरे रहता है––नौकरी छूटने का भय, जेल जाने का भय, कहीं कोई सुनवाई नहीं होने का भय, तरह-तरह के सरकारी दमन का भय वगैरह।

श्रीमती गांधी का पूरा-पूरा जन-अनुमोदन इस गम्भीर संकट का एक लक्षण है। यहां इसकी कोई आवश्यकता नही कि मैं श्रीमती गांधी द्वारा इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए इस्तेमाल की गई पूरी सुविचारित रणनीति का

जिस विषय का विश्लेषण करना चाहता हूं, उसपर इस अन्तर का बहुत प्रभाव नहीं पड़ता। हमारे समाज में, जहां सामाजिक चरित्र में विद्रोह नगण्य मात्रा में है, पूर्ण आतंक की जरूरत ही नहीं है। निकट भूत में भय की जो खुराक दी गई है, वह काफी है।

(२) संघर्षशील शक्तियो के नेतृत्व को यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि आपात-पूर्व की स्थितिया अथवा आज की स्थितियां १९४२ की स्थिति की तुलना मे काफी जुदा किस्म की है।

एक तो तब के शासक विदेशी थे, श्रीमती गांधी भारतीय है, इसलिए वैसा आक्रोश पैदा नही होता, जैसाकि गुलाम मुल्कों मे होता है।

दूसरे, साम्राज्यवाद एक अस्ताचलगामी शासन तंत्र था, जबकि तानाशाही रोज नये-नये रूप धरकर विश्व के बड़े भूभाग पर आज भी कायम है। इसके विपरीत लोकतन्त्र के कदम विश्व में पीछे हटते नजर आ रहे हैं। बड़े लोकतंत्र-वादी देश आज इस बात की चिन्ता बहुत कम करते है कि किसी देश में तानाशाही है या कि लोकतंत्र, बल्कि सरकारों के आपसी सम्बन्ध धीरे-धीरे ऐसे विकसित होते जा रहे है कि एक अर्थ में दुनिया के आम लोगों के खिलाफ सरकारों का सयुक्त मोर्चा कायम होता नजर आ रहा है। इसका असर तानाशाही शासन के तहत रहनेवाले मानव-समाज पर बहुत विपरीत पड़ रहा है। परन्तु सरकारों के संयुक्त मोर्चो में कमज़ोरी आती नजर नहीं आ रही है।

तीसरे, इंग्लैंड के प्रशासनिक अधिकारी किसी न किसी हद तक कानून का शासन चलाते थे। लेकिन श्रीमती गांधी संविधान में संशोधन करके और अध्यादेशों द्वारा लोकतंत्री मूल्यों की घोर उपेक्षा ही नहीं, हत्या तक कर रही हैं।

श्रीमती गांधी ने गांधीवादी भाषा को समझने और उसमें बातचीत करने से साफ इंकार कर दिया है।

इसलिए पिछले युद्ध के सेनापतियों की युद्ध-प्रणाली से अगर यह संघर्ष चलाया गया तो उसकी सफलता संदिग्ध है, क्योंकि वक्त बदल गया है, शत्रु बदल गया है। गांधीवादी तकनीक इस नये माहौल में पुरानी पड़ गई है। इसलिए ज़रूरी यह है कि, हम नई रणनीति का विचार करें।

(३) आज सरकार और श्रीमती गाधी के सम्पूर्ण अनुमोदन का सिलसिला चल रहा है, मैं उसका विश्लेषण करना चाहता हूं। जब कोई व्यक्ति

सतही तौर पर ही सही, सर्वत्र समर्थन का माहौल देखता है, जब कोई औपचारिक और खोखले तौर पर ही सही, भयजन्य अनुशासन का व्यापक परिपालन देखता है, आर्थिक परिवर्तन के छोटे-मोटे दावों को चमक-दमक के साथ पेश हुआ देखता है, जब आपातकाल की 'उपलब्धियों' का दिन-रात बजता नगाड़ा सुनता है, तो क्रमशः थोडा-बहुत ही सही, सरकार के साथ सहमत होता जाता है। भय उसे पीछे धकियाता है, अस्तित्व-रक्षा का संकट अन्दर से जोर मारता है और वह चुपचाप ढोंगी अनुमोदक भीड़ का हिस्सा बन जाता है। निराशा उसे हताश करती है, उसे उदासीन बनाती है। उदासीनता मे वह सरकारी प्रचार-तंत्र को अवचेतन मन में स्वीकार करता हुआ ढोंगी अनुमोदक भीड़ का भाग बनता जाता है। इधर सरकारी एजेंसिया, प्रचार-तंत्र, टैक्स-उगाही का तंत्र, पुलिस, न्यायालय आदि का दबाव उसके मन के विद्रोही अंश को दबा देते है, बेहोश कर देते हैं, कुछ अश तक मार भी देते हैं, फलत. वह ढोंगी अनुमोदक भीड़ का अंश बनता जा रहा है। समाज ऐसी स्थिति में आदतन सरकारी इच्छाओं के प्रति अनुकूल प्रतिक्रिया करता है क्योंकि धारा के अनुकूल बहना बड़ा सरल होता है।

जब अनुमोदन समाज की आदत में शुमार हो जाता है, समाज बगावतियों को पौष्टिकता प्रदान नही करता। यह ठीक है कि यह सिलसिला अभी गहराया नहीं है, पर निश्चय ही वह बढ़ने लगा है। इसलिए संघर्ष को लम्बा मानने वाले इस बदलते सामाजिक व्यवहार को नज़रन्दाज़ नही कर सकते।

(४) श्रीमती गांधी को समझने में विपक्ष ने शायद भूल की है। श्रीमती गांधी इस हद तक तानाशाह हो सकती है, शायद ही कुछ लोगों ने इसकी सम्भावना को कभी माना होगा। जब लोकतंत्र उनकी कुर्सी की रक्षा के लिए व्यर्थ सिद्ध होने लगा उन्होंने लोकतंत्र को ही अपंग कर दिया। आज लोकतंत्र मृत्युशय्या पर पड़ा अन्तिम घड़ियां गिन रहा है। स्वर्णसिंह पैनल की सिफारिशों, सवैधानिक संशोधन, आकाशवाणी, टेलीविज़न, समाचार, सेंसरशिप आदि के मौजूदा रंग-ढंग, विपक्षी नेताओं, कार्यकर्ताओं और उनके द्वारा नियंत्रित संस्थाओं के साथ किए गए सलूक, कांग्रेस पर व्यक्तिवादी वर्चस्व, संजय गांधी को राकेट की तरह उछाल देना आदि साफ ज़ाहिर करते है कि हिन्दुस्तान मे लोकतंत्र का अर्थ किस तरह की तानाशाही है।

(५) कुछ लोग इससे सन्तोष ग्रहण करते हैं कि जब तक कम से कम संसदीय जनतन्त्र का ढांचा, चाहे वह फिर मुर्दा ही क्यों न हो, चल रहा है, खड़ा

है, लोकतंत्र सतही और नकली तौर पर ही क्यों न चल रहा हो, जब तक चलता है तब तक आशा करनी चाहिए कि श्रीमती गांधी लोकतंत्र की गाड़ी को पुन: पटरी पर लाएगी। यह मत निष्क्रिय प्रेक्षकों का हो सकता है। लेकिन भूमिगत संघर्ष को वह देखना चाहिए जो कर दिया गया है, न बचे हुए ढाचे को और न ही श्रीमती गांधी के पेंडिंग निर्णयों को। जो कुछ श्रीमती गांधी ने कर दिया है उसका अर्थ है भारत मे पारिवारिक तानाशाही की स्थापना की ओर तेज़ी से बढ़ना।

जिस तरह का सलूक उन सब लोगों के साथ किया जा रहा है, जो श्रीमती गांधी और संजय गांधी के खिलाफ है या उनके लिए तालियां नही बजा रहे है, उसका एक ही अर्थ है वह यह कि श्रीमती गांधी तानाशाही को संस्थाबद्ध करेगी। उसका संवैधानिकीकरण करेगी। इस स्थिति मे श्रीमती गाधी द्वारा लोकतंत्र की गाड़ी को फिर से पटरी पर लाने का सवाल ही खड़ा नहीं होता।

(६) ऐसी स्थिति मे चुनाव और चुनाव के लिए विलय की प्रक्रिया पर जोर देना और उसपर आशाएं केन्द्रित करना फिजूल है। अव्वल तो चुनाव जल्दी होंगे, इसकी खास उम्मीद नही है। दूसरे, चुनाव मुक्त और निष्पक्ष होंगे, इसकी कोई गारटी नही है। तीसरे, चुनाव के पहले राजनैतिक कार्यकर्ताओं को छोड़ दिया जाएगा, इसकी भी संभावना कम है। राष्ट्रीय स्वय सेवक संघ, जनसंघ, सोशलिस्ट पार्टी और लोकदल के पुराने समाजसेवियों को श्रीमती गांधी बहुत धीमे-धीमे छोड़ेगी ?

यह भी ध्यान मे रखने लायक है कि श्रीमती गांधी ने विभाजित विरोधी दलों को काम नहीं करने दिया, अपने बूते में रहते न तो वह विपक्ष का विलय स्वीकार करेंगी और न एकीकृत दल को काम करने देंगी। कम से कम आज इसकी कोई संभावना नहीं कि निकट भविष्य में स्थितियां बदल जाएंगी। पिछले एक वर्ष में स्थिति दिन-ब-दिन बदतर ही हुई है। इसलिए संघर्ष-रणनीति को गहराने के बारे में अधिक विचार किया जाना चाहिए। विलय और चुनावों पर ध्यान केन्द्रित रखने से संघर्ष कमजोर पड़ता है।

जब संघर्ष में लगे नेता या कार्यकर्ता चुनाव या विलय पर आशा केन्द्रित करते हुए संघर्ष करते है तो मुझे लगता है कि शायद हम तानाशाही से जल्दी मुक्त नहीं हो सकेंगे। श्रीमती गांधी को लोकतंत्र को पटड़ी पर लाने की क्या ज़रूरत पड़ी है ? सिर्फ लोकतंत्री मुहर के लिए वे इतना बड़ा

खतरा क्यों उठाने लगीं ? मेरा अपना ख्याल यह है कि श्रीमती गांधी को चुनाव कराने के लिए यदि बाध्य करना है तो भी संघर्ष को नये आयाम देने की ज़रूरत पड़ेगी। उन्होंने तो साफ कह दिया है कि "दोज लाईसेंसियस डेज़ विल नेवर कम बैक।" उनके सामान्यीकरण का अर्थ है लोगों को तानाशाही तौर-तरीकों का अभ्यस्त बनाना।

फिर चुनाव पर आशा क्यों केन्द्रित करे ? फिर चुनाव के लिए विलय के बजाय सघर्ष के लिए विलय की बात क्यो नही होनी चाहिए ? चुनाव तो जर्मनी मे विमियर संविधान के तहत भी हुए थे। अगर वैसे ही चुनाव अपने यहां हुए तो उससे क्या बनने वाला है ? विपक्ष को पगु बनाकर चुनाव हो भी गए तो जनता को तानाशाही पर मोहर लगाते कितनी देर लगेगी।

चुनाव निष्पक्ष नही होंगे, प्रचारतंत्र सरकारी कब्जे मे होगा, विपक्ष की शक्ति जेलों मे होगी, जनता डरी हुई और उदासीन होगी।

कल तक सेंसरशिप और तानाशाही के पालतू पहरेदार हास्यास्पद लगते थे। आज वे भारतीय ज़िन्दगी के सच्चाई है। लोग क्रमश· अभ्यस्त होते जा रहे है। आने वाले कल को वे समाज के स्वीकृत मूल्य बन सकते है। हम श्रीमती गांधी को गलत न समझे। उस महिला ने गलतफहमी की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी है। वह इमरजेंसी नही उठाएगी, बल्कि इमरजेसी का ही समान्यीकरण करना चाहती है।

(७) आधुनिक तानाशाही को आज विश्व में कहीं की सफलतापूर्वक चुनौती नहीं दी जा सकी है। आधुनिक तानाशाही तक्नोलाजिकल क्रान्ति की वजह से अनुपातहीन ढंग से शक्तिशाली हो गई है। इसलिए बीते हुए कल की किसी भी रणनीति से इसको पराजित नहीं किया जा सकता। और खास कर जहां तानाशाह श्रीमती गांधी की तरह बर्बर हो, मानवीय और लोकतंत्रीय मूल्यों की दृष्टि से शून्य हो ! आज की तानाशाही में सेंसर विभाग का कापी-संशोधक देश के सबसे बडे बौद्धिक से कहीं ज़्यादा शक्तिशाली होता है। एक आम अदना सिपाही भारत-केसरी के मुकाबले बलशाली होता है। सत्ता के गलियारे के मौन संकेत तुर्कमान गेट पर खड़े कई हजार विरोधियों के मुकाबले कहीं बलशाली होते है। तानाशाह जो चाहे तमाम जनता को मिनटों में बता सकता है और जनता वर्षों में एक बात भी तानाशाह के पास नही पहुंचा सकती।

(८) अनेक राजनैतिक विचारक कहते है कि श्रीमती गांधी की तानाशाही

अपने अन्तर्विरोध के भार से ही ढह जाएगी। उनका कहना है कि श्रीमती गांधी अकेली हैं। उनके साथ कोई नही है और इसीलिए कभी न कभी उसका खात्मा होगा। यह एक भ्रांति है। प्रकट विरोध के अभाव मे और सम्पूर्ण अनुमोदन के वातावरण मे, सत्ता के उपकरणों के औपचारिक आज्ञा पालन मे तानाशाही को अन्दर से मजबूत करते रहने की एक अन्तर्निर्मित व्यवस्था पैदा हो जाती है। स्वार्थी, भ्रष्ट और डरा हुआ प्रशासनतंत्र तानाशाही की सेहत का पूरा-पूरा ध्यान रखता है। आज की हालत में तानाशाह के इर्द-गिर्द खड़े स्वार्थी चापलूसों, विदेशी दलालों, कैरियरिस्ट बुद्धिजीवियों, पूंजीपतियों और नौकरशाही का आम जनता के खिलाफ एक संयुक्त मोर्चा कार्यरत है और यह तानाशाही की रक्षा का हर सम्भव बन्दोबस्त कर रहा है। एक तरफ वे अपने-अपने निहित स्वार्थो की रक्षा करते है दूसरी तरफ श्रीमती गाधी को तानाशाही कमान पर कायम रखे हुए है। मुझे इस सिस्टम के अन्दर से टूट जाने की बहुत कम उम्मीद है। यह अलग बात है कि तानाशाह इनमें से किसी रक्षक आधार-स्तम्भ को खिसकाने की गलती कर बैठे।

(६) कुछ लोग बुद्धिजीवियों से लड़ने की उम्मीद रखते है। बुद्धिजीवी किसी न किसी तरह अपने लेखन, भाषण या चिन्तन से सामाजिक मानस को बनाता (या बिगाड़ता) है। इनमे से कुछ अपवादों को छोड दिया जाए, जैसे वकीलों ने प्रारम्भ मे कोर्ट की लड़ाई लड़ी, कहीं-कही विश्वविद्यालयों में कुछ लोग उठ खड़े हुए और जेल गए, कुछ इक्के-दुक्के लेखकों ने झुकने से इनकार कर दिया, बाकी यह पूरा वर्ग चरित्रतः कायर, सुविधाजीवी और ढोंगी है। इस वर्ग का कोई ठोस योगदान तानाशाही के हटाने मे आज की स्थिति में होने की सम्भावना नहीं है। यहां तक कि जब सेंसरशिप लागू नही हुई थी और समग्र क्रांति के लिए जे० पी० आन्दोलन का प्रथम चरण चल रहा था, तब भी कितने साहित्यकार इसके साथ थे ! बहुत ही कम। आज तो अपनी निष्ठाओं के लिए मूल्य चुकाने का अवसर है। अपनी निष्ठाओं का मूल्य वसूलने वाला वर्ग मूल्य चुकाएगा, इसकी कोई उम्मीद नहीं करनी चाहिए। जो मुट्ठी-भर बगावती दिमाग मूल्य चुका सकते है, चुका रहे हैं, मैं उनकी बात नहीं कर रहा हूं।

बात यह है कि आदर्शहीन कैरियरिस्ट बुद्धिजीवी अस्तित्व के किसी भी छोर पर प्रहार की पहली आशंका पर झुक जाता है। फिर परिवर्तन की सम्भावना जितनी क्षीण होगी, उसका संघर्ष उतना ही तेजहीन होगा,

बल्कि उसका व्यक्तित्व उतना ही पलायनवादी होगा। वह संघर्षहीनता की चरम सीमा पर खड़ा होकर लम्बी-लम्बी सांस ले रहा होगा।

(१०) कुछ लोग आर्थिक दुर्दशा पर नजर रख रहे है। उनका कहना है कि आर्थिक ढांचा कभी न कभी तो अपनी कमजोरियो के कारण नंगा होगा। कब तक नकली आंकड़े दिल बहला सकेंगे। यह स्थिति समाज के हित में है या नहीं, इसमे संघर्ष का कृत्रिम योगदान हो सकता है या कि नही, यह अलग बात है। लेकिन यह स्थिति ज़्यादा से ज़्यादा सीमान्त मदद ही कर सकती है। बल्कि अभाव के समय ज्यादा से ज़्यादा आबादी सरकारी मशीनरी पर आश्रित होती जाएगी। असंतोष नियंत्रित प्रचार-तन्त्र के कारण संक्रामक नहीं हो पाएगा। सत्ता भूखी जनता को एक बड़े हद तक, जो हद सामान्य दिनों की हद से ज्यादा होती है, नियंत्रित कर सकेगी।

फिर मूलत: इस तरह की आशाए भाग्यवादी अवधारणाएं है। संघर्ष मूलत: कर्मवादी अवधारणा पर टिका होना चाहिए। आर्थिक विफलता ज्यादा से ज़्यादा संघर्ष के लिए अनुकूल वातावरण ही बना सकती है। इससे ज़्यादा उम्मीद नहीं करनी चाहिए।

(११) बहुत-से लोग आम जनता से बहुत उम्मीद करते है। अनुमोदनशील और राजकाज-उदासीन समाज से विद्रोह की आशा नही करनी चाहिए। सामान्य दिनों में भी जनता की साझीदारी संघर्षों मे बहुत कम रही है। तानाशाही वातावरण में जनता क्रान्ति करेगी, यह उम्मीद भारतीय जनता से करना उसके बारे मे नासमझी रखना है। फिर आम जनता की आम जिन्दगी मे सरकार ने कोई दखल नहीं दिया है। जनता भुखमरी की हालत मे निराशोन्मत्त हो सकती है। ग्रामीण जनता धार्मिक सवालों पर उत्तेजित हो सकती है और बगावत कर सकती है लेकिन भारत की जनता से लोकतंत्र की समाप्ति या लोकतंत्री मूल्यों के लिए लडने की उम्मीद नही करनी चाहिए। यदि धार्मिक या आर्थिक सवालों पर तानाशाही सौ-दो सौ जगहों पर अन्धाधुन्ध गोलियां चलाए, हजारों लोगों को भून दे तो भी जनता तानाशाही को उखाड़ सकेगी, इसमें मुझे शक है। वह खिलाफ हो जाएगी। वह क्रुद्ध भी हो सकती है। लेकिन यह जनता दिल्ली के लिए कूच नही कर सकती। खून-खराबा नहीं कर सकती। हिंसक बगावत उसके स्वभाव में नही है। नपुंसक क्रोध जमी हुई तानाशाही को उखाड़ने मे क्या योगदान दे सकता है? पूरे इतिहास में भारत की 'आम जनता' ने कभी कोई सफल हिंसक बगावत नहीं की।

फिर अहिंसक जनक्रांति की तो बात ही और है। इसकी प्राथमिक विस्फोटक उत्तेजना २६ जून, १९७५ को समाज के सामने उपस्थित हुई थी। कुल तीन दिन के अन्दर सारी खबरे सारे देश में गांव-गांव तक पहुंच गई थीं। लेकिन समाज उत्तेजित नहीं हुआ। सहम गया। यही हमारे समाज का चरित्र हैं। अच्छा है या बुरा है, है यह। ऐसा लिखकर मैं जन-शक्ति का अपमान नही कर रहा हूं। बल्कि मैं यह मानता हूं कि जब सब कुछ खत्म हो जाता है तो भी आशा की किरण जन-शक्ति का अक्षय भंडार ही रहता है। मैंने सिर्फ यही कहा है कि भारतीय जन समाज का चरित्र मूलतः गैर बगावती है।

लेकिन मैं यह नहीं मानता कि यह कभी भी किसी भी स्थिति में बगावत कर ही नही सकता। अनुकूल अवसरों पर शासन के विरुद्ध उसके क्रोध का विस्फोट हो सकता है। बशर्ते कि उस विस्फोट का मूल्य उसे खून से नहीं चुकाना पड़े।

(१२) ऐसी स्थिति में संघर्ष के नेताओं की लम्बे संघर्ष की बात मेरे दिमाग मे सवालिया निशान खड़ा कर जाती है। संघर्ष जितना ज़्यादा लम्बा होगा, संघर्ष की शक्तिया उतनी ही टूटती जाएंगी,तानाशाही उतनी ही मज़बूत होती जाएगी। कम से कम आज तो यही प्रतीत हो रहा है।

कभी-कभी मुझे आशंका होती है कि क्या नेतृत्व लबे संघर्ष की बात सिर्फ इस आशा से कर रहा है कि समय अपने खुलते रोल में से कभी-कभी कुछ चमत्कारिक घटनाएं पेश करता है? यह निरा भाग्यवाद है। इसपर नजर रखकर चलने वाला संघर्ष नितांत आत्मरक्षक है। आक्रामक बहुत कम है।

लम्बे संघर्ष भी लम्बे हो जाते हैं, उनकी लम्बाई नियोजित नहीं होती। संघर्ष मे निकट भविष्य मे मिलने वाली विजय की संभावना ही उत्प्रेरक होती है। मेरी विनम्र प्रार्थना यह है कि श्रीमती गांधी को ज़्यादा समय तानाशाही को पुख्ता करने के लिए नहीं दिया जाना चाहिए। मुझे लगता है कि 'देखते रहो' और 'प्रतीक्षा करो' की नीति ही चल रही है। यह आत्मघाती है क्योंकि समय मिलने पर तानाशाही अपने-आपमें अन्तर्निर्मित स्थायित्व की किलेबंदी कर लेगी।

(१३) संघर्ष की मशाल जलाए रखना अच्छा है। लेकिन पर्याप्त नहीं है। सगठित करना एक अहम ज़रूरत है लेकिन इसे समझ लिया जाना चाहिए कि यह सिर्फ बुनियाद है। आधार सबसे ज़रूरी है, पर कम से कम

अपने-आपमें पूरा लक्ष्य नहीं होता। समाज को जाग्रत् करना बहुत ठीक है और ज़रूरी है, पर समाज को सुलाने वाली सरकारी गोलियों का व्यापक प्रभाव भी हम गिन लें। भूमिगत साहित्य निकालना, बांटना संघर्ष के लिए बहुत बुनियादी काम है, पर सारी उम्मीदे इसपर केन्द्रित नही की जा सकतीं। ज़्यादा से ज़्यादा यह बड़ी रणनीति का पूरक अंश हो सकता है।

(१४) तानाशाही ने पहले ही हमारी काफी क्षति कर दी है, इसलिए भविष्य की रणनीति मे हमे भागते समय के खिलाफ भी लड़ना पड़ेगा। इन क्षतियों को गिना जा सकता है :

(क) तानाशाही ने जयप्रकाश-आंदोलन और विपक्ष के लोक-समर्थन को एक हद तक साफ कर दिया है। अगर अभी चुनाव हो जाए तो सिर्फ हार्डकोर ही खड़ा रहेगा। सहानुभूति रखने वाले भयाक्रात रहेगे।

(ख) चारसूत्री और बीससूत्री के समर्थन में ढोंगी नगाड़े बज रहे है। समाज-जीवन में ढोंग और मजबूती से बैठ रहा है।

(ग) संजय गांधी और युवा कांग्रेस के रूप में सत्ता का एक नया केद्र खड़ा हो रहा है। यह केद्र राजनीतिक पागलपन की सीमा तक जा सकता है। संघर्ष के लिए यह वरदान है और अभिशाप भी। अगर संजय गांधी और उसकी सेना आततायीपन की सीमा तोड़ता है, तो संघर्ष को बल मिलेगा।

(घ) अर्थ-व्यवस्था डांवाडोल हो गई है। उपलब्धियों के अधिकांश आंकड़े अविश्वसनीय है। आर्थिक जड़ता से निकलने की कोई ईमानदार कोशिश नहीं हो रही है।

(ङ) लोगों को यह अनुभव हो गया है कि कानून का राज नही है। कोई भी कभी भी कितने ही समय के लिए बंदी बनाया जा सकता है। प्रशासनिक अधिकारी अपनी-अपनी जगहों पर 'मिनी किंग' हो गए है।

(च) मानस-प्रक्षालन का सरकारी कार्यक्रम बड़े वैज्ञानिक ढंग से चल रहा है। जवाबी तर्क-सरणी या विचार के सभी रास्ते बंद है। बल्कि सांस्कृतिक जीवन की नाजुक बारीकियों का संपूर्ण तंत्र विघटित हो रहा है, जिसका असर पूरी सभ्यता और संस्कृति पर पड़ता है।

(छ) राजनैतिक नपुंसकता के लिए मैदान खुला पड़ा है। पौरुषवान राजनीति भूमिगत हो गई है। मानवीय मान-मर्दन और अवमूल्यन की दृष्टि से इसका अगणनीय असर पड़ा है। जो लोग सिर्फ रोटी के लिए ज़िंदा नहीं है, उनके लिए यह चिंता का विषय है।

(ज) मब बौने चोटी पर पहुंच जाते हैं तो समाज में हर चीज की ऊचाई घट जाती है। ऐसे समाज में व्यक्तिगत निष्ठा का खासा मोल होता है और ईमानदार निष्पक्षता पर बट्टा लगता है।

इस सबके कारण सामाजिक चेतना को लकवा लग गया है। हृदयहीनता का तापक्रम बढ गया है। यह स्थायी तौर पर हो गया, अभी यह नही कहा जा सकता। लेकिन जो लोग संपूर्ण समाज के सामूहिक मानस के स्वास्थ्य के धरातल पर सोचते है, उन सबके लिए यह गंभीर चिंता का विषय है।

(१५) यह सारा निराशावादी चित्र है। पर यह मात्र कल्पना की उड़ान नहीं, मौजूदा हकीकत है। सच तो यह है कि राजनीतिक वातावरण में आशावादी किरणें आज ओझल हो गई है। लेकिन किसी भी वगावती के लिए छुटकारे का कोई रास्ता नही हो सकता। अगर बलात्कार होने ही वाला है तो अंगों को ढीला छोड़ दो और आनन्द लो, यह हमारा सोच नहीं हो सकता। हम लोग संघर्ष के रास्ते पर चलते-चलते मौत का आलिंगन करना वेहतर समझेगे, बनिस्बत इसके कि अस्तित्व के संकट के सामने घुटने टेक दिए जाएं। और इन सबको बे रोक-टोक चलने दिया जाए। यही आज का हमारा मानस है। और सच तो यह है कि अभी हमने कोई विकट संघर्ष झेला ही नहीं है जैसा कि ऐसे ही संकटों में दुनिया की दूसरी संघर्षकारी कौमों ने बहादुरी से झेला है।

मैंने यह सब हौसला पस्त करने के लिए नहीं लिखा है। मुझे पक्का भरोसा है कि इस विकट निराशा की घड़ी मे भी एक सफल रणनीति बनाई और क्रियान्वित की जा सकती है। मुझे अपने संगठन के दसियों हज़ार कार्यकर्ताओं के अजेय साहस, विकट जुझारू शक्ति और प्रबल पराक्रम पर पूरा भरोसा है। मैं ईमानदारी से अनुभव करता हूं कि इन यथा-स्थितिवादी और तानाशाही शक्तियों को अपनी दृढ़ संकल्पी और समर्पित अल्पसंख्या मात दे सकती है। मुझे वास्तविक आशा है कि आम कार्यकर्त्ताओं में से महान आत्माएं आगे बढ़ सकती है और मानवी शक्ति और बेजोड़ साहस का चमत्कारिक कौशल का प्रदर्शन कर सकती है। इस परिगणना को मानने से मैं साफ इनकार करता हूं कि सब कुछ खो गया है और हमेशा के लिए खो गया है। मैं इस मान्यता का प्रबल विरोधी हूं कि अनुमोदनशील सामूहिक चेतना सबको अपने साथ वहा ले जाती है। मैं इतिहास के उतार-चढ़ाव के समक्ष बिना लड़े समर्पण को कतई तैयार नहीं हूं।

(१६) इस संघर्षवान शक्ति से तानाशाही को उखाड़ फेकने का प्रभावी उपकरण बनाना कठिन हो सकता है, असंभव नहीं। हम अच्छी तरह जानते हैं कि अपने संगठन मे और संगठन के बाहर भी हज़ारों ऐसे लोग हैं जो भयानक से भयानक परिस्थितियों में रंचमात्र भी विचलित नहीं होगे। यह शक्ति कम हो सकती है लेकिन बिलकुल अपर्याप्त हो, ऐसा भी नही है। मानवीय गतिविधियों के पूरे दायरे मे यथास्थिति में होने वाले तमाम परिवर्तन मुट्ठी-भर लोगों ने किए है। सारे आर्थिक विकास की प्रक्रिया को बहुत छोटी अल्प संख्या के लोगों ने चालू की। तमाम बड़ी सभ्यताओं और सस्कृतियों के विकास के मूल में फौलादी इच्छाशक्ति वाले कुछ ही लोग होते हैं। तानाशाह को सारा समाज मिलकर उखाड़ फेकने नही आता। एक छोटे-से वर्ग, जिसमें अजेय दृढ़ता और अडिग दु.साहस हो, जो कठिनाइयों के प्रति घोर अपेक्षा बरतते हों, ऐसे ही लोग सारा सत्ता-समीकरण बदल डालते हैं। सारा इतिहास, सारी उपलब्धियों और महान परिवर्तन बहुसख्या की नहीं. बहुत छोटी अल्पसंख्या की देन है।

इसलिए हम बहरहाल सिर्फ ऐसी अल्पसंख्या की चिंता करें जो देश की तकदीर बदल देने के लिए कोई भी कीमत देने को तैयार हो।

लेकिन बगावती बुद्धिजीवी संघर्ष में बहुत जरूरी तत्त्व है। तमाम महान परिवर्तन अपने जन्मकाल में मौलिक रूप से एक मानसिक विस्फोट होता है। सिद्धांतनिष्ठा होती क्या है सिवा इसके कि किसीका दिमागी ख्याल ठोस तर्क पर और समझ के ऊपर अति कठोर हो जाए। दूसरी तरफ तानाशाही दिमागी वन्ध्याकरण की स्वसंचालित प्रक्रिया होती है। बगावती दिमाग इस भूमि में पैदा होते है। जैसे एटम बम का अविष्कार किसी एक ने किया था। लेकिन उससे आज सारी दुनिया का हर आदमी का दिमाग किसी न किसी हद तक आतंकित रहता है। यही बात महान बौद्धिकों के गैर-वैज्ञानिक आविष्कारों के साथ भी लागू होती है। कौन जाने कब किसी मस्तिष्क में एक चिगारी फूटे और समाज के जीवन का संपूर्ण पथ प्रकाशित हो जाए। जिन चिगारियों से संपूर्ण पथ प्रकाशित न भी हो तो भी उसका परिवर्तन की संपूर्ण प्रक्रिया में महत् योगदान हो सकता है। इसलिए बगावती बुद्धिजीवियों का अपना एक खास महत्त्व है इस संघर्ष में।

(१७) तानाशाही के बारे में हमारी समझ में एक मौलिक त्रुटि है वह यह कि श्रीमती गांधी की तानाशाही अपराजेय है पहली कमज़ोरी इस

तानाशाही की यह है कि इसके साथ कोई आदर्शवाद या सिद्धांतवाद नहीं है। दूसरी कमज़ोरी है तानाशाह के पास शासन करने का वैधानिक औचित्य समाप्त हो गया है। तीसरी कमज़ोरी संजय का उत्थान है। संजय गांधी अवश्य कुछ ऐसी बड़ी गलतियां करेगा जो तानाशाही को ले-देकर डूब सकती है।

●●●